श्री धनमुनि 'प्रथम'

५

वक्तृत्वकला के बीज

५

वक्तृत्व-कला के बीज

श्री धनमुनि "प्रथम"

वक्तृत्वकला के बीज
पांचवाँ भाग

समन्वय प्रकाशन

प्र० सं०

मोतीलाल पारख
ब्रह्मदेवसिंह

प्रकाशक

ज .सुखलाल एण्ड कंपनी
c/o भगवतप्रसाद रणछोड़दास
४४, न्यू क्लोथ मार्केट
अहमदाबाद–२

★

प्रथम आवृति : २०००
बसन्त पंचमी वि० सं० २०२८
जनवरी १९७२

★

मूल्य : पांच रुपये पचास पैसे

संपर्क सूत्र :

संजय साहित्य संगम,
दासबिल्डिग न०–५
बिलोचपुर, आगरा–२

मुद्रक :

रामनारायन मेड़तवाल
श्रीविष्णु प्रिंटिंग प्रेस
राजा की मंडी, आगरा–२

उन जिज्ञासुओं को,
जिनकी उर्वर मनोभूमि में
ये बीज
अंकुरित
पुष्पित
फलित हो,
अपना विराट् रूप प्राप्त कर सकें !

प्राप्तिकेन्द्र

१. **जनसुखलाल एंड कंपनी**
c/o भगवतप्रसाद रणछोड़दास
४४, न्यूक्लोथ मार्केट
अहमदाबाद–२

२. **श्री सम्पतराय बोरड**
c/o मदनचंद सम्पतराय
४०, धानमंडी,
श्री गंगानगर (राजस्थान)

३. **मोतीलाल पारख**
दि अहमदाबाद लक्ष्मी कॉटनमिल्स कं० लि०
पो० बा० नं० ४२
अहमदाबाद–२२

प्राक्कथन

मानव जीवन में वाचा की उपलब्धि एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। हमारे प्राचीन आचार्यों की दृष्टि में वाचा ही सरस्वती का अधिष्ठान है, **वाचा सरस्वती भिषग्**[1]—वाचा ज्ञान की अधिष्ठात्री होने से स्वयं सरस्वती रूप है, और समाज के विकृत आचार-विचार-रूप रोगों को दूर करने के कारण यह कुशल वैद्य भी है।

अन्तर के भावों को एक दूसरे तक पहुँचाने का एक बहुत बड़ा माध्यम वाचा ही है। यदि मानव के पास वाचा न होती तो, उसकी क्या दशा होती ? क्या वह भी मूकपशुओं की तरह भीतर ही भीतर घुटकर समाप्त नहीं हो जाता ? मनुष्य, जो गूंगा होता है, वह अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए कितने हाथ-पैर मारता है, कितना छटपटाता है फिर भी अपना सही आशय कहां समझा पाता है दूसरों को ?

बोलना वाचा का एक गुण है, किंतु बोलना एक अलग चीज है, और वक्ता होना वस्तुतः एक अलग चीज है। बोलने को हर कोई बोलता है, पर वह कोई कला नहीं है, किंतु वक्तृत्व एक कला है। वक्ता साधारण से विषय को भी कितने सुन्दर और मनोहारी रूप से प्रस्तुत करता है कि श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। वक्ता के बोल श्रोता के हृदय में ऐसे उतर जाते हैं कि वह उन्हें जीवन भर नहीं भूलता।

कर्मयोगी श्रीकृष्ण, भगवान्‌महावीर, तथागतबुद्ध, व्यास और भद्रबाहु आदि भारतीय प्रवचन-परम्परा के ऐसे महान् प्रवक्ता थे,

---

१ यजुर्वेद १९।१२

जिनकी वाणी का नाद आज भी हजारों-लाखों लोगों के हृदयों को आप्यायित कर रहा है। महाकाल की तूफानी हवाओं में भी उनकी वाणी की दिव्य ज्योति न बुझी है और न बुझेगी।

हर कोई वाचा का धारक, वाचा का स्वामी नहीं बन सकता। वाचा का स्वामी ही वाग्मी या वक्ता कहलाता है। वक्ता होने के लिए ज्ञान एवं अनुभव का आयाम बहुत ही विस्तृत होना चाहिए। विशाल अध्ययन, मनन-चिंतन एवं अनुभव का परिपाक वाणी को तेजस्वी एवं चिरस्थायी बनाता है। विना अध्ययन एवं विषय की व्यापक जानकारी के भाषण केवल भषण (भोंकना) मात्र रह जाता है, वक्ता कितना ही चीखे-चिल्लाये, उछले-कूदे यदि प्रस्तावित विषय पर उसका सक्षम अधिकार नहीं है, तो वह सभा में हास्यास्पद हो जाता है, उसके व्यक्तित्व की गरिमा लुप्त हो जाती है। इसीलिए बहुत प्राचीनयुग में एक ऋषि ने कहा था—**वक्ता शतसहस्रेषु,** अर्थात् लाखों में कोई एक वक्ता होता है।

शतावधानी मुनि श्री धनराज जी जैनजगत के यशस्वी प्रवक्ता हैं। उनका प्रवचन, वस्तुतः प्रवचन होता है। श्रोताओं को अपने प्रस्तावित विषय पर केन्द्रित एवं मंत्र-मुग्ध कर देना उनका सहज कर्म है। और यह उनका वक्तृत्व—एक बहुत बड़े व्यापक एवं गंभीर अध्ययन पर आधारित है। उनका संस्कृत-प्राकृत आदि प्राचीन भाषाओं का ज्ञान विस्तृत है, साथ ही तलस्पर्शी भी ! मालूम होता है, उन्होंने पांडित्य को केवल छुआ भर नहीं है, किंतु समग्रशक्ति के साथ उसे गहराई से अधिग्रहण किया है। उनकी प्रस्तुत पुस्तक **'वक्तृत्वकला के बीज'** में यह स्पष्ट परिलक्षित होता है।

प्रस्तुत कृति में जैन आगम, बौद्धवाङ्मय, वेदों से लेकर उपनिषद ब्राह्मण, पुराण, स्मृति आदि वैदिक साहित्य तथा लोककथानक, कहावतें, रूपक, ऐतिहासिक घटनाएँ, ज्ञान-विज्ञान की उपयोगी चर्चाएँ—

इसप्रकार शृंखलाबद्ध रूप में संकलित है कि किसी भी विषय पर हम बहुत कुछ विचार-सामग्री प्राप्त कर सकते हैं। सचमुच वक्तृत्व-कला के अगणित बीज इसमें सन्निहित हैं। सूक्तियों का तो एक प्रकार से यह रत्नाकर ही है। अंग्रेजी साहित्य व अन्य धर्मग्रंथों के उद्धरण भी काफी महत्वपूर्ण हैं। कुछ प्रसंग और स्थल तो ऐसे हैं, जो केवल सूक्ति और सुभाषित ही नहीं है, उनमें विषय की तलस्पर्शी गहराई भी है और उसपर से कोई भी अध्येता अपने ज्ञान के आयाम को और अधिक व्यापक बना सकता है। लगता है, जैसे मुनि श्री जी वाङ्मय के रूप में विराट् पुरुष हो गए हैं। जहां पर भी दृष्टि पड़ती है, कोई-न-कोई वचन ऐसा मिल ही जाता है. जो हृदय को छू जाता है और यदि प्रवक्ता प्रसंगतः अपने भाषण में उपयोग करे, तो अवश्य ही श्रोताओं के मस्तक झूम उठेंगे।

प्रश्न हो सकता है—'वक्तृत्वकला के बीज' में मुनि श्री का अपना क्या है ? यह एक संग्रह है और संग्रह केवल पुरानी निधि होती है; परन्तु मैं कहूँगा — कि फूलों की माला का निर्माता माली जब विभिन्न जाति एवं विभिन्न रंगों के मोहक पुष्पों की माला बनाता है तो उसमें उसका अपना क्या है ? बिखरे फूल, फूल हैं, माली नहीं। माला का अपना एक अलग ही विलक्षण सौन्दर्य है। रंग-बिरंगे फूलों का उपयुक्त चुनाव करना और उनका कलात्मक रूप में संयोजन करना—यही तो मालाकार का कर्म है, जो स्वयं में एक विलक्षण एवं विशिष्ट कलाकर्म है। मुनि श्री जी वक्तृत्वकला के बीज में ऐसे ही विलक्षण मालाकार हैं। विषयों का उपयुक्त चयन एवं तत्सम्बन्धित सूक्तियों आदि का संकलन इतना शानदार हुआ है कि इस प्रकार का संकलन अन्यत्र इस रूप में नहीं देखा गया।

एक बात और——श्री चन्दनमुनि जी की संस्कृत-प्राकृत रचनाओं ने मुझे यथावसर काफी प्रभावित किया है। मैं उनकी विद्वत्ता का प्रशंसक रहा हूँ। श्री धनमुनि जी उनके बड़े भाई हैं—जब यह मुझे

ज्ञात हुआ तो मेरे हर्ष की सीमाओं का और भी अधिक विस्तार हो गया । अब मैं कैसे कहूँ कि इन दोनों में कौन बड़ा है और कौन छोटा ? अच्छा यही होगा कि एक को दूसरे से उपमित कर दूँ । उनकी बहुश्रुतता एवं इनकी संग्रह-कुशलता से मेरा मन मुग्ध हो गया है ।

मैं मुनि श्री जी, और उनकी इस महत्वपूर्णकृति का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ । विभिन्न भागों में प्रकाशित होने वाली इस विराट् कृति से प्रवचनकार, लेखक एवं स्वाध्यायप्रेमीजन मुनि श्री के प्रति ऋणी रहेंगे । वे जब भी चाहेंगे, वक्तृत्व के बीज में से उन्हें कुछ मिलेगा ही, वे रिक्तहस्त नहीं रहेंगे ऐसा मेरा विश्वास है ।

प्रवक्तृ-समाज—मुनि श्री जी का एतदर्थ आभारी है और आभारी रहेगा ।

जैन भवन
आश्विन शुक्ला-३
आगरा

—उपाध्याय अमरमुनि

सम्पादकीय

वक्तृत्वगुण एक कला है, और वह बहुत बड़ी साधना की अपेक्षा करता है। आगम का ज्ञान, लोकव्यवहार का ज्ञान, लोकमानस का ज्ञान और समय एवं परिस्थितियों का ज्ञान तथा इन सबके साथ निस्पृहता, निर्भयता, स्वर की मधुरता, ओजस्विता आदि गुणों की साधना एवं विकास से ही वक्तृत्वकला का विकास हो सकता है, और ऐसे वक्ता वस्तुतः हजारों लाखों में कोई एकाध ही मिलते हैं।

तेरापंथ के अधिशास्ता युगप्रधान आचार्य श्रीतुलसी में वक्तृत्वकला के ये विशिष्ट गुण चमत्कारी ढंग से विकसित हुए हैं। उनकी वाणी का जादू श्रोताओं के मन-मस्तिष्क को आन्दोलित कर देता है। भारतवर्ष की सुदीर्घ पदयात्राओं के मध्य लाखों नर-नारियों ने उनकी ओजस्विनी वाणी सुनी है और उसके मधुर प्रभाव को जीवन में अनुभव किया है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक मुनि श्री धनराजजी भी वास्तव में वक्तृत्वकला के महान गुणों के धनी एक कुशल प्रवक्ता संत हैं। वे कवि भी हैं, गायक भी हैं, और तेरापंथ शासन में सर्वप्रथम अवधानकार भी है; इन सबके साथ-साथ बहुत बड़े विद्वान तो हैं ही। उनके प्रवचन जहां भी होते हैं, श्रोताओं की अपार भीड़ उमड़ आती है। आपके विहार करने के बाद भी श्रोता आपकी याद करते रहते हैं।

आपकी भावना है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी वक्तृत्वकला का विकास करें और उसका सदुपयोग करें, अतः जन-समाज के लाभार्थ आपने वक्तृत्व के योग्य विभिन्न सामग्रियों का यह विशाल संग्रह प्रस्तुत किया है।

बहुत समय से जनता की, विद्वानों की और वक्तृत्वकला के अभ्यासियों की माँग थी कि इस दुर्लभ सामग्री का जन-हिताय प्रकाशन किया जाय तो बहुत लोगों को लाभ मिलेगा। जनता की भावना के अनुसार हमने मुनिश्री की इस सामग्री को धारणा प्रारंभ किया। इस कार्य को सम्पन्न करने में श्री डूंगरगढ़, मोमासर, भादरा, हिसार, टोहाना, नरवाना, कैथल, हांसी, भिवानी, तोसाम, ऊमरा, सिसाय, जमालपुर, सिरसा और भटिंडा आदि के विद्यार्थियों एवं युवकों ने अथक परिश्रम किया है। फलस्वरूप लगभग सौ कापियों व १५०० विषयों में यह सामग्री संकलित हुई है। हम इस विशाल संग्रह को विभिन्न भागों में प्रकाशित करने का संकल्प लेकर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

वक्तृत्वकला के वीज का यह पांचवाँ भाग पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। इसके प्रकाशन का समस्त अर्थभार श्री जनसुखलाल एंड कंपनी, अहमदाबाद ने वहन किया है। इस अनुकरणीय उदारता के लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं।

इसके प्रकाशन एवं प्रूफ संशोधन आदि में श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' तथा श्री ब्रह्मदेवसिंह जी आदि का जो हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ है—उसके लिए भी हम हृदय से कृतज्ञता-ज्ञापित करते हैं। आशा है यह पुस्तक जन-जन के लिए, वक्ताओं और लेखकों के लिए एक इनसाईक्लोपीडिया (विश्वकोश) का काम देगी और युग-युग तक इसका लाभ मिलता रहेगा....

●●

आ त्म नि वे द न

'मनुष्य की प्रकृति का बदलना अत्यन्त कठिन है'—यह सूक्ति मेरे लिए सवा सोलह आना ठीक साबित हुई। बचपन में जब मैं कलकत्ता—श्री जैनश्वेताम्बर-तेरापंथी-विद्यालय में पढ़ता था, जहाँ तक याद है, मुझे जलपान के लिए प्रायः प्रति-दिन एक आना मिलता था। प्रकृति में संग्रह करने की भावना अधिक थी, अतः मैं खर्च करके भी उसमें से कुछ न कुछ बचा ही लेता था। इस प्रकार मेरे पास कई रुपये इकट्ठे हो गये थे और मैं उनको एक डिब्बी में रखा करता था।

विक्रम संवत् १९७९ में अचानक माताजी की मृत्यु होने से विरक्त होकर हम (पिता श्री केवलचन्द जी, मैं, छोटी बहन दीपांजी और छोटे भाई चन्दनमल जी) परमकृपालु श्री कालुगणीजी के पास दीक्षित हो गए। यद्यपि दीक्षित होकर रुपयों-पैसो का संग्रह छोड़ दिया, फिर भी संग्रहवृत्ति नहीं छूट सकी। वह धनसंग्रह से हटकर ज्ञानसंग्रह की ओर झुक गई। श्री कालुगणी के चरणों में हम अनेक बालक मुनि आगम-व्याकरण-काव्य-कोष आदि पढ़ रहे थे। लेकिन मेरी प्रकृति इस प्रकार की बन गई थी कि जो भी दोहा-छन्द-श्लोक-ढाल-व्याख्यान-कथा आदि सुनने या पढ़ने में अच्छे लगते, मैं तत्काल उन्हें लिख लेता या संसार-पक्षीय पिताजी से लिखवा लेता। फलस्वरूप उपरोक्त सामग्री का काफी अच्छा संग्रह हो गया। उसे देखकर अनेक मुनि विनोद की भाषा में कह दिया करते थे कि "धन्न् तो न्यारा में जाने की (अलग विहार करने की) तैयारी कर रहा है।" उत्तर में मैं कहा करता—"क्या आप गारंटी दे सकते हैं कि इतने (१० या १५) साल तक आचार्य श्री हमें अपने साथ ही रखेंगे ? क्या पता, कल ही अलग विहार करने

का फरमान करदें। व्याख्यानादि का संग्रह होगा तो धर्मोपदेश या धर्म-प्रचार करने में सहायता मिलेगी।"

समय-समय पर उपरोक्त साथी मुनियों का हास्य-विनोद चल ही रहा था कि वि० सं० १९८६ में श्री कालुगणी ने अचानक ही श्रीकेवलमुनि को अग्रगण्य बनाकर रतननगर (थेलासर) चातुर्मास करने का हुक्म दे दिया। हम दोनों भाई (मैं और चन्दन मुनि) उनके साथ थे। व्याख्यान आदि का किया हुआ संग्रह उस चातुर्मास में बहुत काम आया एवं भविष्य के लिए उत्तमोत्तम ज्ञानसंग्रह करने की भावना बलवती बनी। हम कुछ वर्ष तक पिताजी के साथ विचरते रहे। उनके दिवंगत होने के पश्चात् दोनों भाई अग्रगण्य के रूप में पृथक्-पृथक् विहार करने लगे।

विशेष प्रेरणा—एक बार मैंने 'वक्ता बनो' नाम की पुस्तक पढ़ी। उसमें वक्ता बनने के विषय में खासी अच्छी बातें बताई हुई थीं। पढ़ते-पढ़ते यह पंक्ति दृष्टिगोचर हुई कि "कोई भी ग्रन्थ या शास्त्र पढ़ो, उसमें जो भी बात अपने काम की लगे, उसे तत्काल लिख लो।" इस पंक्ति ने मेरी संग्रह करने की प्रवृत्ति को पूर्वापेक्षया अत्यधिक तेज बना दिया। मुझे कोई भी नई युक्ति, सूक्ति या कहानी मिलती, उसे तुरंत लिख लेता। फिर जो उनमें विशेष उपयोगी लगती, उसे औपदेशिक भजन, स्तवन या व्याख्यान के रूप में गूंथ लेता। इस प्रवृत्ति के कारण मेरे पास अनेक भाषाओं में निबद्ध स्वरचित सैकड़ों भजन और सैकड़ों व्याख्यान इकट्ठे हो गए। फिर जैन-कथा साहित्य एवं तात्त्विकसाहित्य की ओर रुचि बढ़ी। फलस्वरूप दोनों ही विषयों पर अनेक पुस्तकों की रचना हुई। उनमें छोटी-बड़ी लगभग २६ पुस्तकें तो प्रकाश में आ चुकी, शेष ३०-३२ अप्रकाशित ही हैं।

एक बार संगृहीत-सामग्री के विषय में यह सुझाव आया कि यदि प्राचीन संग्रह को व्यवस्थित करके एक ग्रन्थ का रूप दे दिया जाए, तो यह उत्कृष्ट उपयोगी चीज बन जाए। मैंने इस सुझाव को स्वीकार किया और अपने प्राचीन संग्रह को व्यवस्थित करने में जुट गया। लेकिन पुराने संग्रह में कौन-सी सूक्ति, श्लोक या हेतु किस ग्रन्थ या शास्त्र के है अथवा किस कवि, वक्ता या लेखक के हैं—यह प्रायः लिखा हुआ नहीं था। अतः ग्रन्थों या शास्त्रों आदि की साक्षियां प्राप्त करने के लिए—इन आठ-नौ वर्षों में वेद, उपनिषद्, इतिहास, स्मृति, पुराण, कुरान, बाइबिल, जैनशास्त्र, बौद्धशास्त्र, नीतिशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, शकुनशास्त्र, दर्शन-शास्त्र, संगीत-शास्त्र तथा अनेक हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती मराठी एवं पंजाबी सूक्तिसंग्रहों का ध्यानपूर्वक यथासम्भव अध्ययन किया। उससे काफी नया संग्रह बना और प्राचीन संग्रह को साक्षी सम्पन्न बनाने में सहायता मिली। फिर भी खेद है कि अनेक सूक्तियाँ एवं श्लोक आदि बिना साक्षी के ही रह गए। प्रयत्न करने पर भी 'उनकी साक्षियां नहीं मिल सकीं। जिन-जिन की साक्षियां मिली हैं, उन-उनके आगे वे लगा दी गई हैं। जिनकी साक्षियां उपलब्ध नहीं हो सकीं, उनके आगे स्थान रिक्त छोड़ दिया गया है। कई जगह प्राचीन संग्रह के आधार पर केवल महाभारत, वाल्मीकि रामायण, योग-शास्त्र आदि महान् ग्रन्थों के नाममात्र लगाए हैं; अस्तु!

इस ग्रंथ के संकलन में किसी भी मत या सम्प्रदाय विशेष का खण्डन-मण्डन करने की दृष्टि नहीं है, केवल यही दिखलाने का प्रयत्न किया गया है कि कौन क्या कहता है या क्या मानता है। यद्यपि विश्व के विभिन्न देशनिवासी मनीषियों के मतों का संकलन होने से ग्रन्थ में भाषा की एकरूपता नहीं रह

सकी है। कहीं प्राकृत-संस्कृत, पारसी, उर्दू एवं अंग्रेजी भाषा है तो कहीं हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, पंजाबी और बंगाली भाषा के प्रयोग हैं, फिर भी कठिन भाषाओं के श्लोक, वाक्य आदि का अर्थ हिन्दी भाषा में कर दिया गया है। दूसरे प्रकार से भी इस ग्रन्थ में भाषा की विविधता है। कई ग्रन्थों, कवियों, लेखकों एवं विचारकों ने अपने सिद्धान्त निरवद्यभाषा में व्यक्त किए हैं तो कई साफ-साफ सावद्यभाषा में ही बोले हैं। मुझे जिस रूप में जिसके जो विचार मिले हैं, उन्हें मैंने उसी रूप में अंकित किया है, लेकिन मेरा अनुमोदन केवल निर्वद्य-सिद्धान्तों के साथ है।

ग्रन्थ की सर्वोपयोगिता—इस ग्रन्थ में उच्चस्तरीय विद्वानों के लिए जहाँ जैन-बौद्ध आगमों के गम्भीर पद्य हैं, वेदों, उपनिषदों के अद्भुत मंत्र हैं, स्मृति एवं नीति के हृदयग्राही श्लोक हैं वहाँ सर्वसाधारण के लिए सीधी-सादी भाषा के दोहे, छन्द, सूक्तियाँ, लोकोक्तियाँ, हेतु, दृष्टान्त एवं छोटी-छोटी कहानियाँ भी हैं। अतः यह ग्रन्थ निःसंदेह हर एक व्यक्ति के लिए उपयोगी सिद्ध होगा—ऐसी मेरी मान्यता है। वक्ता, कवि और लेखक इस ग्रन्थ से विशेष लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि इसके सहारे वे अपने भाषण, काव्य और लेख को ठोस, सजीव, एवं हृदयग्राही बना सकेंगे एवं अद्भुत विचारों का विचित्र चित्रण करके उनमें निखार ला सकेंगे, अस्तु!

ग्रन्थ का नामकरण—इस ग्रन्थ का नाम 'वक्तृत्वकला के बीज' रखा गया है। वक्तृत्वकला की उपज के निमित्त यहाँ केवल बीज इकट्ठे किए गए हैं। बीजों का वपन किसलिए, कैसे, कब और कहां करना—यह वप्ता (बीच बोनेवालों) की भावना एवं बुद्धिमत्ता पर निर्भर करेगा। फिर भी मेरी मनोकामना तो यही है कि वप्ता परमात्मपदप्राप्ति रूप फलों

के लिए शास्त्रोक्तविधि से अच्छे अवसर पर उत्तम क्षेत्रों में इन बीजों का वपन करेंगे । अस्तु !

यहाँ मैं इस बात को भी कहे बिना नहीं रह सकता कि जिन ग्रन्थों, लेखों, समाचार पत्रों एवं व्यक्तियों से इस ग्रन्थ के संकलन में सहयोग मिला है—वे सभी सहायक रूप से मेरे लिए चिरस्मरणीय रहेंगे ।

यह ग्रंथ कई भागों में विभक्त है एवं उनमें सैकड़ों विषयों का संकलन है । उक्त संग्रह बालोतरा मर्यादा-महोत्सव के समय मैंने आचार्य श्रीतुलसी को भेंट किया । उन्होंने देखकर बहुत प्रसन्नता व्यक्त की एवं फरमाया कि इसमें छोटी-छोटी कहानियाँ एवं घटनाएँ भी लगा देनी चाहिये ताकि विशेष उपयोगी बन जाए । आचार्य श्री का आदेश स्वीकार करके इसे संक्षिप्त कहानियाँ तथा घटनाओं से सम्पन्न किया गया ।

मुनिश्री चन्दनमलजी, डूंगरमलजी, नथमलजी, नगराज जी, मधुकरजी, राकेशजी, रूपचन्दजी आदि अनेक साधु एवं साध्वियों ने भी इस ग्रन्थ को विशेष उपयोगी माना । बीदासर-महोत्सव पर कई संतों का यह अनुरोध रहा कि इस संग्रह को अवश्य धरा दिया जाए ।

सर्व प्रथम वि० सं० २०२३ में श्री डूँगरगढ़ के श्रावकों ने इसे धारणा शुरू किया । फिर थली, हरियाणा एवं पंजाब के अनेक ग्रामों-नगरों के उत्साही युवकों ने तीन वर्षों के अथक-परिश्रम से धारकर इसे प्रकाशन के योग्य बनाया ।

मुझे दृढ़विश्वास है कि पाठकगण इसके अध्ययन, चिन्तन एवं मनन से अपने बुद्धि-वैभव को क्रमशः बढ़ाते जायेंगे—

वि० सं० २०२७ मृगसर बदी ४
मंगलवार, रामामंडी, (पंजाब)

—**धनमुनि 'प्रथम'**

अनुक्रमणिका

पहला कोष्ठक पृष्ठ १ से ६६

१ श्रावक (श्रावक की पूर्व भूमिका), २ श्रावक का स्वरूप, ३ श्रावक के गुण, ४ श्रावक धर्म, ५ श्रावक के विषय में विविध, ६ सामायिक, ७ सामायिक के विषय में विविध, ८ सामायिक का प्रभाव, ९ नाम की सामायिक, १० पौषध, ११ तप, १२ तप से लाभ, १३ तप कैसे और किसलिए, १४ तप के भेद, १५ अनशन, १६ उपवास, १७ प्रायश्चित्त, १८ प्रायश्चित्त के भेद, १९ आलोचना, २० आलोचना के विषय में विविध, २१ आलोचना के दोष, २२ आवश्यक, २३ वैयावृत्य ।

दूसरा कोष्ठक पृष्ठ ६७ से १३८

१ ध्यान, २ ध्यान से लाभ, ३ ध्याता (ध्यान करने वाला), ४ स्वाध्यायध्यान की प्रेरणा, ५ समाधि, ६ आहार, ७ भोजन, ८ भोजन की विधि, ९ भोजन कैसा हो ?, १० भोजन के भेद, ११ भोजन में आवश्यक तत्व, १२ रासायनिक तुलनात्मक चार्ट, १३ भोजन का ध्येय, १४, भोजन की शुद्धि, १५ भोजन का समय, १६ भोजन के समय दान, १७ भोजन के बाद, १८ भोजन की मात्रा, १९ मित भोजन, २० अति भोजन, २१ अधिक खाने वाले आदमी, २२ राक्षसी खुराकवाले व्यक्ति, २३ मुफ्त का खाने वाले, २४ रात्रिभोजन निषेध, २५ रात्रिभोजन से हानि, २६ रात्रि भोजन के त्याग से लाभ, २७ भूख, २८ भूख में स्वाद, २९ भूखा, ३० भूखा क्या नहीं करता, ३१ पेट, ३२ पानी ।

तीसरा कोष्ठक पृष्ठ १४२ से २०३

१ मोक्ष (मुक्ति), २ मोक्ष की परिभाषाएं, ३ मोक्ष-स्थान, ४ मोक्ष-मार्ग, ५ मोक्ष के साधन, ६ मोक्षगामी कौन, ७ मुक्त आत्मा, ८ सिद्ध भगवान, ९ मुक्ति के सुख, १० संसार, ११ संसार का स्वरूप, १२ संसार के भेद, १३ दुःखरूप संसार, १४ सबको दुःख, १५ सुख-दुःखमय संसार, १६ गतानुगतिक संसार, १७ परिवर्तनशील संसार, १८ संसार का पागलपन, १९ संसार का स्वभाव, २० दृष्टि के समान सृष्टि, २१ संसार की उपमाएं, २२ दुनियां की ताकत, २३ जगत को वश करने के उपाय, २४ संसार की विशालता, २५ नरक संसार, २६ नरक के दुःख, २७ नरक में जाने के कारण, २८ नरकगामी कौन ? २९ देव संसार, ३० दैविक चमत्कार की विचित्र बातें ।

चौथा कोष्ठक पृष्ठ २१७ से ३२३

१ तिर्यञ्च संसार, २ आश्चर्यकारी तिर्यञ्च, ३ दृश्यमान विश्व

में पशु-पक्षी, ४ मनुष्य संसार, ५ मनुष्य का स्वभाव, ६ मनुष्य का कर्तव्य, ७ मनुष्य के लिए शिक्षाएँ, ८ मनुष्य का महत्व, ९ मनुष्य की दस अवस्थाएँ, १० मनुष्य के प्रकार, ११ मनुष्य जन्म की प्राप्ति १२ मनुष्य जन्म की श्रेष्ठता, १३ मनुष्य जन्म की दुर्लभता, १४ दुर्लभ मनुष्य जन्म को हारो मत, १५ मानवता, १६ आश्चर्यकारी मनुष्य, १७ आश्चर्यकारी मनुष्यणियां, १८ मनुष्य के विषय में ज्ञातव्य बातें, १९ मनुष्य लोक, २० वैज्ञानिकों के मतानुसार पृथ्वी आदि का जन्मकाल, २१ दृश्यमान जगत की आबादी, २२ भारत की कतिपय विशेष ज्ञातव्य बाते ।

चारों कोष्ठकों में कुल १०७ विषय तथा दस भागों में लगभग १५०० विषय हैं ।

पाँचवां भाग

वक्तृत्वकला के बीज

पहला कोष्ठक

१ श्रावक

श्रावक की पूर्वभूमिका—

१. न्यायसम्पन्नविभवः शिष्टाचार - प्रशंसकः ।
कुलशीलसमैः सार्द्धं, कृतोद्वाहोन्यगोत्रजैः ॥४७॥
पापभीरुः प्रसिद्धं च, देशाचारं समाचरन् ।
अवर्णवादी न क्वापि, राजादिषु विशेषतः ॥४८॥
अनतिव्यक्तगुप्ते च, स्थाने सुप्रातिबेश्मिके ।
अनेकनिर्गमद्वार- विवर्जितनिकेतनः ॥४९॥
कृतसङ्गः सदाचारै-र्मातापित्रोश्च पूजकः ।
त्यजन्नुपप्लुतं स्थान-मप्रवृत्तश्च गर्हिते ॥५०॥
व्ययमायोचितं कुर्वन्, वेषं वित्तानुसारतः ।
अष्टभिर्धीगुणैर्युक्तः, शृण्वानो धर्ममन्वहम् ॥५१॥
अजीर्णे भोजनत्यागी, काले भोक्ता च सात्म्यतः ।
अन्योन्याऽप्रतिबन्धेन, त्रिवर्गमपि साधयन् ॥५२॥
यथावदतिथौ साधौ, दीने च प्रतिपत्तिकृत् ।
सदाऽनभिनिविष्टश्च, पक्षपाती गुणेषु च ॥५३॥
अदेश कालयोश्चर्यां, त्यजन् जानन् बलाबलम् ।
वृत्तस्थज्ञानवृद्धानां, पूजकः पोष्यपोषकः ॥५४॥

दीर्घदर्शी विशेषज्ञः, कृतज्ञो लोकवल्लभः।
सलज्जः सदयः सौम्यः, परोपकृतिकर्मठः ॥५५॥
अन्तरङ्गारिषड्वर्ग - परिहार - परायणः।
वशीकृतेन्द्रियग्रामो, गृहिधर्माय कल्पते ॥५६॥

—योगशास्त्र १

गृहस्थधर्म को पालन करने का पात्र अर्थात् श्रावक वह होता है, जिसमें निम्नलिखित विशेषताएं हों—

(१) न्याय-नीति से धन उपार्जन करनेवाला हो।

(२) शिष्टपुरुषों के आचार की प्रशंसा करनेवाला हो।

(३) अपने कुल और शील में समान भिन्न गोत्रवालों के साथ विवाह-सम्बन्ध करनेवाला हो।

(४) पापों से डरनेवाला हो।

(५) प्रसिद्ध देशाचार का पालन करे।

(६) किसी की और विशेषरूप से राजा आदि की निन्दा न करे।

(७) ऐसे स्थान पर घर बनाए, जो न एकदम खुला हो और न एकदम गुप्त ही हो।

(८) घर में बाहर निकलने के द्वार अनेक न हों।

(९) सदाचारी पुरुषों की संगति करता हो।

(१०) माता-पिता की सेवा-भक्ति करे।

(११) रगड़े-झगड़े और बखेड़े पैदा करनेवाली जगह से दूर रहे, अर्थात् चित्त में क्षोभ उत्पन्न करनेवाले स्थान में न रहे।

(१२) किसी भी निन्दनीय काम में प्रवृत्ति न करे।

(१३) आय के अनुसार ही व्यय करे।

(१४) अपनी आर्थिकस्थिति के अनुसार वस्त्र पहने।

(१५) बुद्धि के आठ गुणों से युक्त होकर प्रतिदिन धर्म-श्रवण करे।

(१६) अजीर्ण होने पर भोजन न करे।

(१७) नियत समय पर सन्तोष के साथ भोजन करे।

(१८) धर्म के साथ अर्थ-पुरुषार्थ, काम-पुरुषार्थ और मोक्ष-पुरुषार्थ का इस प्रकार सेवन करे कि कोई किसी का बाधक न हो।

(१९) अतिथि, साधु और दीन-असहायजनों का यथायोग्य सत्कार करे।

(२०) कभी दुराग्रह के वशीभूत न हो।

(२१) गुणों का पक्षपाती हो—जहाँ कहीं गुण दिखाई दे, उन्हें ग्रहण करे और उनकी प्रशंसा करे।

(२२) देश और काल के प्रतिकूल आचरण न करे।

(२३) अपनी शक्ति और अशक्ति को समझे। अपने सामर्थ्य का विचार करके ही किसी काम में हाथ डाले, सामर्थ्य न होने पर हाथ न डाले।

(२४) सदाचारी पुरुषों की तथा अपने से अधिक ज्ञानवान् पुरुषों की विनय-भक्ति करे।

(२५) जिनके पालन-पोषण करने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर हो, उनका पालन-पोषण करे।

(२६) दीर्घदर्शी हो अर्थात् आगे-पीछे का विचार करके कार्य करे।

(२७) अपने हित-अहित को समझे, भलाई-बुराई को समझे।

(२८) लोकप्रिय हो अर्थात् अपने सदाचार एवं सेवा-कार्य के द्वारा जनता का प्रेम सम्पादित करे।

(२९) कृतज्ञ हो अर्थात् अपने प्रति किये हुए उपकार को नम्रता-पूर्वक स्वीकार करे।

(३०) लज्जाशील हो, अर्थात् अनुचित कार्य करने में लज्जा का अनुभव करे।

(३१) दयावान् हो।

(३२) सौम्य हो—चेहरे पर शान्ति और प्रसन्नता झलकती हो।

(३३) परोपकार करने में उद्यत रहे। दूसरों की सेवा करने का अवसर आने पर पीछे न हटे।

(३४) काम-क्रोधादि आन्तरिक छह शत्रुओं को त्यागने में उद्यत हो।

(३५) इन्द्रियों को अपने वश में रखे।[1]

---

१. जैसे बीज बोने से पहले क्षेत्र-शुद्धि की जाती है। ऐसा न किया जाए तो यथेष्ट फल की प्राप्ति नहीं होती तथा दीवार खड़ी करने से पहले नींव मजबूत कर ली जाती है। नींव मजबूत न की जाय तो दीवार के किसी भी समय गिरजाने का खतरा रहता है। इसी प्रकार गृहस्थधर्म-श्रावकव्रत को अंगीकार करने से पहले आवश्यक जीवन-शुद्धि कर लेना उचित है। यहाँ जो बातें बतलाई गई हैं, उन्हें गृहस्थ-धर्म की नींव या आधार-भूमि समझना चाहिए। इस आधार-भूमि पर गृहस्थधर्म का जो भव्यप्रासाद खड़ा होता है, वह स्थायी होता है। उसके गिरने का भय नहीं रहता।

इन्हें मार्गानुसारी के ३५ गुण कहते हैं। इनमें कई गुण ऐसे हैं, जो केवल लौकिकजीवन से सम्बन्ध रखते हैं। उन्हें गृहस्थ-धर्म का आधार बतलाने का अर्थ यह है कि वास्तव में जीवन एक

अखण्डवस्तु है। अतः लोक-व्यवहार में और धर्म के क्षेत्र में उसका विकास एक साथ होता है। जिसका व्यावहारिकजीवन पतित और गया-बीता होगा, उसका धार्मिकजीवन उच्चश्रेणी का नहीं हो सकता। अतः व्रतमय जीवनयापन करने के लिए व्यावहारिकजीवन को उच्च बनाना परमावश्यक है। जब व्यवहार में पवित्रता आती है, तभी जीवन धर्म-साधना के योग्य बन पाता है।

—योगशास्त्रकार श्री हेमचन्द्राचार्य के मन्तव्य से

२ श्रावक का स्वरूप

१. श्रद्धालुतां श्रातिपदार्थचिन्तनाद्,
धनानि पात्रेषु वपत्यनारतम् ।
किरत्यपुण्यानि सुसाधुसेवना-
-दतोपि तं श्रावकमाहुरुत्तमा : ॥

—श्राद्धविधि, पृष्ठ ७२, श्लोक ३

श्रा—वह तत्त्वार्थचिन्तन द्वारा श्रद्धालुता को सुदृढ़ करता है ।
व—निरन्तर सत्पात्रों में धनरूप बीज बोता है ।
क—शुद्धसाधु की सेवा करके पापधूलि को दूर फैंकता रहता है अतः उसे उत्तमपुरुषों ने श्रावक कहा है ।

२. **श्रा**-श्रद्धावान हो, **व**-विवकी हो, **क**-क्रियावान हो, वह श्रावक है ।

—घासीरामजी स्वामी

३. उपासन्ते सेवन्ते साधून्, इति उपासकाः श्रावकाः ।

—उत्तराध्ययन २ टीका

साधुओं की उपासना-सेवा करते हैं अतः श्रावक उपासक कहलाते हैं ।

४. श्रमणानुपास्ते इति श्रमणोपासक : ।

—उपासकदशा १ टीका

श्रमणों-साधुओं की उपासना करने से श्रावक श्रमणोपासक कहलाते हैं।

५. अपि दिव्वेसु कामेसु, रतिं सो नाधिगच्छति।
तिण्हक्खयरति होंति, सम्मा स बुद्धसावको॥

—धम्मपद १६७

दिव्य काम-भोगों में जिसे रति नहीं होती एवं तृष्णा के क्षय होने से सुख होता है, वही बुद्ध का सच्चा श्रावक है।

६. सागारा अनगारा च, उभो अञ्ञोञ्ञ निस्सिता।
आराधयन्ति सद्धम्मं, योगक्खेमं अनुत्तरं॥

—इतिवुत्तक ४।८

गृहस्थ और प्रव्रजित (साधु) दोनों ही एक-दूसरे के सहयोग से कल्याणकारी सर्वोत्तम सद्धर्म का पालन करते हैं।

३ श्रावक के गुण

१. कयवयकम्मो तह सीलवं, गुणवं च उज्जुववहारी ।
गुरु सुस्सूसो पवयण-कुसलो खलु सावगो भावे ।।

—धर्मरत्न प्रकरण ३३

(१) जो व्रतों का अनुष्ठान करनेवाला है, शीलवान है, (२) स्वाध्याय-तप-विनय आदि गुणयुक्त है, (३) सरल व्यवहार करनेवाला है, (४) सद्गुरु की सेवा करनेवाला है, (५) प्रवचनकुशल है, वह 'भावश्रावक' है ।

शील का स्वरूप इस प्रकार है—

(१) धार्मिकजनों युक्त स्थान में रहना,

(२) आवश्यक कार्य के बिना दूसरे के घर न जाना,

(३) भड़कीली पोशाक नहीं पहनना,

(४) विकार पैदा करनेवाले वचन न बोलना,

(५) द्यूत आदि न खेलना,

(६) मधुरनीति से कार्यसिद्धि करना ।

इन छः शीलों से युक्त श्रावक 'शीलवान' होता है।

२. से जहानामए समणोवासगा भवंति । अभिगय-जीवाजीवा, उवलद्ध-पुण्ण-पावा, आसव-संवर-वेयणा -णिज्जरा-किरिया-हिगरण-बंध-मोक्ख-कुसला, असहेज्ज-देवासुर-नाग- सुवण्ण-जक्ख-रक्खस-किन्नर किंपुरिस-गरुल-गंधव्व-महोरगाईहिं देव-गणेहिं निग्गन्थाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जा, इण-

मेव निग्गंथपावयणे निस्संकिया णिक्कंखिया निव्विति-गिच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा अट्ठि-मिज्जपेमाणुरागरत्ता—"अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे-- ।" उसिय-फलिहा, अवंगुय-दुवारा, अचियत्तंतेउर-परघर-पवेसा, चाउद्दसट्ठ-मुद्दिट्ठ-पुण्णिमासिणीसु पडिपुन्नं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणा समणे निग्गंथे फासु-एसणिज्जेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं वत्थ-पडिग्गह-कम्बल-पायपुच्छणेणं ओसह-भेसज्जेणं पीढ-फलग-सेज्जा-संथारएणं पडिलाभेमाणा, बहूहिं सील-व्वय-गुण-वरेमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरंति । ते णं एयारूवेणं विहारेणं बहूइं वासाइं समणोवासग-परियागं पाउणंति; पाउणित्ता आवाहंसि, उप्पन्नंसि वा अणुप्पन्नंसि वा बहूइं भत्ताइं अणसणाए पच्चक्खायंति, बहूइं भत्ताइं अणसणाए पच्चक्खाएत्ता, बहूइ भत्ताइं अणसणाए छेदेंति, बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेइत्ता आलोइय-पडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नयेरसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तं जहा—महड्ढिएसु महज्जुइएसु जावं महासुक्खेसु ।

—सूत्रकृतांग श्रु० २।२।२४

जैसे कि कई श्रमणोपासक होते हैं। वे जीव-अजीव के ज्ञाता, पुण्य-पाप के रहस्य के जाननेवाले, आश्रव, संवर, वेदना, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बंध और मोक्ष के ज्ञान में कुशल, किसी की सहायता से रहित, देव, असुर, किन्नर, यक्ष आदि देवगणों के

द्वारा निर्ग्रन्थप्रवचन से हटने के लिए बाध्य किये जाने पर, निर्ग्रन्थप्रवचन में शङ्का, काङ्क्षा, विचिकित्सा से रहित, अर्थ-आशय को पाकर, ग्रहणकर, पूछकर निश्चय करनेवाले, जानने वाले, वे अस्थि-मज्जा में निर्ग्रन्थ-प्रवचन के प्रेम से रंगे हुए, उनका कहना हैं कि–"आयुष्मन् ! यह निर्ग्रन्थप्रवचन ही अर्थ है, परमार्थ है, इसके सिवा शेष व्यर्थ है ।" उनके गृह-द्वारों की अर्गला खुली रहती है अर्थात् साधुओं के लिए उनके द्वार खुले रहते हैं। वे दूसरे के अंतःपुर या घर में प्रवेश करने की लालसा नहीं रखते। वे चउदस, आठम, अमावस और पूनम के दिन प्रतिपूर्ण पौषध का सम्यक् पालन करते हैं । श्रमण-निर्ग्रन्थ को निरवद्य, एषणीय खान-पान, मेवा-मुखवास, वस्त्र पात्र, दवाई, पाट-पाटिए आदि देते हैं और बहुत से शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, प्रत्याख्यानव्रत, पौषध-उपवास आदि ग्रहण किए हुए तप कर्मों के द्वारा आत्मा को भावित करते रहते हैं। इस प्रकार बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक-अवस्था का पालन करके, रोगादि बाधायें उत्पन्न होने या न होने पर, अनशन करके और आलोचना प्रतिक्रमण करके, शांति से मरकर देवलोक में महर्द्धिक, महा द्युतिवाले एवं महासुखी देवता होते हैं।

३. धम्मरयणस्सजोगो, अक्खुद्दो रूववं पगइसोम्मो ।
लोयप्पियो अक्कूरो, भीरु असठो सुदक्खिन्नो ।
लज्जालुओ दयालु, मज्झत्थो सोम्मदिट्ठी गुणरागी ।
सक्कह सपक्खजुत्तो, सुदीहदंसी विसेसन्नू ।
बुड्ढाणुगो विणीओ, कयन्नुओ परहिअत्थकारी य ।
तह चेव लद्धलक्खो, एगवीसगुणो हवइ सड्ढो ।

—प्रवचन सारोद्धार २३९ गाथा १३५६ से १३५८

सर्वज्ञभाषित धर्म के योग्य श्रावक के २१ गुण कहे हैं। यथा-

१ अक्षुद्र, २ रूपवान्, ३ प्रकृतिसौम्य, ४ लोकप्रिय, ५ अक्रूर ६ पापभीरु, ७ अशठ (छल नहीं करनेवाला), ८ सदाक्षिण्य (धर्मकार्य में दूसरों की सहायता करनेवाला), ९ लज्जावान, १० दयालु, ११ रागद्वेषरहित (मध्यस्थभाव में रहनेवाला), १२ सौम्यदृष्टिवाला, १३ गुणरागी, १४ सत्यकथन में रुचि रखनेवाले - धार्मिकपरिवारयुक्त, १५ सुदीर्घदर्शी १६ विशेषज्ञ, १७ वृद्ध महापुरुषों के पीछे चलनेवाला, १८विनीत, १९ कृतज्ञ (किए हुए उपकार को समझनेवाला), २० परहित करनेवाला, २१ लब्धलक्ष्य (जिसे लक्ष्य की प्राप्ति प्रायः हो गई हो।)

१. पंचे व अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं च हुंति तिन्नेव।
सिक्खावयाइं चउरो, सावगधम्मो दुवालसहा।

—श्रावकधर्म प्रज्ञप्ति ६

पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रत—इस प्रकार 'श्रावकधर्म' बारह प्रकार का है।

२. अगारि सामाइयंगाइं, सड्ढी काएण फासए।
पोसहं दुहओ पक्खं, एगरायं ण हावए।।

—उत्तराध्ययन ५।२३

श्रद्धालु-श्रावक को निःशङ्कित आदि सामायिक के आठों अंगों का पालन करना चाहिए। दोनों पक्षों में अमावस्या-पूर्णिमा को पोषध करना चाहिए, कदाचित् दो न हो सकें तो एक तो अवश्य करना ही चाहिए।

श्रावक के प्रकार—

१. उवासगो दुविहो, पण्णत्ते, तं जहा—वती, अवती वा।

—निशीथ उ० ११ चूर्णि

उपासक-श्रावक दो प्रकार के होते हैं—
व्रती, और अव्रती—(सम्यग्दृष्टि।)

४. नामादि चउभेओ, सड्ढो भावेण इत्थ अहिगारो,
तिविहो य भावसड्ढो, दंसण-वय-उत्तरगुणेहिं।

—श्राद्धविधि गाथा ४

१ नामश्रावक, २ स्थापनाश्रावक, ३ द्रव्यश्रावक, ४ भावश्रावक, इस प्रकार श्रावक के चार भेद हैं। यहां भावश्रावक का अधिकार है।

भाव श्रावक के तीन प्रकार—

१ दर्शनश्रावक–कृष्ण-श्रेणिक आदिवत् अव्रतीसम्यग्दृष्टि,
२ व्रती श्रावक–पाँच अणुव्रतधारी,
३ उत्तरगुणाश्रावक–सम्पूर्ण बारहव्रत धारण करनेवाला।

५. चवदै चूक्यो बारह भूल्यो, नहीं जाणै छः काया का नाम।
गाँव ढ़ंढ़ेरो फेरियो, श्रावक म्हारो नाम!

–राजस्थानी दोहा

६. चतारि समणोवासगा पण्णत्ता, तं जहा–अम्मापिइसमाणे, भाइसमाणे, मित्तसमाणे, सवत्तिसमाणे।

—स्थानाङ्ग ४।३।३२१

चार प्रकार के श्रावक कहे हैं—

१ माता-पितासमान–एकान्त में हितशिक्षा देकर साधुओं को सजग करनेवाले।

२ भाईसमान–साधुओं को प्रमादी देखकर चाहे ऊपर से क्रोध भी करे, किन्तु हृदय में हित की इच्छा करनेवाले।

३ मित्रसमान–साधुओं के दोषों की उपेक्षा करके केवल गुण को लेनेवाले।

४ सपत्नीसमान–साधुओं के छिद्र देखनेवाले।

७. चतारि समणोवासगा पण्णत्ता, तं जहा–अद्दागसमाणे, पडागसमाणे, खाणुसमाणे, खरकंटसमाणे।

–स्थानाङ्ग ४।३।३२१

श्रावक चार प्रकार के कहे है—

१ दर्पण-समान—साधु के बताये हुए तत्व को यथावत् प्रतिपादन करनेवाले ।

२ पताका-समान—ध्वजावत् हवा के साथ इधर-उधर खींचे जानेवाले-अस्थिरमस्तिष्क के ।

३ स्थाणु-समान—सूखे लकड़े की तरह कठोर—अपना कदाग्रह नहीं छोड़नेवाले ।

४ कण्टक-समान—समझाने पर भी न मानकर कुवचनरूप-काँटा चुभानेवाले ।

५ श्रावक के विषय में विविध

श्रावक के चार विश्राम—

१. समणोवासगस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा—जत्थ वि य णं सीलव्वय-गुणव्वय-वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासाइं पडिवज्जइ, तत्थ वि य से एगे आसासे पन्नत्ते। जत्थ वि य णं सामाइयं देसावगासियं सम्ममणुपालेइ, तत्थ वि य से एगे आसासे पन्नत्ते। जत्थ वि य णं चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठ-पुण्णिमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेइ, तत्थ वि य से एगेआसासे पन्नत्ते। जत्थ वि य णं अपच्छिम-मारणंतियसंलेहणा-झूसणाझूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालमणवकंखमाणे विहरइ, तत्थ वि य से एगे आसासे पन्नत्ते। —स्थानाङ्ग ४।३।३१४

भारवाहक की भाँति श्रावक के चार विश्राम हैं—

१ जिस समय श्रावक पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, नवकारसी आदि प्रत्याख्यान तथा अष्टमी-चतुर्दशी आदि के दिन उपवास धारण करता है, उस समय प्रथम विश्राम होता है।

२ जब श्रावक सामायिक एवं देशावकाशिक व्रत का पालन करता है, तब दूसरा विश्राम होता है।

३ चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा आदि पर्व-तिथियों

में जब श्रावक रात-दिन का पूर्ण पौषध करता है, तब तीसरा विश्राम होता है।

४ जब मारणान्तिक संलेखणा-तप धारकर यावज्जीवन आहार-पानी का त्याग करके स्थिरता से मरण की वांछा न करता हुआ विचरता है, तब चौथा विश्राम होता है।

(भारवाहक पहले विश्राम में भार एक कंधे से दूसरे कंधे पर लेता है, दूसरे विश्राम में उसे उतारकर मल-मूत्र का त्याग करता है, तीसरे विश्राम में नाग आदि के मंदिर में ठहरता है और चौथे विश्राम में भार को जहाँ पहुंचाना होता है, वहाँ पहुंचाकर मुक्त होता है।)

श्रावक के तीन मनोरथ–

२. तिहिं ठाणेहिं समणोवासए महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ, तं जहा–कयाणमहमप्पं वा बहुं वा परिग्गहं परिचइस्सामि। कयाणं अहं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामि। कयाणं अहं अपच्छिम-मारणंतिय-संलेहणा-झूसणाझुसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालमणवकंखमाणे विहरिस्सामि, एवं समणसा, सवयसा, सकायसा, जागरमाणे समणोवासए महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ।

—स्थानाङ्ग ३।४।२१०

निम्नलिखित तीन मनोरथों का चिन्तन करता हुआ श्रावक महानिर्जरा एवं महापर्यवसान-समाधिमरणवाला होता है—(१) कब मैं थोड़ा या बहुत परिग्रह का सर्वथा त्याग करूंगा, (२) कब मैं गृहवास को छोड़ एवं मुण्डित होकर साधु बनूंगा तथा (३) कब मैं संलेखना-संथारा करके मरण की इच्छा न करता हुआ स्थिरता से विचरूंगा?

३. श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएं—

एक्कारस उवासगपडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—दंसणसावए, कयव्वयकम्मे, सामाइअकडे, पोसहोववासनिरए, दिआबंभयारी रत्तिपरिमाणकडे, दिआ वि राओ वि बंभयारी, असिणाई विअडभोई मोलिकडे, सचित्तपरिण्णाए, आरम्भपरिण्णाए, पेसपरिण्णाए, उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए, समणभूए आवि भवइ समणाउसो ! —**समवायाङ्ग ११**

प्रतिमा का अर्थ प्रतिज्ञा है। श्रावक के लिए ग्यारह प्रतिमाएं कही हैं—

पहली प्रतिमा में श्रावक शङ्का-काङ्क्षादि दोषरहित सम्यक्त्व का पालन करता है।

दूसरी प्रतिमा में श्रावक अणुव्रत-गुणव्रत का विधिवत् पालन करता है।

तीसरी प्रतिमा में श्रावक दोनों वक्त सामायिक एवं देशावकाशिक का आराधन करता है।

चौथी प्रतिमा में श्रावक पर्व के दिनों में पूर्णपौषध करता है।

पाँचवीं प्रतिमा में श्रावक दिन में पूर्ण ब्रह्मचारी एवं रात को मर्यादासहित ब्रह्मचर्य का पालन करता है।

छठी प्रतिमा में श्रावक दिन-रात पूर्ण ब्रह्मचारी रहता है, स्नान एवं रात्रिभोजन का सर्वथा त्याग करता है और कच्छ नहीं बांधता।

सातवीं प्रतिमा में श्रावक सचित्त-आहार का त्याग करता है।

आठवीं प्रतिमा में श्रावक आरम्भ-समारम्भ का त्याग करता है।

नववीं प्रतिमा में श्रावक नौकर आदि से भी आरम्भ नहीं करवाता।

दसवीं प्रतिमा में श्रावक अपने लिए बनाया हुआ भोजन नहीं करता। कोई हजामत करवाता है एवं कोई शिखा भी रखता है। घरसम्बन्धी कार्यों के विषय में पूछने पर **मैं जानता हूं या नहीं जानता** इन दो वाक्यों से ज्यादा नहीं बोल सकता।

ग्यारहवीं प्रतिमा में श्रावक साधु के समान वेष धारण करता है एवं प्रतिलेखन आदि क्रियाएं करता है, लेकिन सांसारिक प्रेम व अपमान के भय से अपने स्वजन-सम्बन्धियों के घरों से ही भिक्षा लेता है तथा क्षुर से हजामत करता है और कोई-कोई साधु की तरह लोच भी करता है।

४. श्रावक श्री रूपचन्दजी–

जन्म १९२३ जेठ सुदी १०, स्वर्गवास १९८३ फाल्गुन सुदी ७, एक घंटा पाँच मिनट का संथारा। स्नान में पाँच सेर जल, घटाते-घटाते अन्त में ४५ तोला रखा। रेल में जलपान भी नहीं, वि. सं. १९७२ के बाद रेल का त्याग। छत्ता नहीं, शयन में तकिया नहीं। जबान के पाबन्द, स्पष्टवक्ता, कपड़ा ५९ हाथ, सामायिक-पौषध में प्रायः फिरते नहीं, सहारा लेते नहीं। सामायिक अन्तिम दिन तक, **आचार्य डालगणी** की विशेष कृपा।

—'श्रावक रूपचन्दजी' पुस्तक से

६ सामायिक

१. समानि ज्ञान–दर्शन-चारित्राणि, तेषु अयनं-गमनं समायः, स एव सामायिकम् ।

मोक्षमार्ग के साधन ज्ञान-दर्शन-चारित्र **सम** कहलाते हैं; उनमें अयन यानी प्रवृत्ति करना **सामायिक** है ।

२. समभावो सामाइयं, तण-कंचण-सत्तु-मित्त विसउ त्ति ।
णिरभिस्संगं चित्तं, उचियपवित्तिप्पहाणं च ।

—पंचाशक

चाहे तिनका हो, चाहे सोना, चाहे शत्रु हो, चाहे मित्र, सर्वत्र अपने मन को राग-द्वेष की आसक्ति से रहित रखना तथा पाप-रहित उचित धार्मिकप्रवृत्ति करना, 'सामायिक' है; समभाव ही सामायिक है ।

३. समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभ-कामना ।
आर्तरौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं व्रतम् ॥

सब जोवों पर समता-समभाव रखना, पाँच इन्द्रियों का संयम-नियंत्रण करना, अन्तर्हृदय में शुभभावना शुभसंकल्प रखना, आर्त-रौद्र दुर्ध्यानों का त्याग करके धर्मध्यान का चिन्तन करना 'सामायिक' है ।

४. त्यक्तार्त-रौद्र ध्यानस्य, त्यक्तसावद्यकर्मणः ।
मुहूर्त्तं समता या तां, विदुः सामायिक व्रतम् ॥

—योगशास्त्र ३।८२

आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान का त्याग करके तथा पापमय कर्मों का त्याग करके मुहूर्त-पर्यन्त समभाव में रहना 'सामायिकव्रत' है।

५. सामाइयं नाम सावज्जजोगपरिवज्जणं निरवज्जजोग-
पडिसेवणं च। —**आवश्यक-अवचूरि**

सावद्य अर्थात् पापजनक कर्मों का त्याग करना और निरवद्य अर्थात् पापरहित कार्यों को स्वीकार करना 'सामायिक' है।

६. आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे।

—**भगवती १।६**

हे आर्य ! आत्मा ही सामायिक है और आत्मा ही सामायिक का अर्थ-फल है।

सामायिक का महत्त्व—

७. सामाइयम्मि उ कए, समणो इव सावओ हवइ जम्हा।
एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा॥

—**विशेषावश्यक-भाष्य २६९०**

—**तथा आवश्यक-निर्युक्ति ८००।१**

सामायिकव्रत भलीभांति ग्रहण करलेने पर श्रावक भी साधु जैसा हो जाता है, आध्यात्मिक-उच्चदशा को पहुंच जाता है; अतः श्रावक का कर्त्तव्य है कि वह अधिक से अधिक सामायिक करे।

८. सामाइय-वय-जुत्तो, जाव मणो होइ नियमसंजुत्तो।
छिन्नइ असुहं कम्मं, सामाइय जत्तिया वारा॥

—**आवश्यकनिर्युक्ति ८००।२**

चंचल मन को नियंत्रण में रखते हुए जब तक सामायिक व्रत की अखण्डधारा चालू रहती है तब तक अशुभकर्म बराबर क्षीण होते रहते हैं।

९. जे के वि गया मोक्खं, जेवि य गच्छंति जे गमिस्संति ।
ते सव्वे सामाइय- पभावेण मुणेयव्वं ।।

जो भी साधक अतीतकाल में मोक्ष गये हैं, वर्तमान में जा रहे हैं और भविष्य में जायेंगे, यह सब सामायिक का प्रभाव है ।

१०. किं तिव्वेण तवेणं, किं जवेणं किं चरित्तेणं ।
समयाइ विण मुक्खो, न हु हूओ कहवि न हु होइ ।।

—**सामायिकप्रवचन, पृष्ठ ७८**

चाहे कोई कितना ही तीव्र तप तपे, जप-जपे अथवा मुनि-वेष धारण कर स्थूल क्रियाकाण्डरूप चारित्र पाले; परन्तु समताभाव रूप सामायिक के बिना न किसी को मोक्ष हुआ है और न होगा ।

७ सामायिक के विषय में विविध

१. सामायिक के अधिकारी—

जो समो सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलि-भासियं ॥
जस्स सामाणिओ अप्पा संजमे णियमे तवे।
तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलि - भासियं ॥

जो साधक त्रस-स्थावररूप सभी जीवों पर समभाव रखता है, उसी का सामायिक शुद्ध होता है—ऐसा **केवली-भगवान्** ने कहा है।

जिसकी आत्मा संयम, तप और नियम में संलग्न हो जाती है; उसी का सामायिक शुद्ध होता है—ऐसा **केवली-भगवान्** ने कहा है।

२. सामायिक के भेद—

दुविहे सामाइए पण्णत्ते, तं जहा—आगारसामाइए चेव, अणगारसामाइए चेव। **—स्थानाङ्ग २।३**

सामायिक दो प्रकार का कहा है—
(१) आगारसामायिक और (२) अनगार सामायिक।

३. सामायिक के अतिचार—

एयस्स नवमस्स सामाइयवयस्स, पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तं जहा—मण-दुप्पणिहाणे, वय-दुप्प

णिहाणे, काय-दुप्पणिहाणे, समाइयस्स सइ-अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

—श्रावक-आवश्यक

इस नौवें सामायिकव्रत के पांच अतिचार जानने योग्य हैं, लेकिन श्रावक के लिए वे आचरने योग्य नहीं । यथा—

१ मन की दुष्प्रवृत्ति, २ वचन की दुष्प्रवृत्ति, ३ काया की दुष्प्रवृत्ति, ४ सामायिक की स्मृति न रखना, ५ सामायिक को अव्यवस्थित करना ।

४. सामायिक के ३२ दोष—

१. मन के दस दोष—

अविवेक जसो-कित्ती, लाभत्थी गव्व-भय नियाणत्थी ।
संसय-रोस अविणओ, अबहुमाणए दोसा भाणियवा ।।

१ अविवेक, २ यशः-कीर्ति, ३ लाभार्थ ४ गर्व ५ भय ६ निदान ७ संशय ८ रोष ९ अविनय १० अबहुमान ।

२. वचन के दस दोष—

कुवयण-सहसाकारि, सच्छंद-संखेव कलहं च ।
विगहा विहासोऽसुद्धं, निरवेक्खो मुणमुणा दस दोसा ।।

१ कुवचन, २ सहसाकार, ३ सच्छन्द, ४ संक्षेप, ५ कलह, ६ विकथा, ७ हास्य, ८ अशुद्ध, ९ निरपेक्ष, १० मुम्मन ।

३. काय के बारह दोष—

कुआसणं चलासणं चलादिट्ठी,
सावज्जकिरिया-लंबणा-कुंचण-पसारणं च।
आलस-मोडन-मल-विमासणं,
निद्दा वेयावच्चत्ति, बारस कायदोसा॥

—सामायिकप्रवचन, पृष्ठ १२

१ कुआसन, २ चलासन, ३ चलदृष्टि, ४ सावद्य क्रिया, ५ आलंबन, ६ आकुञ्चन-प्रसारण, ७ आलस्य, ८ मोड़न ९ मल, १० विमासन, ११ निद्रा, १२ वैयावृत्य।

(इनका विवेचन देखो श्रावक धर्मप्रकाश पुंज ९ में)

८ सामायिक का प्रभाव

१. **गीदड़बाहा** का एक जैनश्रावक मानसामंडी से १८ हजार रुपये लेकर बस में जा रहा था। डाकू मिले और बोले दिखाओ सब अपना-अपना सामान! श्रावक ने मुंहपत्ति पूंजनी एवं माला दिखाकर कहा--मेरे सामायिक का नियम है। डाकू बोले--मुंहपट्टिए का चेला है! ये साधु अच्छे होते हैं, यों कहकर श्रावक को छोड़ दिया—अन्य सभी को लूट कर धन-माल ले गये।

२. **उदयचन्द** सुराना का पन्ने का कंठा एक आदमी ले गया। समता रखी। फिर सामायिक करते समय एक दिन वापिस पहना गया।

३. डाकू आनेवाले थे, घर के सब द्वार खोलकर सेठ ने सपरिवार सामायिक ले लिया। साधु समझकर डाकू वापस लौट गये।

९ नाम को सामायिक

१. सामायिक में समता भाव, गुड़ की भेली कुत्ता खाय।

—राजस्थानी कहावत

● सास घर में सामायिक कर रही थी। इतने में एक कुत्ता आया। बहू ने ध्यान नहीं दिया। सास से रहा नहीं गया और नवकार-मंत्र का जाप करती हुई कहने लगी—

लंबड़ पुंछो लंका पेटो घर में पेठोजी ! णमो अरिहंताणं।

बहू समझ तो गई, लेकिन कुत्ते को न निकाल कर अपना काम करती रही। कुत्ता रसोई में घुसने लगा। तब सास ने कहा—

उज्जलवन्तो काबरचित्तो रसोई को किंवाड़ खोल्यो जी ! णमो सिद्धाणं।

फिर भी बहू ने गौर नहीं किया।

सास पुनः बोली—

दूध-दही रा खाडा फोड्या घी कै चाडै डूब्योजी ! णमो आयरिआणं।

इतने पर भी बहू नहीं आई, तब झुंझलाकर सास ने फिर कहा—

उजाड़ तो इण बहुलो कीधो बहुवर भेद न पायोजी ! णमो उवज्झायाणं।

आखिर हंस कर बहू ने इस प्रकार मंत्र की पूर्ति की—
सामायिक तो मारे पिहरे भी करता पण आ किरिया नहीं देखीजी ! णमो लोए सव्वसाहूणं ।

३. सेठ सामायिक कर रहे थे । बहू घर में काम कर रही थी । बाहर से सेठ को पूछता हुआ एक आदमी आया । बहू ने कहा—सेठजी मोची की दुकान पर जूते खरीद रहे हैं । जाकर देखा तो वहां न मिले । वापिस आकर पूछा । उत्तर मिला कि अब कपड़े की दुकान पर कपड़ा देख रहे हैं । वहां जाकर भी खाली आया । बहू बोली—वे तो इन्कम-टेक्स के दफ्तर में गये हैं । इस प्रकार आगन्तुक को कई जगह घुमाकर अंत में कहने लगी अब सेठजी सामायिक कर रहे हैं । इतने में सेठ सामायिक करके बाहर आये । और बहू पर क्रुद्ध होने लगे । बहू ने विनम्र शब्दों में कहा-पिताजी ! केवल मुँह बांधने से सामायिक नहीं होती, बतलाइए आप सामायिक करते समय मन से मोची आदि के यहां गये थे या नहीं ! सेठजी चुप रहे क्यों कि वास्तव में बहू की बात सत्य थी ।

पौषध

१. पोषं धर्मस्य धत्ते यत्, तद्भवेत् पौषधव्रतम् ।

—उपदेशप्रासाद

जो व्रत धर्म को पुष्ट बनाता है, उसे **पौषधव्रत** कहते हैं।

२. आहार-तनुसत्कारा-ऽब्रह्म-सावद्यकर्मणाम् ,
त्यागः पर्वचतुष्टय्यां, तद्विदुः पौषधव्रतम् ।

—धर्मसंग्रह १।३७

आहार, शरीर का सत्कार, अब्रह्मचर्य, और सावद्यकार्य-चारों पर्व तिथियो (अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्य और पूर्णिमा) में इन सबका त्याग करना **पौषधव्रत है** ।

३. बौद्ध परम्परा मे पौषध की भाँति उपोसथ का विधान है । बुद्ध के अनेक भक्त (उपासक) अष्टमी चतुर्दशी, अमावस्या और पूर्णिमा को उपोसथ किया करते थे । (देखें-पेटावत्थु अट्ठकथा गाथा २०६ तथा विनयपिटक महावग्ग) उपोसथ में उपासक निम्न आठ शीलका पालन करता है—(१) प्राणातिपात-विरति, (२) अदत्तादान-विरति, (३) काय भावना-विरति, (४) मृषावाद-विरति, (५) मादक द्रव्यों का सेवन नहीं करना, (६) विकाल भोजन नहीं करना, (७) नृप, गीत, शरीर की विभूषा आदि नहीं करना, (८) उच्चासन तथा सजीधगी शय्मा का त्याग करना ।

—आगम और त्रिपिटक : एक अनुशीलन पृष्ठ ६५५,

१. तापयति अष्टप्रकारं कर्म इति तपः।

—आवश्यक मलयगिरि खण्ड २ अ. १

जो आठ प्रकार के कर्मों को तपाता है, उसका नाम 'तप' है।

२. इन्द्रियमनसोर्नियमानुष्ठानं तपः।

—नीतिवाक्यामृत १।२२

पाँच इन्द्रिय (स्पर्शन-रसना-घ्राण-चक्षु-श्रोत्र) और मन को वश में करना या बढ़ती हुई लालसाओं को रोकना तप है।

३. वेदस्योपनिषत् सत्यं, सत्यस्योपनिषद् दमः।
दमस्योपनिषद् दानं, दानस्योपनिषत् तपः॥

—महाभारत शान्ति पर्व अ० २५१।११

वेद का सार है सत्यवचन, सत्य का सार है इन्द्रियों का संयम, संयम का सार है दान और दान का सार है 'तपस्या'।

४. तपो हि परमं श्रेयः, संमोहमितरत्सुखम्।

—वाल्मीकिरामायण ७।८४।९

तप ही परम कल्याणकारी है। तप से भिन्न सुख तो मात्र बुद्धि के सम्मोह को उत्पन्न करनेवाला है।

५. तपस्या जीवन की सब से बड़ी कला है। —गांधी

६. परक्कमिज्जा तवसंजमंमि। —दशवैकालिक ८।४१

तप-संयम में पराक्रम करना चाहिए।

१२ तप से लाभ

१. तवेण परिसुज्झइ । —उत्तराध्ययन २८।३५

तपस्या से आत्मा पवित्र होती है ।

२. तवेण वोदाणं जणयइ । —उत्तराध्ययन २९।२७

तपस्या से व्यवदान अर्थात् कर्मों की शुद्धि होती है ।

३. भवकोडीसंचियं कम्मं, तवसा निज्जरिज्जइ ।

—उत्तराध्ययन २०।६

करोड़ों भवों के संचित कर्म तपस्या से जीर्ण होकर झड़ जाते हैं ।

४. तपसा प्राप्यते सत्त्वं सत्त्वात् संप्राप्यते मनः ।
मनसा प्राप्यते त्वात्मा, ह्यात्मापत्त्या निवर्त्तते ॥

—मैत्रायणी आरण्यक १।४

तप द्वारा सत्त्व (ज्ञान) प्राप्त होता हैं, सत्त्व से मन वश में आता है, मन वश में आने से आत्मा की प्राप्ति होती है और आत्मा की प्राप्ति हो जाने पर संसार से छुटकारा मिल जाता है ।

५. तपसैव महोग्रेण, यद्दुरापं तदाप्यते ।

—योगवाशिष्ठ ३।६८।१४

जो दुष्प्राप्य वस्तुएं हैं, वे उग्रतपस्या से ही प्राप्त होती हैं ।

६. यद्दुस्तरं यद्दुरापं, यद्दुर्गं यच्च दुष्करम् ।
सर्वं तु तपसा साध्यं, तपो हि दुरतिक्रमम् ॥

—मनुस्मृति ११।२३८

जो दुस्तर है, दुष्प्राप्य है, दुर्गम है, और दुष्कर है—वह सब तप द्वारा सिद्ध किया जा सकता है, क्योंकि तप दुरतिक्रम है। इसके आगे कठिनता जैसी कोई चीज नहीं है।

७. तपसा च कृतः शुद्धो, देहो न स्यान्मलीमसः।

—**हिंगुलप्रकरण**

तपस्या से शुद्ध किया हुआ शरीर फिर मैला नहीं होता।

८. तवसा अवहट्टलेस्सस्स, दंसणं परिसुज्झइ।

—**दशाश्रुत स्कन्ध ५।६**

तपस्या से लेश्याओं को संवृत करनेवाले व्यक्ति का दर्शन-सम्यक्त्व परिशोधित होता है।

१३ तप कैसे और किसलिये ?

१. बलं थामं च पेहाए, सद्धामारोग्गमप्पणो ।
खेत्तं कालं च विन्नाय, तहप्पाणं निजुंजए ॥

—दशवैकालिक ८।३५

अपना बल, दृढ़ता, श्रद्धा आरोग्य तथा क्षेत्र-काल को देखकर आत्मा को तपश्चर्या में लगाना चाहिए ।

२. तदेव हि तपः कार्यं, दुर्ध्यानं यत्र नो भवेत् ।
ये न योगा न हीयन्ते, क्षीयन्ते नेन्द्रियाणि च ।

—तपोष्टक (यशोविजयकृत)

तप वैसा ही करना चाहिए, जिसमें दुर्ध्यान न हो, योगों में हानि न हो और इन्द्रियाँ क्षीण न हों !

३. नन्नत्थ निज्जरट्ठयाए तवमहिट्ठेज्जा ।

—दशवैकालिक ९।४

केवल कर्म-निर्जरा के लिए तपस्या करना चाहिए । इहलोक-परलोक व यशःकीर्ति के लिए नहीं ।

४. णो पूयणं तवसा मावहेज्जा ।

—सूत्रकृतांग ७।२७

तपस्या द्वारा पूजा की इच्छा न करनी चाहिए ।

५. तेसिं पि न तवो सुद्धो।

—सूत्रकृतांग ८।२४

जो कीर्ति आदि की कामना से तप करते हैं, उनका तप शुद्ध नहीं है।

६. न हु बालतवेण मुक्खुत्ति।

—आचारांग निर्युक्ति २१४

अज्ञान-तप से कभी मुक्ति नहीं मिलती।

१. सो तवो दुविहो वुत्तो, बाहिरब्भिंतरो तहा।
बाहिरो छव्विहो वुत्तो, एवमब्भिंतरो तवो ॥

—उत्तराध्ययन ३०।८

तप दो प्रकार का है—बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्यतप अनशन आदि छः प्रकार का है एवं आभ्यन्तर तप के प्रायश्चित्त आदि छः भेद हैं।

२. अणसणमूणोयरिया, भिक्खायरिया य रसपरिच्चाओ।
कायकिलेसो संलीणया य, वज्झो तवो होइ।
पायच्छित्तं विणओ, वेयावच्चं तहेव सज्झाओ।
झाणं च विउस्सग्गो, एस अब्भिंतरो तवो।

—उत्तराध्ययन ३०

बाह्य तप के छः भेद हैं-- १ अनशन, २ ऊनोदरी, ३ भिक्षाचरी, ४ रसपरित्याग, ५ कायक्लेश, ६ प्रतिसंलीनता।

आभ्यन्तरतप के छः भेद हैं— १ प्रायश्चित्त, २ विनय, ३ वैयावृत्त्य, ४ स्वाध्याय, ५ ध्यान, ६ कायोत्सर्ग।

३. देव-द्विज-गुरु-प्राज्ञ-पूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च, शारीरं तप उच्यते ॥ १४ ॥
अनुद्वेगकरं वाक्यं, सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव, वाङ्मयं तप उच्यते ॥ १५ ॥

मनःप्रसाद : सौम्यत्वं, मौनमात्मविनिग्रहः ।
भावसंशुद्धिरित्येतत्, तपो मानसमुच्यते ॥ १६ ॥
श्रद्धया परया तप्तं, तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः, सात्त्विकं परिचक्षते ॥ १७ ॥
सत्कारमानपूजार्थं, तपो दम्भेन चैव यत् ।
क्रियते तदिह प्रोक्तं, राजसं चलमध्रुवम् ॥ १८ ॥
मूढाग्रहेणात्मनो यत्, पीडया क्रियते तपः ।
परस्योत्सादनार्थं वा, तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १९ ॥

—गीता १७।

देवता, ब्राह्मण, गुरु एवं ज्ञानीजनों का पूजन, पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा—**ये शारीरिक तप है ।**

दूसरों को उद्विग्न न करनेवाले सत्य, प्रिय हितकारी वचन और सत्-शास्त्रों का अध्ययन-**वाचिक(-वाणी का) तप** कहलाता है । मन की प्रसन्नता, शांतभाव, मौन, आत्मसंयम और भावों की पवित्रता **मानसिक(-मन का) तप** कहा जाता है ।

पूर्वोक्त तीनों प्रकार का तप यदि फल की आकांक्षा किए बिना परम श्रद्धापूर्वक किया जाए तो वह **सात्विक** कहलाता है; यदि वह तप सत्कार, मान एवं पूजा-प्राप्ति के लिए दंभपूर्वक किया जाए तो वह **राजस** कहा गया है, उसके फलस्वरूप क्षणिक-भौतिक सुख मिल जाता है । अविवेकियों द्वारा दुराग्रहवश जो शरीर को पीड़ित किया जाता है अथवा दूसरों का नाश करने के लिए जो तप किया जाता है वह **तामस** कहा गया है ।

१५ अनशन

१. तपोनानशनात् परम् ।
यद्धि परं तपस्तद् दुर्धर्षम् तद् दुराधर्षम् ॥

—मैत्रायणी आरण्यक १०।६२

अनशन से बढ़कर कोई तप नहीं है, साधारण साधक के लिए यह परम तप दुर्धर्ष है अर्थात् सहन करना बड़ा ही कठिन है ।

२. आहार पच्चक्खाणेणं जीवियासंसप्पओगं वोच्छिदइ ।

—उत्तराध्ययन २९।३५

आहार प्रत्याख्यान अर्थात् अनशन से जीव आशा का व्यवच्छेद करता है यानी जीवन की लालसा से छूट जाता है ।

३. विषया विनिवर्तन्ते, निराहारस्य देहिनः ।

—गीता २।५९

आहार का त्याग करनेवाले व्यक्ति से शब्दादि इन्द्रियों के विषय निवृत्त हो जाते हैं ।

४. अणसणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–इत्तरिए य, आवकहिए य
इत्तरिए अणेगविहे पण्णत्तो, तं जहा—चउत्थे भत्ते,
छट्ठे भत्ते........ जाव छम्मासिए भत्ते....।
आवकहिए दुविहे पण्णत्तो, तं जहा—
पाओवगमणे य, भत्तपच्चक्खाणे य । —भगवती २५-७

अनशन—आहार त्याग दो प्रकार का कहा है—
(१) इत्वरिक (२) यावत्कथिक ।

इत्वरिक के अनेक भेद हैं—चतुर्थभक्त—उपवास, षष्ठभक्त-बेला........यावत् षाण्मासिकभक्त (छः महिनो का तप) ।

यावत्कथिक—यावज्जीवन आहारत्याग दो प्रकार का कहा है—
(१) पादपोपगमन (२) भक्तप्रत्याख्यान ।

५. जो सो इत्तरिओ तवो, सो समासेण छव्विही ।
सेढितवो पयरतवो,घणो य तह होइ वग्गो य ।। १० ।।
तत्तो य वग्गवग्गो, पंचम छट्ठओ पइराणतवो ।
मणइच्छियचित्तत्थो, नायव्वो होइ इत्तरिओ ।। ११ ।।

—उत्तराध्ययन अ० ३०

इत्वरिक तप संक्षिप्तरूप में छः प्रकार का है—

(१) श्रेणितप, (२) प्रतरतप, (३) घनतप, (४) वर्गतप, (५) वर्ग-वर्गतप, (६) प्रकीर्णतप—यह इत्वरिक तप मन-इच्छित फल देनेवाला है ।

६. संवच्छरं तु पढमं, मज्झिमगाणट्ठमासियं होई ।
छम्मासं पच्छिमस्स उ, माणं भणियं तवुक्कोसं ।।

—व्यवहारभाष्य उ० १

प्रथमतीर्थंकर का एक वर्ष, मध्यतीर्थंकरों का अष्टमास एवं चरमतीर्थंकर का उत्कृष्ट तप षट्मास था ।

१६ उपवास

१. चतुर्विधाशनत्याग उपवासो मतो जिनैः ।

—सुभाषितरत्न-संदोह

अशन आदि चारों प्रकार के आहार का त्याग करना भगवान के द्वारा उपवास माना गया है ।

२. उपवासः स विज्ञेयः, सर्वभोगविवर्जितः ।

—मार्गशीर्ष-एकादशी

सभी भोगों का त्याग करना **उपवास** नामक व्रत है ।

३. आरोग्य रक्षा का मुख्य उपाय है उपवास ।

४. मर्यादा में रहकर उपवास करने से बहुत लाभ होता है ।

५. साधु एक उपवास में जितने कर्म खपाता है, उतने कर्म हजारों वर्ष में भी नरक के जीव नहीं खपा सकते । बेले में साधु जितने कर्मों का नाश करता है, नारक-जीव लाखों वर्षों में उतने कर्म नहीं खपा सकते । साधु तेले में जितनी कर्म-निर्जरा करता है, नारक-जीव उतनी कर्म-निर्जरा करोड़ों वर्षों में भी नहीं कर सकते । साधु चोले में जितने कर्म नष्ट करता है, नारक-जीव कोटि-कोटि वर्षों में भी उतने कर्म नष्ट नहीं कर सकते ।

—भगवती १६।४

६. (क) **उपवास से पहले तीन बातें मत करो—**

(१) गरिष्ठ भोजन, (२) अधिक भोजन, (३) चटपटा सुस्वादु भोजन।

(ख) **उपवास में तीन बातें मत करो।**

(१) क्रोध, (२) अहंकार, (३) निन्दा।

(ग) **उपवास में तीन बातें अवश्य करो!**

१ ब्रह्मचर्य का पालन, २ शास्त्र का पठन, ३ आत्म-स्वरूप का चिन्तन।

(घ) **तीन को उपवास नहीं करना चाहिए—**

१ गर्भवती स्त्री को, २ दूध पीते बच्चे की माता को, ३ दुर्बल-अजीर्ण के रोगी को।

—'तीन बातें' नामक पुस्तक से

१७ प्रायश्चित्त

१. प्रायः पापं विनिर्दिष्टं, चित्तं तस्य विशोधनम् ।

—धर्मसंग्रह ३ अधिकार

प्रायः का अर्थ पाप है और चित्त का अर्थ उस पाप का शोधन करना है अर्थात् पाप को शुद्ध करनेवाली क्रिया का नाम **प्रायश्चित्त** है ।

२. अपराधो वा प्रायः चित्तं-शुद्धिः प्रायस चित्तं प्रायश्चित्तं—अपराध-विशुद्धि : । **—राजवार्तिक ९।२२।१**

अपराध का नाम प्रायः है और चित्त का अर्थ शोधन है । प्रायश्चित्त अर्थात् अपराध की शुद्धि ।

३. पावं छिंदइ जम्हा, पायच्छित्तं ति भण्णइ तेणं ।।

—पंचाशक सटीक विवरण १६।३

पाप का छेदन करता है अतः प्राकृत भाषा में इसे **'पायच्छित्त'** कहते हैं ।

४. प्रायइत्युच्यते लोक-स्तस्य चित्तं मनो भवेत् ।
तच्चित्त-ग्राहकं कर्म, प्रायश्चित्तमिति स्मृतम् ।।

—प्रायश्चित्तसमुच्चयवृत्ति

प्रायः का अर्थ लोक-जनता है एवं चित्त का अर्थ मन है । जिस क्रिया के द्वारा जनता के मन में आदर हो, उस क्रिया का नाम प्रायश्चित्त है ।

५. पाप को शुद्धहृदय से मान लेना भी **प्रायश्चित्त** है।

गांधी जी ने कर्जदार से तंग आकर एक बार घर से एक तोला सोना चुराकर कर्ज तो चुका दिया, किंतु चोरी के अपराध से हृदय झुलसने लगा। लज्जावश सामने कहने का साहस न होने से पिता को एक पत्र लिखा एवं भविष्य में ऐसा काम न करने का दृढ़संकल्प किया। पिता ने माफी दे दी।

६. **प्रायश्चित्त की तीन सीढ़ियाँ होती हैं––**

१ आत्मग्लानि, २ पाप न करने का निश्चय, ३ आत्मशुद्धि। **—जुन्नेद बगदादी**

प्रायश्चित से लाभ–

१. पायच्छित्तकरणेणं पावकम्मविसोहिं जणयइ, निरइयारे यावि भवइ। सम्मं च णं पायच्छित्तं पडिवज्जमाणे मग्गं च मग्गफलं च विसोहेइ, आयारं च आयारफलं च आराहेइ।

—उत्तराध्ययन २६।१६

प्रायश्चित्त करने से जीव पापों की विशुद्धि करता है एवं निरतिचार-निर्दोष बनता है। सम्यक् प्रायश्चित्त अंगीकार करने से जीव सम्यक्त्व एवं सम्यक्त्व के ज्ञान को निर्मल करता है तथा चारित्र एवं चारित्रफल-मोक्ष की आराधना करता है।

१. पायच्छित्ते दसविहे पण्णत्ते, तं जहा—आलोयणारिहे पडिक्कमणारिहे, तदुभयारिहे, विवेगारिहे, विउसग्गारिहे, तवारिहे, छेदारिहे, मूलारिहे, अणवट्ठप्पारिहे, पारंचियारिहे।

—स्थानाङ्ग १०।७३० तथा भगवती २५।७।७६६

प्रायश्चित्त के दस भेद कहे हैं—

१ आलोचनार्ह, २ प्रतिक्रमणार्ह, ३ तदुभयार्ह, ४ विवेकार्ह, ५ व्युत्सर्गार्ह, ६ तपार्ह, ७ छेदार्ह, ८ मूलार्ह, ९ अनवस्थाप्यार्ह, १० पाराञ्चिकार्ह ।

(१) **आलोचनार्ह—**

संयम में लगे हुए दोष को गुरु के समक्ष स्पष्ट वचनों से सरलतापूर्वक प्रकट करना आलोचना है। आलोचना मात्र से जिस दोष की शुद्धि हो जाए, उसे **आलोचनार्ह-दोष** कहते हैं। ऐसे दोष की आलोचना करना **आलोचनार्ह-प्रायश्चित्त** है। गोचरी—पञ्चमी आदि में लगे हुए अतिचारों की जो गुरु के पास आलोचना की जाती है, वह इसी प्रायश्चित्त का रूप है।

(२) **प्रतिक्रमणार्ह—**

किए हुए दोष से पीछे हटना अर्थात् उसके पश्चाताप स्वरूप **मिच्छामिदुक्कडं** "मेरे पाप-मिथ्या (निष्फल) हों" ऐसी

भावना प्रकट करना **प्रतिक्रमण** है। हां तो जिस दोष की मात्र प्रतिक्रमण से (मिच्छामिदुक्कडं कहने से) शुद्धि हो जाए, वह **प्रतिक्रमणार्ह-दोष** एवं उसके लिए प्रतिक्रमण करना **प्रतिक्रमणार्ह-प्रायश्चित्त** है। समिति-गुप्ति में अकस्मात् दोष लग जाने पर 'मिच्छामिदुक्कडं' कह कर उक्त प्रायश्चित्त लिया जाता है। फिर गुरु के पास आलोचना करने की आवश्यकता नहीं रहती।

(३) **तदुभयार्ह–**

आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करने से जिस दोष की शुद्धि हो उसके लिए आलोचना-प्रतिक्रमण करना **तदुभयार्ह-प्रायश्चित्त** है। एकेन्द्रियादि जीवों का संघट्टा होने पर साधु द्वारा उक्त प्रायश्चित्त लिया जाता है, अर्थात् **मिच्छा-मिदुक्कडं** बोला जाता है एवं बाद में गुरु के पास इस दोष की आलोचना भी की जाती है।

(४) **विवेकार्ह—**

किसी वस्तु के विवेक-त्याग से दोष की शुद्धि हो तो उसका त्याग करना **विवेकार्ह-प्रायश्चित** है। जैसे—आधाकर्म आदि आहार आ जाता है तो उसको अवश्य परठना पड़ता है, ऐसा करने से ही दोष की शुद्धि होती है।

(५) **व्युत्सर्गार्ह—**

व्युत्सर्ग करने से जिस दोष की शुद्धि हो, उसके लिए व्युत्सर्ग करना (शरीर के व्यापार को रोककर ध्येयवस्तु में उपयोग लगाना) **व्युत्सर्गार्ह-प्रायश्चित्त** है। नदी आदि पार करने के बाद यह प्रायश्चित्त लिया जाता है अर्थात् **कायोत्सर्ग** किया जाता है।

(६) **तपार्ह—**

तप करने से जिस दोष की शुद्धि हो, उसके लिए तप करना

तपार्ह-प्रायश्चित कहलाता है। इस प्रायश्चित्त में निर्विकृति-आयम्बिल-उपवास-बेला-पांचदिन दस-दिन-पन्द्रहदिन मास-चार मास एवं छः मास तक का तप किया जाता है।

(७) **छेदार्ह**—

दीक्षापर्याय का छेद करने से जिस दोष की शुद्धि होती है, उसके लिये दीक्षापर्याय का छेदन करना **छेदार्ह-प्रायश्चित्त** है। इसके भी मासिक, चातुर्मासिक आदि भेद हैं। तपरूप प्रायश्चित्त से इसका काम बहुत कठिन हैं, क्योंकि छोटे साधु सदा के लिए बड़े बन जाते हैं। जैसे—किसी ने छेदरूप चातुर्मासिक प्रायश्चित्त लिया तो उसकी दीक्षा के बाद चार महीनों में जितने भी व्यक्ति दीक्षित हुए हैं, वे सब सदा के लिए उससे बड़े हो जायेंगे, क्योंकि उसका चार मास का साधुपना काट लिया गया।

(८) **मूलार्ह**—

जिस दोष की शुद्धि चारित्रपर्याय को सर्वथा छेदकर पुनः महाव्रतों के आरोपण से होती है, उसके लिए वैसा करना अर्थात् दुबारा दीक्षा देना **मूलार्ह-प्रायश्चित्त** है [मनुष्य-गाय-भैंस आदि की हत्या, हो जाए ऐसा झूठ, शिष्यादि की चोरी एवं ब्रह्मचर्य-भङ्ग जैसे महान् दोषों का सेवन करने से उक्त प्रायश्चित्त आता है]

(९) **अनवस्थाप्यार्ह**—

जिस दोष की शुद्धि संयम से अनवस्थापित—अलग होकर विशेष तप एवं गृहस्थ का वेष धारकर फिर से नई दीक्षा लेने पर होती है, उसके लिए पूर्वोक्त कार्य करना-**अनवस्थाप्यार्ह-प्रायश्चित्त** है।

(१०)**पाराञ्चिकार्ह—**

जिस महादोष की शुद्धि पाराञ्चिक अर्थात् वेष और क्षेत्र का त्यागकर महातप करने से होती है, उसके लिए वैसा करना **पाराञ्चिकार्ह-प्रायश्चित्त** है।

स्थानाङ्ग ५।१।३९८ में पाराञ्चिक-प्रायश्चित्त के पाँच कारण कहे गए हैं, यथा—

(१) गण में फूट डालना, (२) फूट डालने के लिए तत्पर रहना, (३) साधु आदि को मारने की भावना रखना, (४) मारने के लिए छिद्र देखते रहना, (५) बार-बार असंयम के स्थानरूप सावद्य अनुष्ठान की पूछताछ करते रहना अर्थात् अङ्गुष्ठ-कुड्य आदि प्रश्नों का प्रयोग करना, (इन प्रश्नों से दीवार या अंगूठे में देवता बुलाया जा सकता है।) इन पाँच कारणों के सिवा साध्वी या राजरानी का शीलभङ्ग करने पर भी यह प्रायश्चित्त दिया जाता है। इसकी शुद्धि के लिए छः मास से लेकर बारह वर्ष तक गण, साधुवेष एवं अपने क्षेत्र को छोड़ कर जिनकल्पिक-साधु की तरह कठोर तपस्या करनी पड़ती है एवं उक्त कार्य सम्पन्न होने के बाद नई दीक्षा दी जाती है।

टीकाकार कहता है कि यह महापराक्रमवाले आचार्य को ही दिया जाता है। उपाध्याय के लिए नौवें प्रायश्चित्त तक और सामान्य साधु के लिए आठवें प्रायश्चित्त तक का विधान है।

यह भी कहा गया है कि जब तक चौदह-पूर्वधारी एवं वज्र-ऋषभ-नाराचसंहननवाले साधु होते हैं, तभी तक ये दसों प्रायश्चित्त रहते हैं। उनका विच्छेद होने के बाद केवल आठ प्रायश्चित्त रहते हैं, अस्तु!

१. आ अभिविधिना सकलदोषाणां, **लोचना**-गुरुपुरतः प्रकाशना **आलोचना**। —भगवती २५।७ टीका

मर्यादा में रहकर निष्कपटभाव से अपने सभी दोषों को गुरु के आगे प्रकट कर देने का नाम **आलोचना** है।

२. छत्तीसगुण-समन्नागएण, तेणवि अवस्सकायव्वा।
परसक्खिया विसोहि, सुट्ठु वि ववहारकुसलेण॥
जह सुकुसलो वि विज्जो, अन्नस्स कइ अत्तणो वाहिं।
विज्जुवएसं सुच्चा, पच्छा सो कम्ममायरइ।

—गच्छाचार प्रकीर्णक १२-१३

आचार्य के छत्तीसगुणयुक्त एवं ज्ञान-क्रिया-व्यवहार में विशेष-निपुण मुनि को भी पाप की शुद्धि परसाक्षी से करनी चाहिए। अपने-आप नहीं। जैसे—परमनिपुण वैद्य भी अपनी बीमारी दूसरे वैद्य से कहता है एवं उसके कथानुसार कार्य करता है।

३. आलोयणयाएणं माया - नियाण - मिच्छादंसणसल्लाणं मोक्खमग्ग-विग्घाणं अणंतसंसारवड्ढणाणं उद्धरणं करेइ, उज्जुभावं च जणयइ। उज्जुभावपडिवन्ने वि य णं जीवे। अमाई इत्थीवेयं नपुंसगवेयं च न बंधइ, पुव्वबद्धं च निज्जरेइ। —उत्तराध्ययन २९।५

आलोचना से जीव मोक्षमार्ग-विघातक, अनन्तसंसार-वर्धक—ऐसे माया, निदान एवं मिथ्यादर्शन शल्य को दूर करता है और ऋजु-भाव को प्राप्त करता है। ऋजुभाव से मायारहित होता हुआ स्त्रीवेद और नपुंसकवेद का बन्ध नहीं करता। पूर्वबन्ध की निर्जरा कर देता है।

४. उद्धरियसव्वसल्लो, आलोइय-निंदिओ गुरुसगासे।
होइ अतिरेगलहुओ, ओहरियभारोव्व भारवहो॥

—ओघनिर्युक्ति ८०६

जो साधक गुरुजनों के समक्ष मन के समस्त शल्यों (काँटों) को निकाल कर आलोचना, निन्दा (आत्मनिन्दा) करता है, उसकी आत्मा उसी प्रकार हल्की हो जाती है, जैसे—सिर का भार उतार देने पर भारवाहक।

५. जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं च उज्जयं भवई।
तं तह आलोएज्जा, माया-मयविप्पमुक्को उ॥

—ओघनिर्युक्ति ८०१

बालक जो भी उचित या अनुचित कार्य कर लेता है, वह सब सरलभाव से कह देता है। इसीप्रकार साधक को भी गुरुजनों के समक्ष दंभ और अभिमान से रहित होकर यथार्थ-आत्मा-लोचना करनी चाहिये।

६. आलोयणापरिणाओ, सम्मं संपट्ठिओ गुरुसगासं।
जइ अंतरो उ कालं, करेज्ज आराहओ तह वि॥

—आवश्यकनिर्युक्ति ४

कृतपापों की आलोचना करने की भावना से जाता हुआ व्यक्ति यदि बीच में मर जाए तो भी वह आराधक है।

७. लज्जाए गारवेण य, जे नालोयंति गुरु-सगासंमि।
धतंपि सुय-समिद्धा, न हु ते आराहगा हुंति॥
—मरणसमाधिप्रकीर्णक १०३

लज्जा या गर्व के वश जो गुरु के समीप आलोचना नहीं करते वे श्रुत से अत्यन्त समृद्ध होते हुए भी आराधक नहीं होते।

८. जो साधु आलोचना किए बिना काल कर जाता है, वह आराधक नहीं होता एवं जो साधु कृतपापों की आलोचना करके काल करता है, वह संयम का आराधक होता है।
—भगवती १०।२

२० आलोचना के विषय में विविध

१. आलोचना करने न करने के कारण—

तीन कारणों से व्यक्ति कृतपापों की आलोचना करता है। वह सोचता है कि आलोचना नहीं करने से इहलोक परलोक एवं आत्मा निंदित होते हैं तथा सोचता है कि आलोचना करने से ज्ञान-दर्शन-चरित्र की शुद्धि होती है। तीन कारणों से मायी-पुरुष कृतपापों की आलोचना नहीं करता। वह सोचता है कि मैंने भूतकाल में दोष-सेवन किया है, वर्तमान में कर रहा हूँ और भविष्य में भी किए बिना नहीं रह सकता तथा यह सोचता है कि आलोचना आदि करने से मेरे कीर्ति, यश, एवं पूजा-सत्कार नष्ट हो जायेंगे।

—स्थानाङ्ग ३।३

२. आलोचना कौन करता है ?

दसहिं ठाणेंहि सम्पन्ने अणगारे अरिहइ अत्तदोसे आलोइत्तए, तं जहा—१ जाइसंपन्ने, २ कुलसंपन्ने ३ विणयसंपन्ने ४ णाणसंपन्ने, ५ दंसणसंपन्ने, ६ चरित्तसम्पन्ने, ७ खंते, ८ दंते, ६ अमाई, १० अपच्छाणुतावी।

—भगवती २५।७।७६६ तथा स्थानाङ्ग १०।७४३

दस गुणों से युक्त अनगार अपने दोषों की आलोचना करने योग्य होता है, वे इस प्रकार हैं—

१ **जातिसम्पन्न**– उच्चजातिवाला, यह व्यक्ति, प्रथम तो ऐसा बुरा काम करता ही नहीं, भूल से कर लेने पर वह शुद्धमन से आलोचना कर लेता है।

२ **कुलसम्पन्न**– उत्तमकुलवाला, यह व्यक्ति अपने द्वारा लिए गए प्रायश्चित को नियमपूर्वक अच्छी तरह से पूरा करता है।

३ **विनयसम्पन्न**– विनयवान्, यह बड़ों की बात मानकर हृदय से आलोचना कर लेता है।

४ **ज्ञानसम्पन्न**– ज्ञानवान्, यह मोक्षमार्ग की आराधना के लिए क्या करना चाहिए और क्या नहीं, इस बात को भलीप्रकार समझकर आलोचना कर लेता है।

५ **दर्शनसम्पन्न**– श्रद्धावान्, यह भगवान के वचनों पर श्रद्धा होने के कारण यह शास्त्रों में बताई हुई प्रायश्चित से होने-वाली शुद्धि को मानता है एवं आलोचना कर लेता है।

६ **चारित्रसम्पन्न**– उत्तमचरित्रवाला, यह अपने चारित्र की शुद्ध करने के लिए दोषों की आलोचना करता है।

७ **क्षान्त**– क्षमावान्, यह किसी दोष के कारण गुरु से भर्त्सना या फटकार मिलने पर क्रोध नहीं करता, किन्तु अपना दोष स्वीकार करके आलोचना कर लेता है।

८ **दान्त**– इन्द्रियों को वश में रखनेवाला, यह इन्द्रियों के विषयों में अनासक्त होने के कारण कठोर से कठोर प्राय-श्चित को भी शीघ्र स्वीकार कर लेता है एवं पापों की आलोचना भी शुद्धहृदय से करता है।

९ **अमायी–** माया-कपटरहित, यह अपने पापों को बिना छिपाये खुले दिल से आलोचना करता है।

१० **अपश्चात्तापी–** आलोचना कर लेने के बाद पश्चात्ताप न करनेवाला, यह आलोचना करके अपने आपको धन्य एवं कृतपुण्य मानता है।

२१ आलोचना के दोष

१. दस आलोयणादोस पण्णत्ता, तं जहा—
आकंपयित्ता-अणुमाणइत्ता, जं दिट्ठं बायरं च सुहुमं वा।
छन्नं सद्दाउलयं, बहुजण अव्वत्त तस्सेवी।

—भगवती २५।७।७९५ तथा स्थानाङ्ग १०।७३३

जानते या अजानते लगे हुए दोष को आचार्य या बड़े साधु के सामने निवेदन करके उसके लिए उचित प्रायश्चित्त लेना 'आलोचना' है। आलोचना का शब्दार्थ है, अपने दोषों को अच्छी तरह देखना। आलोचाना के दस दोष हैं अर्थात् आलोचना करते समय दस प्रकार का दोष लगता है यथा—

१ **आकंपयित्ता**—प्रसन्न होने पर गुरु थोड़ा प्रायश्चित्त देंगे, यह सोचकर उन्हें सेवा आदि से प्रसन्न करके फिर उनके पास दोषों की आलोचना करना।

२ **अणुमाणइत्ता**—पहले छोटे से दोष की आलोचना करके, आचार्य कितना-क दण्ड देते हैं, यह अनुमान लगाकर फिर आलोचना करना अथवा प्रायश्चित्त के भेदों को पूछकर दण्ड का अनुमान लगा लेना एवं फिर आलोचाना करना।

३ **दिट्ठं (दृष्ट)**—जिस दोष को आचार्य आदि ने देख लिया हो, उसी की आलोचना करना।

४ **बायरं (स्थूल)**—सिर्फ बड़े-बड़े दोषों की आलोचना करना।

५ **सुहुमं (सूक्ष्म)**—जो अपने छोटे-छोटे अपराधों की भी आलो-

चना करता है, वह बड़े दोषोंको कैसे छिपा सकता है—यह विश्वास उत्पन्न करने के लिए केवल छोटे-छोटे दोषों की आलोचना करना ।

६ **छन्नं (प्रच्छन्न)**—लज्जालुता का प्रदर्शन करते हुए प्रच्छन्नस्थान में आचार्य भी न सुन सके—ऐसी आवाज से आलोचना करना ।

७ **सद्दाउलयं (शब्दाकुल)**—दूसरों को सुनाने के लिए जोर-जोर से बोलकर आलोचना करना ।

८ **बहुजण (बहुजन)**—एक ही दोष की बहुत से गुरुओं के पास आलोचना करना, प्रायः प्रशंसार्थी होकर ऐसा किया जाता है ।

९ **अव्वत्त (अव्यक्त)**—किस अतिचार का क्या प्रायश्चित्त दिया जाता है, इस बात का जिसे ज्ञान नहीं हो, ऐसे अगीतार्थ साधु के पास आलोचना करना ।

१० **तस्सेवी (तत्सेवी)**—जिस दोष की आलोचना करनी हो, उसी दोष को सेवन करनेवाले आचार्यादि के पास, यह सोचते हुए आलोचना करना कि स्वयं दोषी होने के कारण उलाहना न देगा और प्रायश्चित्त भी कम देगा ।

२. प्रतिसेवना के दस प्रकार हैं–

दसविहा पडिसेवणा पण्णत्ता, तं जहा—
दप्प-प्पमाद-ऽणाभोगे, आउरे आवतीति य,
संकिन्ने सहसक्कारे, भय-प्पओसा य वीमंसा ।

–भगवती २५।७ तथा स्थानाङ्ग १०।७३३

पाप या दोषों के सेवन से होनेवाली संयम की विराधना को प्रतिसेवना कहते हैं, यह दर्प आदि दस कारणों से होती है अतः दस प्रकार की कही गई है ।

१. **दर्पप्रतिसेवना**— अंहकार से होने वाली संयम की

विराधना।

२. **प्रमादप्रतिसेवना**—मद्यपान, विषय, कसाय, निद्रा और विकथा—इन पाँच प्रकार के प्रमाद के सेवन से होनेवाली संयम की विराधना।

(३) **अनाभोगप्रतिसेवना**– अज्ञान के वश होनेवाली संयम की विराधना।

(४) **आतुरप्रतिसेवना**– भूख, प्यास आदि किसी पीड़ा से व्याकुल होकर की गई संयम की विराधना।

(५) **आपत्प्रतिसेवना**– किसी आपत्ति के आने पर संयम की विराधना करना। आपत्ति चार प्रकार की होती है :–

(क) **द्रव्यापत्ति**– प्रासुक आहारादि न मिलना।

(ख) **क्षेत्रापत्ति**-- अटवी आदि भयंकर जंगल में रहना पड़े।

(ग) **कालापत्ति**-- दुर्भिक्ष आदि पड़ जाए।

(घ) **भावापत्ति**-- बीमार हो जाना, शरीर का अस्वस्थ होना।

(६) **संकीर्णप्रतिसेवना**– स्वपक्ष एवं परपक्ष से होनेवाली जगह की तंगी के कारण समय का उल्लंघन करना अथवा **सङ्कित-प्रतिसेवना** ग्रहण करने योग्य आहार आदि में किसी दोष की शङ्का होजाने पर भी उसे ले लेना।

(७) **सहसाकारप्रतिसेवना**– अकस्मात् अर्थात् बिना सोचे-समझे किसी अनुचित काम को कर लेना।

(८) **भयप्रतिसेवना**- भय से संयम की विराधना करना, जैसे-

लोकनिन्दा एवं अपमान से डरकर झूठ बोल जाना, संयम को छोड़ कर भाग जाना और आत्महत्या आदि कर लेना।

(९) **प्रद्वेषप्रतिसेवना-** किसी के प्रद्वेष या ईर्ष्या से (झूठा कलङ्क आदि लगाकर) संयम की विराधना करना। यहाँ प्रद्वेष से क्रोधादि चारों कषायों का ग्रहण किया गया है।

(१०) **विमर्शप्रतिसेवना-** शिष्यादि की परीक्षा के लिए (उसे धमकाकर या उस पर झूठा आरोप लगाकर) की गई विराधना।

इस प्रकार दस कारणों से चारित्र में दोष लगता है। इनमें से दर्प, प्रमाद और द्वेष के कारण जो दोष लगाए जाते हैं, उनमें चारित्र के प्रति उपेक्षा का भाव और विषय-कषाय की परिणति मुख्य है। भय, आपत्ति और संकीर्णता में चारित्र के प्रति उपेक्षा तो नहीं, किन्तु परिस्थिति की विषमता-संकटकालीन अवस्था को पारकर उत्सर्ग की स्थिति पर पहुँचने की भावना है। अनाभोग और अकस्मात् में तो अनजानेपन से दोष का सेवन हो जाता है और विमर्श में चाहकर दोष लगाया जाता है। यह भावी हिताहित को समझने के लिए है। इसमें भी चारित्र की उपेक्षा नहीं होती।

(३) **आलोचनादाता के आठ गुण—**

अट्ठहिं ठाणेहिं सम्पन्ने अणगारे अरिहइ आलोयणं पडिच्छ-

त्ताए, तंजहा-आयारवं, आहारवं, ववहारवं, उव्वीलए, पकुव्वए, अपरिस्सावी निज्जवए अवायदंसी।

—भगवती २५।७ तथा स्थानाङ्ग ८।६०४

आठ गुणों से युक्त साधु आलोचना सुनने के योग्य होता है—

(१) **आचारवान्**—ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तप-आचार, एवं वीर्याचार, जो इन पाँचो आचारों से सम्पन्न हो।

(२) **आधारवान्**—(अवधारणावान्) -आलोचक के बतलाए हुए दोषों को बराबर याद रख सकनेवाला हो, क्योंकि गम्भीर अतिचारों को दो या तीन बार सुना जाता है एवं आगमानुसार उनका प्रायश्चित्त दिया जाता है। प्रायश्चित्त देते समय आलोचनादाता को आलोचक के दोषों का स्मरण बराबर रहना चाहिए ताकि प्रायश्चित्त कम-ज्यादा न दिया जाए।

(३) **व्यवहारवान्**—आगम आदि पाँचों व्यवहारों का ज्ञाता एवं उचित विधि से प्रवर्तनकर्ता हो। मोक्षाभिलाषी आत्माओं की प्रवृत्ति-निवृत्ति को एवं तत्कारणभूत ज्ञान-विशेष को व्यवहार कहते हैं।

—स्थानाङ्ग ५।३।४२१ में

व्यवहार के पाँच भेद किए गए हैं—(१) आगम-व्यवहार, (२) श्रुत-व्यवहार, (३) आज्ञा-व्यवहार, (४) धारणा-व्यवहार, (५) जीत-व्यवहार।[1]

---

१. लेखक द्वारा लिखी पुस्तक **'मोक्ष प्रकाश'** पुंज १० प्रश्न ६ में इसका विस्तृत विवेचन देखिए।

(४) **अप्रवीड़क**- लज्जावश अपने दोषों को छिपानेवाले शिष्य की मधुर वचनों से लज्जा दूर करके अच्छी तरह आलोचना करानेवाला हो।

(५) **प्रकुर्वक**- आलोचित अपराध का तत्काल प्रायश्चित्त देकर अतिचारों की शुद्धि कराने में समर्थ हो। तत्त्व यह है कि प्रायश्चित्तदाता को प्रायश्चित्तविधि पूरी तरह याद होनी चाहिए। अपराधी के मांगने के बाद प्रायश्चित्त देने में विलम्ब करना निषिद्ध है।

(६) **अपरिस्रावी**—आलोचना करनेवाले के दोषों को दूसरे के सामने प्रकट नहीं करनेवाला हो। शास्त्रीय विधान है कि यदि आलोचनादाता आलोचना के दोषों को दूसरों के सामने कह देता है तो उसे उतना ही प्रायश्चित्त आता है, जितना उसने आलोचनाकर्ता को दिया था।

(७) **निर्यापक**—अशक्ति या और किसी कारणवश एक साथ पूरा प्रायश्चित्त लेने में असमर्थ साधु को थोड़ा-थोड़ा प्रायश्चित्त देकर उसका निर्वाह करनेवाला हो।

(८) **अपायदर्शी**- आलोचना करने में संकोच करनेवाले व्यक्ति को आगमानुसार परलोक का भय एवं अन्य दोष दिखाकर उसे आलोचना लेने का इच्छुक बनाने में निपुण हो।

४. आलोचना किसके पास ?

आलोचना सर्वप्रथम अपने आचार्य-उपाध्याय के पास

करनी चाहिए, वे न हों तो अपने सांभोगिक **बहुश्रुतसाधु** के पास, उनके अभाव में समानरूपवाले बहुश्रुतसाधु के पास, उनके अभाव में पच्छाकड़ा (जो संयम से गिरकर श्रावकव्रत पाल रहा है, किन्तु पूर्वकाल में संयम पाला हुआ होने से उसे प्रायश्चित्तविधि का ज्ञान है—ऐसे) श्रावक के पास एवं उनके अभाव में जिनभक्त बहुश्रुत यक्षादि देवों के पास अपने दोषों की आलोचना करनी चाहिए। भावी-वश इनमें से कोई भी न मिले तो ग्राम या नगर के बाहर जाकर पूर्व-उत्तरदिशा (ईशानकोण) में मुख करके विनम्र-भाव से अपने अपराधों को स्पष्टरूप से बोलते हुए अरि-हन्त-सिद्ध भगवान की साक्षी से अपने आप प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाना चाहिए।

—व्यवहार उ० १ बोल ३४ से ३६

५. आलोचना के भेद—

(क) एक्केक्का चउकन्ना दुवग्ग-सिद्धावसाणा।

—ओघनिर्युक्ति गाथा १२

आलोचना के अनेक भेद हैं—जैसे चतुष्कर्णा, षट्कर्णा एवं अष्टकर्णा।

यदि साधु-साधु से या साध्वी-साध्वी से आलोचना करे तो वह आलोचना चतुष्कर्णा **चार कानोंवाली** होती है, क्योंकि तीसरा व्यक्ति उनके पास नहीं होता।

यदि साध्वी स्थविर साधु के पास आलोचना करे तो उस साध्वी के साथ ज्ञानदर्शन-सम्पन्न एवं प्रौढ़वयवाली एक

साध्वी अवश्य रहती है, अतः तीन व्यक्ति होने से यह आलोचना षट्कर्णा। **छः कानोंवाली** कहलाती है। यदि आलोचना करानेवाला साधु युवा-जवान हो तो उसके निकट प्रौढ़वयवाला एक साधु भी अवश्य रहता है। अतः दो साधु और दो साध्वियों के समक्ष होने से यह आलोचना अष्टकर्णा **आठ कानोंवाली** मानी जाती है। [यह विवेचन गम्भीर दोषों की अपेक्षा से समझना चाहिए]

(यह विवेचन बृहत्कल्पभाष्य गाथा ३९५, ३९६ के आधार पर किया गया है।)

[ख] चेयणमचित्तं दव्वं, जणवय सद्धाणे होइ खेत्तंमि।
दिण-निसि सुभिक्ख-दुभिक्ख, काले भावंमि हेट्ठियरे॥

द्रव्यादि की अपेक्षा से आलोचना के चार प्रकार हैं —

द्रव्य से—अकल्पनीयद्रव्य का सेवन किया हो—फिर वह चाहे अचित्त हो, सचित्त हो या मिश्र हो।

क्षेत्र से—ग्राम, नगर, जनपद व मार्ग में दोषसेवन किया हो।
काल से—दिन - रात में या दुर्भिक्ष - सुभिक्ष में दोषसेवन किया हो।

भाव से—प्रसन्न-अप्रसन्न, अहंकार एवं ग्लानि आदि किसी भी परिस्थिति में दोषसेवन किया हो। सभी प्रकार के दोषों की आलोचना करके शुद्ध बन जाना चाहिए।

६. **मिच्छामि दुक्कडं**—

'मि' त्ति मिउ - मद्दवत्ते
'छ' त्ति दोसाणछादणे होइ।

'मि' त्ति य मेराइठिओ,
'**दु**' त्ति दुगंछामि अप्पाणं ॥६८६॥
'क' त्ति कडं मे पावं,
'ड' त्ति डेवेमि तं उवसमेणं।
एसो 'मिच्छादुक्कड'-
पयक्खरत्थो समासेणं ॥६८७॥

—आवश्यकनिर्युक्ति

'नामैकदेशे नामग्रहणम', इस न्याय के अनुसार 'मि' कार मृदुता-कोमलता तथा अहंकार रहित होने के लिए है। 'छ' कार दोषों को त्यागने के लिए है। 'दु' कार पापकर्म करनेवाली अपनी आत्मा की निन्दा के लिए है। 'क' कार कृत-पापों की स्वीकृति के लिए है। और 'ड' कार उन पापों का उपशमन करने के लिए है—यह 'मिच्छामिदुक्कडं' पद के अक्षरों का अर्थ है।

१. समणेण सावएण य, अवस्स कायव्वं हवइ जम्हा ।
अंतो अहोनिसस्स य, तम्हा आवस्सयं नाम ।।

—अनुयोगद्वार आवश्यकाधिकार

दिन-रात की संधि के समय साधु-श्रावक को यह अवश्य करना होता है । इसलिए इसका नाम **आवश्यक** है ।

२. जे भिक्खू कालाइक्कमेण वेलाइक्कमेण समयाइक्कमेणं आलसायमाणे आणोवओगे पमत्ते अविहीए अन्नेसिं व असड्ढं उप्पायमाणो अन्नयरमावस्सगं पमाइयसं........ सेणंगोयमा ! महापायच्छित्ती भवेज्जा ।

—महानिशीथष्य अ. ७

जो भिक्षु आवश्यक-सम्बंधी काल, वेला एवं समय का अतिक्रमण करके आलस्य, उपयोगशून्यता, प्रमाद और अविधि के सेवन द्वारा अन्य साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाओं में अश्रद्धा उत्पन्न करता हुआ छः आवश्यकों में से किसी एक आवश्यक को भी यदि प्रमाद-वश नही करता तो हे गौतम ! वह महाप्रायश्चित्त का भागी होता है ।

३. आवस्सयं चउव्विहं पण्णत्तं, तं जहा—
नामावस्सयं, ठवणावस्सयं, दव्वावस्सयं, भावावस्सयं ।

—अनुयोगद्वार आवश्यकाधिकार

आवश्यक चार प्रकार का कहा है—

१ नाम-आवश्यक, २ स्थापना-आवश्यक, ३ द्रव्य-आवश्यक
४ भाव-आवश्यक।

प्रतिक्रमण—

४. स्वस्थानाद् यत् परं स्थानं, प्रमादस्य वशाद् गतः।
तत्रैव क्रमणं भूयः, प्रतिक्रमणमुच्यते ॥
क्षायोपशमिकाद् भावा-दौदयिकस्य वशं गतः।
तत्रापि च स एवार्थः प्रतिकूलगमात् स्मृतः ॥

—आवश्यक. ४

प्रमादवश अपने स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान—हिंसा आदि में गये हुए आत्मा का लौटकर अपने स्थान—आत्मगुणों में आ जाना **प्रतिक्रमण** है तथा क्षायोपशमिकभाव से औदयिकभाव में गये हुये आत्मा का पुनः मूलभाव में आजाना **प्रतिक्रमण** है।

५. पंचविहे पडिक्कमणे, पण्णत्ते, तं जहा—आसवदार-पडिक्कमणे, मिच्छत्तपडिक्कमणे, कसायपडिक्कमणे, जोगपडिक्कमणे, भावपडिक्कमणे।

—स्थानाङ्ग ५।३।४६७
तथा आवश्यक हरिभद्रीय अ. ४

पाँच प्रकार का प्रतिक्रमण कहा है—

१. **आसवद्वार**—हिंसाआदि का प्रतिक्रमण २. **मिथ्यात्व-प्रतिक्रमण** ३. **कषाय**—क्रोधादिका प्रतिक्रमण ४. **योग**—अशुभयोगों का प्रतिक्रमण ५. **भाव-प्रतिक्रमण** ("मिच्छामि दुक्कडं" बोलकर पुनः वही दुष्कृत्य करते रहना **द्रव्य-प्रतिक्रमण** है और दुबारा उसका सेवन न करना **भाव-प्रतिक्रमण** है।)

६. पडिसिद्धाणं करणे, किच्चाणमकरणे पडिक्कमणं,
असद्दहणे य तहा, विवरीय परूवणाए य।
—आवश्यक निर्युक्ति १२६८

हिंसादि निषिद्ध कार्य करने का, स्वाध्याय प्रतिलेखनादि कार्य न करने का, तत्वों में अश्रद्धा उत्पन्न होने का एवं शास्त्र-विरुद्ध प्ररूपणा करने का प्रतिक्रमण किया जान चाहिए।

७. पडिक्कमणेणं वयछिद्दाणि पीहेइ। —**उत्तराध्ययन २९।१**

प्रतिक्रमण करने से जीव व्रतों के छिद्रों को ढंक देता है।

८. सपडिक्कमणो धम्मो, पुरिमस्स पच्छिमस्स य जिणस्स।
मज्झिमयाण जिणाणं, कारणजाए पडिक्कमणं ॥२४७॥
गमणागमण-वियारे, सायं पाओ य पुरिम-चरिमाणं।
नियमेण पडिक्कमणं, अइयारो होइ वा मा वा ॥३४८॥
—बृहत्कल्पभाष्य-६

प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों का सप्रतिकमण धर्म है। मध्यम-बाइस तीर्थंकरों के समय स्खलना होने पर प्रतिक्रमण करने का विधान है। प्रथम अन्तिम तीर्थंकरों के साधुओं के गमन-आगमन में एवं उच्चार आदि परठने में चाहे स्खलना हो या न हो, उन्हें सुबह-शाम षडावश्यकरूप प्रतिक्रमण अवश्य करना ही चाहिए।

वैदिक संध्या—

९. ओउम् सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या [यदह्ना] पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पदभ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु यत् किञ्चिद् दुरितं मयि इदमहमापोऽमृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ॥ **—नित्यकर्म विधि पृष्ठ ३२**

हे सूर्यनारायण ! यक्षपति और देवताओं मेरी प्रार्थना है कि यक्ष विषयक तथा क्रोध से किए हुए पापों से मेरी रक्षा करें ! दिन-रात्रि में मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्न-लिङ्ग से जो पाप हुए हों, उन पापों को मैं अमृतयोनि सूर्य में होम करता हूँ। इसलिए उन पापों को नष्ट करें !

संध्या के तीन अर्थ हैं–

१ उत्तम प्रकार से परमेश्वर का ध्यान करना।

२ परमेश्वर से मेल करना।

३ दिन-रात की संधि में किया जानेवाला कर्म।

वैयावृत्त्य

१. वैयावृत्त्यम्-भक्तादिभिर्धर्मोपग्रहकारिवस्तुभिरुपग्रह-करणे

—स्थानांग ५।१ टीका

धर्म में सहारा देनेवाली आहार आदि वस्तुओं द्वारा उपग्रह-सहायता करने के अर्थ में **वैयावृत्त्य** शब्द आता है।

(वैयावृत्त्य अर्थात् सेवा)

२. दसविहे वेयवच्चे पण्णत्ते, तं जहा— १ आयरिमवेयावच्चे, २ उवज्झायवेयावच्चे, ३ थेरवेयावच्चे, ४ तवस्सिवेयावच्चे, ५ गिलाणवेयावच्चे ६ सेहवेयावच्चे ७ कुलवेयावच्चे ८ गणवेयावच्चे ९ संघवेयावच्चे १० साहम्मियवेयावच्चे।

—स्थानांग १०।४४९

दस प्रकार की वैयावृत्त्य कही है— १ आचार्य की वैयावृत्त्य, २ उपाध्याय की वैयावृत्त्य, ३ स्थविर की वैयावृत्त्य, ४ तपस्वी की वैयावृत्त्य, ५ ग्लानमुनि की वैयावृत्त्य, ६ नवदीक्षित मुनि की वैयावृत्त्य, ७ कुल [एक आचार्य की संतति या चन्द्र आदि साधु समुदाय] की वैयाबृत्त्य, ९ संघ [गणों का समूह] की वैयावृत्त्य, १० साधर्मिक-साधु की वैयावृत्त्य।

३. भत्ते पाणे सयणासणे (य), पडिलेह-पायमच्छि मद्धाणे।
राया तेणे दंड-गाहे गेलन्नमत्ते य।

—व्यवहारभाष्य ३। १० गा० १२

आचार्य आदि को—१ आहार देना, २ पानी देना, ३ शय्या देना, ४ आसन देना, ६ उनका पडिलेहण करना, ५ पांव पूंछना, ७ नेत्ररोगी हों तो औषध-भेषज लाकर देना, ८ मार्ग में (विहार-आदि के समय) सहारा देना, ९ राजा के क्रुद्ध होने पर उनकी रक्षा करना, १० चोर आदि से उन्हें बचाना, ११ अतिचार-सेवन कर के आएं हों तो उन्हें दण्ड देकर शुद्ध करना, १२ रोगी हों तो उनके लिए आवश्यक वस्तुओं का संपादन करना, १३ लघुशङ्का-निवाणार्थ पात्र उपस्थित करना।

उपर्युक्त १३ प्रकार से आचार्य आदि की वैयावृत्त्य की की जाती है।

(४) वेयावच्चेणं तित्थयरनाम गोयं कम्मं निबंधेइ।

—उत्तराध्ययन २९। ३

आचार्यादि की वैयावृत्त्य करने से जीव तीर्थंकर नाम-गोत्रकर्म का उपार्जन करता है।

(५) जे भिक्खू गिलाणं सोच्चा णच्चा न गवेसइ,
न गवेसंतं वा साइज्जइ........आवज्जइ
चउम्मासियं परिहारठाणं अणुग्घाइयं।

—निशीथभाष्य १०।३७

यदि कोई समर्थ साधु किसी साधु को बीमार सुनकर एवं जानकर बेपरवाही से उसकी सार-संभाल न करे तथा न करनेवाले की अनुमोदना करे तो उसे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आता है।

दूसरा कोष्ठक

१ ध्यान

१. ध्यानं तु विषये तस्मि-न्नेकप्रत्ययसंततिः ।

—अभिधानचिन्तामणि १।८४

ध्येय में एकाग्रता का हो जाना **ध्यान** है ।

२. चितस्सेगग्गया हवइ झाणं । **—आवश्यकनिर्युक्ति १४५६**

किसी एक विषय पर चित्त को एकाग्र-स्थिर करना **ध्यान** है ।

३. एकाग्रचिन्ता योगनिरोधो वा ध्यानम् ।

—जैनसिद्धान्तदीपिका ५।२८

एकाग्रचिन्तन एवं मन-वचन-काया की प्रवृत्तिरूप योगों को रोकना **ध्यान** है ।

४. उपयोगे विजातीय-प्रत्ययाव्यवधानभाक् ।
शुत्रैकप्रत्ययो ध्यानं, सूक्ष्याभोगसमन्वितम् ।

—द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशका १८।११

स्थिर दीपक की लौ के समान मात्र शुभलक्ष्य में लीन और विरोधी लक्ष्य के व्यवधानरहित ज्ञान, जो सूक्ष्म विषयों के आलोचनसहित हो, उसे **ध्यान** कहते हैं ।

५. मुहूर्तान्तर्मनः स्थैर्यं, ध्यानं छद्मस्थ-योगिनाम् ।

—योगशास्त्र ४।११५

अन्तर्मुहूर्त तक मन को स्थिर रखना छद्मस्थयोगियों का ध्यान है।

६. स्वात्मानं स्वात्मनि स्वेन, ध्याते स्वस्मै स्वतो यतः।
षट्कारकमयस्तस्माद्, ध्यानमात्मैव निश्चयात्।

—तत्त्वानुशासन ७४

आत्मा का आत्मा में, आत्मा द्वारा, आत्मा के लिए, आत्मा से ही ध्यान करना चाहिए। निश्चयनय में षट्कारकमय-यह आत्मा ही ध्यान है।

७. निश्चयाद् व्यवहाराच्च, ध्यानं द्विविधमागमे।
स्वरूपालम्बनं पूर्वं, परालम्बनमुत्तरम्।

—तत्त्वानुशासन ९६

निश्चयदृष्टि से और व्यवहारदृष्टि से ध्यान दो प्रकार का है। प्रथम में स्वरूप का आलम्बन है एवं दूसरे में परवस्तु का आलम्बन है।

८. **ध्यानमुद्रा--**

अन्तश्चेतो बहिश्चक्षु-रधःस्थाप्य सुखासनम्।
समत्वं च शरीरस्य, ध्यानमुद्रेति कथ्यते।

—गोरक्षाशतक-६५

चित्त को अन्तर्मुखी बनाकर, दृष्टि को नीचे की ओर नाशाग्र पर स्थापित करके सुखासन से बैठना तथा शरीर को सीधा रखना **ध्यानमुद्रा** कहलाती है।

९. **खेचरीमुद्रा:--**

कपालकुहरे जिह्वा, प्रविष्टा विपरीतगा।
भ्रुवोरन्तर्गता दृष्टि-र्मुद्रा भवति खेचरी।

न रोगो मरणं तस्य, न निद्रा न क्षुधा तृषा।
न च मूर्च्छा भवेत्तस्य, मुद्रां यो वेत्ति खेचरीम्।

—गोरक्षाशतक ६६-६७

जीभ को उलटकर कपालकुहर-तालु में लगाना और दृष्टि को दोनों भौहों के बीच में स्थापित करना **खेचरीमुद्रा** होती है। जो खेचरीमुद्रा को जानता है, वह न बीमार होता, न मरता, न सोता, न उसे भूख-प्यास लगती और न ही मूर्च्छा उत्पन्न होती।

१०. **ध्यान के आलम्बन भूत सात कमल-चक्र --**

चतुर्दलं स्यादाधारं, स्वाधिष्ठानं च षड्दलम्,
नाभौ दशदलं पद्मं, सूर्यसंख्यादलं हृदि।
कण्ठे स्यात् षोडशदलं, भ्रूमध्ये द्विदलं तथा।
सहस्रदलमाख्यातं, ब्रह्मरन्ध्रे महापथे।

ध्यान करने के लिए सात कमलरूप चक्रों की कल्पना भी की गई है। उनका रहस्य समझने के लिए पृष्ठ ७० के चार्ट को देखें!

सात कमल रूप चक्र—

	नाम	स्थान	वर्ण	पंखुड़ियाँ	अक्षर (पँखुड़ियों पर अक्षरों की स्थापना)
१.	मूलाधारचक्र	गुदा	अग्निवर्ण	४	बं. शं. षं. सं.
२.	स्वधिष्ठानचक्र	लिंगमूल	सूर्यवर्ण	६	बं. भं. मं. यं. रं. लं.
३.	मणिपूरकचक्र	नाभि	रक्तवर्ण	१०	डं. दं. णं. तं. थं. दं. धं. नं. पं. फं.
४.	अनाहतचक्र	हृदय	सुवर्णवर्ण	१२	कं. खं. गं. घं. ङं. चं. छं. जं. झं. ञं. टं. ठं.
५.	विशुद्धिचक्र	कण्ठ	चन्द्रवर्ण	१६	अ. आ. इ. ई. उ. ऊ. ऋ. ॠ. लृ. ल. ए. ऐ ओ औ अं अः
६.	आज्ञाचक्र	भ्रूमध्य	लालवर्ण	२	ह्व क्षं
७.	ब्रह्मरंध्रचक्र	दशमद्वार	स्फटिकवर्ण	१०००	निरंतर सच्चिदानन्द ज्योतिस्वरूप

● निर्दिष्ट स्थानों में कमल-चक्रों की अग्नि आदि वर्णमय कल्पना करके उपरोक्त पंखुड़ियाँ बनानी चाहिए एवं उनपर निर्दिष्ट अक्षरों का ध्यान करना चाहिए।

नोट— १ अथर्ववेद १०/२/३१ में आठचक्रों का कथन है, वहाँ जिह्वामूल में एक **ललनाचक्र** अधिक कहा गया है।

२ ध्यान सम्बन्धी विशेष जानकारी के लिए लेखक द्वारा लिखी पुस्तक **मनोनिग्रह के दो मार्ग** देखिए।

११. ध्यान के आलम्बनरूप चार ध्येय—

[क] पिण्डस्थं च पदस्थं च, रूपस्थं रूपवर्जितम् ।
चतुर्धा ध्येयमाम्नातं, ध्यानस्यालम्बनं बुधैः ।

—योगशास्त्र ७।८

ज्ञानी-पुरुषों ने ध्यान के आलम्बनरूप ध्येय को चार प्रकार का माना है–१. पिण्डस्थ, २. पदस्थ, ३. रूपस्थ, ४. रूपातीत ।

[ख] पार्थिवी स्यादथाग्नेयी, मारुती वारुणी तथा ।
तत्त्वभूः पञ्चमी चेति, पिण्डस्थे पञ्चधारणाः ।

—योगशास्त्र ७।९

पिण्डस्थ अर्थात् शरीर में विद्यमान आत्मा । उसके आलम्बन से जो ध्यान किया जाता है, वह **पिण्डस्थध्यान** है । उसकी पाँच धारणाएं हैं– १. पार्थिवी, २. आग्नेयी, ३. मारुती, ४. वारुणी, ५. तत्त्वभू[1] ।

[ग] यत्पदानि पवित्राणि, समालम्ब्य विधीयते ।
तत्पदस्थं समाख्यातं, ध्यानं सिद्धान्तपारगैः ।

—योगशास्त्र ८।१

ध्येय में चित्त को स्थिररूप से बाँध लेने का नाम **धारणा** है । पवित्रमन्त्राक्षर आदि पदों का अवलम्बन करके जो ध्यान किया जाता है, उसे सिद्धान्त के पारगामी पुरुष **पदस्थध्यान** कहते हैं ।

[घ] अर्हतो रूपमालम्ब्य, ध्यानं रूपस्थमुच्यते ।

—योगशास्त्र ९।७

---

१ धारणा तु क्वचिद् ध्येये, चित्तस्य स्थिरबन्धनम्

—अभिधानचिन्तामणि १।८४

अरिहंत भगवान के रूप का सहारा लेकर जो ध्यान किया जाता है। उसे **रूपस्थध्यान** कहते हैं।

[ङ] निरञ्जनस्य सिद्धस्य, ध्यानं स्याद्रूपवर्जितम्।

—योगशास्त्र १०।१

निरञ्जन सिद्ध भगवान का ध्यान **रूपातीतध्यान** है।

१२. ध्यान की सामग्री—

संगत्यागः कषायाणां, निग्रहो व्रतधारणम्।
मनोऽक्षाणां जयश्चेति, सामग्री ध्यानजन्मनि।

—तत्त्वानुशासन ७५

परिग्रह का त्याग, कषाय का निग्रह, व्रतधारण करना तथा मन और इन्द्रियों को जीतना—ये सब कार्य ध्यान की उत्पत्ति में सहायता करनेवाली सामग्री है।

१३. ध्यान के हेतु—

वैराग्यं तत्वविज्ञानं, नैर्ग्रन्थ्यं समचित्तता।
परिग्रह जयश्चेति, पञ्चैते ध्यानहेतवः॥

वृहद्द्रव्यसंग्रह संस्कृतटीका, पृ० २८१

१. वैराग्य, २. तत्त्वविज्ञान, ३. निर्गन्थता, ४. समचित्तता, ५. परिग्रहजय–ये पाँच ध्यान के हेतु हैं।

१४. चार ध्यान एवं धर्म ध्यान के भेद-प्रभेद—

चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तं जहा—अट्टे झाणे, रोद्दे झाणे धम्मेझाणे सुक्के झाणे।

धम्मे झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—आणाविजए आवायविजए विवागविजए संठाणविजए।

धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पण्णत्ता तं जहा—

वायणा, पडिपुच्छणा, परियट्टणा, अणुप्पेहा, धम्मकहा

धम्मस्स णं भाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तं जहा—
आणारुई, णिसग्गरुई, सुत्तरुई ओगाढरुई।

धम्मस्स णं भाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ–
पण्णत्ताओ तं जहा—
एगाणुप्पेहा, अणिच्चाणुप्पेहा, असरणाणुप्पेहा
संसाराणुप्पेहा। —स्थानाङ्ग ४।१।२४७

चार ध्यान कहे हैं– १. आर्तध्यान, २. रौद्रध्यान, ३. धर्मध्यान, ४. शुक्लध्यान।

धर्मध्यान के चार प्रकार हैं– १. आज्ञाविचय, २. अपायविचय, ३. विपाकविचय, ४. संस्थानविचय

धर्मध्यान के चार आलम्बन कहे हैं– १. वांचन, २. प्रतिपृच्छा, ३. अनुप्रेक्षा, ४. धर्मकथा।

धर्मध्यान के चार लक्षण हैं– १. आज्ञारुचि, २. निसर्गरुचि, ३. सूत्ररुचि, ४. अवगाढ़रुचि।

धर्मध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं हैं– १. एकत्वानुप्रेक्षा, २. अनित्यानुप्रेक्षा, ३. अशरणानुप्रेक्षा, ४; संसारानुप्रेक्षा।

२ ध्यान से लाभ

१. मोक्षः कर्मक्षयादेव स, चात्मज्ञानतो भवेत् ।
ध्यानसाध्यं मतं तच्च, तद्ध्यानं हितमात्मनः ।

—योगशास्त्र ४।११३

कर्म के क्षय से मोक्ष होता है, आत्मज्ञान से कर्म का क्षय होता है और ध्यान से आत्मज्ञान प्राप्त होता है। अतः ध्यान आत्मा के लिए हितकारी माना गया है।

२. झाणणिलीणो साहू, परिचागं कुणइ सव्वदोसाणं ।
तम्हा दुझाणमेव हि, सव्वदिचारस्स पडिक्कमणं ॥

— नियमसार ९३

ध्यान में लीन हुआ साधक सब दोषों का निवारण कर सकता है। इसलिए ध्यान ही समग्र अतिचारों (दोषों) का प्रतिक्रमण है।

३. ध्यानयोगरतो भिक्षुः प्राप्नोति परमां गतिम् ।

—शंखस्मृति

ध्यान-योग में लीन मुनि मोक्षपद को प्राप्त करता है।

४. वीतरागो विमुच्येत, वीतरागं विचिन्तयन् ।

—योगशास्त्र ९।१३

ध्यान करता हुआ योगी स्वयं वीतराग होकर कर्मों से या वासनाओं से मुक्त हो जाता है।

५. ध्यानाग्नि–दग्धकर्मा तु, सिद्धात्मा स्यान्निरञ्जनः ।

—योगशास्त्र

शुक्लध्यानरूप अग्नि से कर्मों को जला देनेवाला व्यक्ति सिद्ध भगवान् बन जाता है।

६. काउस्सग्गेणं तीयपडुप्पन्नपायच्छित्तं विसोहेइ विसुद्धपायच्छित्तो य जीवे निव्वुयहियए ओहरियभारुव्व भारवाहे पसत्थज्झाणोवगए सुहं सुहेणं विहरइ।

—उत्तराध्ययन २९।१२

कायोत्सर्ग (ध्यान अवस्था में समस्त चेष्टाओं का परित्याग) करने से जीव अतीत एव वर्तमान के दोषों की विशुद्धि करता है और विशुद्ध-प्रायश्चित्त होकर सिर पर से भार के उतर जाने से एक भारवाहकवत् हल्का होकर सद्ध्यान में रमण करता हुआ सुखपूर्वक विचरता है।

३ ध्याता (ध्यान करनेवाला)

१. यस्य चित्तं स्थिरीभूतं, स हि ध्याता प्रशस्यते ।

—ज्ञानार्णव पृ० ८४

जिसका चित्त स्थिर हो, वही ध्यान करनेवाला प्रशंसा के योग्य है ।

२. जितेन्द्रियस्य धीरस्य, प्रशान्तस्य स्थिरात्मनः ।
सुखासनस्य नाशाग्र-न्यस्तनेत्रस्य योगिनः ॥

—ध्यानाष्टक ६

जो योगी जितेन्द्रिय है, धीर है, शान्त है, स्थिरआत्मावाला है, वह ध्यान करने के योग्य होता है ।

३. ध्याता ध्यानं फलं ध्येयं, यस्य यत्र यदा यथा ।
इत्येतदत्र बोद्धव्यं, ध्यातुः कामेन योगिना ॥

—तत्त्वानुशासन ३७

ध्यान के इच्छुक योगी को योग के आठ अंगों को अवश्य जानना चाहिए, यथा—

१ **ध्याता**—इन्द्रिय और मन का निग्रह करने वाला ।

२ **ध्यान**—इष्टविषय में लीनता ।

३ **फल**—संवर-निर्जरारूप ।

४ **ध्येय**—इष्टदेवादि ।

५ **यस्य**—ध्यान का स्वामी ।

६ **यत्र**—ध्यान का क्षेत्र।

७ **यदा**—ध्यान का समय।

८ **यथा**—ध्यान की विधि।

४. मा मुज्झह ! मा रज्जह ! मा दुस्सह ! इट्ठ निट्ठअट्ठेसु।
थिरमिच्छह जइ चित्तं, विचित्तझारगा-पसिद्धीए।
मा चिट्ठह ! मा जंपह! मा चिंतह! किं वि जेरग होइ थिरो।
अप्पा अप्पंमि रओ, इरगमेव परं हवे झारगं !

—द्रव्यसंग्रह

हे साधक ! विचित्र ध्यान की सिद्धि से यदि चित्त को स्थिर करना चाहता है, तो इष्ट-अनिष्ट पदार्थों में मोह, राग और द्वेष मतकर !

किसी भी प्रकार की चेष्टा, जल्पन व चिन्तन मत कर, जिससे मन स्थिर हो जाये। आत्मा का आत्मा में रक्त हो जाना ही उत्कृष्ट ध्यान है।

५. ध्यानमेकाकिना द्वाभ्यां, पठनं गायनं त्रिभिः।
चतुर्भिर्गमनं क्षेत्रं पञ्चभिर्बहुभी रणम्॥

—चाणक्यनीति ४।१२

ध्यान अकेले का, पढ़ना दो का, गाना तीनों का, चलना चारों का, खेती करना पाँचों का और युद्ध बहुत व्यक्तियों का अच्छा माना गया है।

४ स्वाध्याय-ध्यान की प्रेरणा

१. स्वाध्यायाद् ध्यानमध्यास्तां, ध्यानात् स्वाध्यायमामनेत् ।
ध्यान स्वाध्यायसंपत्त्या, परमात्मा प्रकाशते ।।८१।।
यथाभ्यासेन शास्त्राणि, स्थिराणि सुमहान्त्यपि ।
तथाध्यानपिस्थैर्यं, लभतेऽभ्यासवर्तिनाम् ।।८२।।

—तत्त्वानुशासन

स्वाध्याय से ध्यान का अभ्यास करना चाहिए और ध्यान सेस्वाध्याय को चरितार्थ करना चाहिए स्वाध्याय एवं ध्यान की संप्राप्ति से परमात्मा प्रकाशित होता है–अर्थात् अपने अनुभव में लाया जाता है । अभ्यास से जैसे महान् शास्त्र स्थिर हो जाते हैं, उसी प्रकार अभ्यास करने वालों का ध्यान स्थिर हो जाता है ।

२. जपश्रान्तो विशेद् ध्यानं, ध्यानश्रान्तो विशेज्जपम् ।
द्वाभ्यां श्रान्तः पठेत् स्तोत्र-मित्येवं गुरुभिः स्मृतम् ।।

—श्राद्धविधि, पृ०७९, श्लोक-३

जाप से श्रान्त होने पर ध्यान एवं ध्यान से श्रान्त होने पर जाप करना चाहिए तथा दोनों से श्रान्त हो जाने पर स्तोत्र पढ़ना चाहिए । ऐसे ही गुरुदेव ने कहा है ।

३. ओमित्येव ध्यायथ ! आत्मान स्वस्ति वः,
पाराय तमसः परास्तात् । मुण्डकोपनिषद् २।२।६

इस आत्मा का ध्यान ओ३म् के रूप में करो ! तुम्हारा कल्याण

होगा अन्धकार दूर करने का यह एक ही साधन है।

४. अकारो वासुदेवः स्यादुकारस्तु महेश्वरः।
मकारः प्रजापतिः स्यात्, त्रिदेवो ॐ प्रयुज्यते॥
'अ' का अर्थ विष्णु है, 'उ' का अर्थ महेश है और 'म' का अर्थ ब्रह्मा है अतः तीनों देवों के अर्थ में ॐ का प्रयोग किया जाता है।

५. अरिहन्ता असरीरा, अयरिय-उवज्झाय-मुणिणो।
पढमक्खरनिप्फन्नो, ॐकारो पञ्चपरमिट्ठी॥

—बृहद्‌द्रव्यसंग्रहटीका, पृष्ठ १८२

जैनाचार्यों के मतानुसार 'ॐ' का अर्थ इस प्रकार है—
अरिहन्त का 'अ' सिद्धों का दूसरा नाम अशरीरी भी है। अतः अशरीरी का भी 'अ' आचार्यों का 'आ' उपाध्याय का 'उ' और साधु का दूसरानाम मुनि भी है, इसीलिए मुनि का 'म' लिया। फिर इन सबकी सन्धि करने से ओम् बन गया। जैसे—
अ+अ=आ, आ+आ=आ, आ+उ=ओ, ओ+म्=ओम्।

६. बच्चा जन्मते समय आ-आ-आ, कुछ बड़ा होने पर उ-उ-उ अधिक बढ़ने पर म-म-म, करने लगता है।

—स्वामी रामतीर्थ

स्वामीजी का कहना है कि ॐ स्वाभाविक शब्द है। अतएव बच्चे के मुंह से भी इसके अंश (अ. उ. म.) स्वभाव से ही निकलते हैं।

७. सकरं च हकारं च लोपयित्वा प्रयुज्यते।
सोहं में 'स' और 'ह' का लोप करने से ॐ रह जाता है, इस प्रकार सोहं में भी ॐ का प्रयोग किया जाता है।

५ समाधि

१. समाधिर्नाम राग-द्वेषपरित्यागः। —सूत्रकृतांग चूर्णि १।२।२
राग द्वेष का त्याग ही समाधि है।

२. कुसलचित्तेकग्गता समाधि। —विसुद्धिमग्ग ३।२
कुशल (पवित्र) चित्त की एकाग्रता ही समाधि है।

३. सुखिनो चित्तं समाधीयति। —विसुद्धिमग्ग ३।४
सुखी का चित्त एकाग्र होता है।

४. समाहितं वा चित्तं थिरतरं होति। —विसुद्धिमग्ग ४।३६
समाहित (एकाग्र हुआ) चित्त ही पूर्ण स्थिरता को प्राप्त करता है।

५. समाहियस्सऽग्गिसिहा व तेयसा,
तवो य पन्ना य जसो पवड्ढइ। —आचाराङ्ग श्रु० २।१६।५
अग्नि-शिखा के समान प्रदीप्त एवं प्रकाशमान रहनेवाले समाधि-युक्त साधक के तप प्रज्ञा और यश निरन्तर बढ़ते रहते हैं।

६. लाभालाभेन मथिताः, समाधिं नाधिगच्छन्ति।
—थेरगाथा १।१०२
जो लाभ या अलाभ से विचलित हो जाते हैं, वे समाधि को प्राप्त नहीं कर सकते।

७. समाहिकारए णं तमेव समाहिं पडिलब्भइ। —भगवती ७।१
समाधि देनेवाला समाधि पाता है।

६ आहार

अन्न—

१. अन्नं वै विशः। —शतपथब्राह्मण ६।७।३।७

अन्न ही प्रजा का आधार है।

२. अन्नं हि प्राणाः। —ऐत्तिरीय-ब्राह्मण-३२।१०

अन्न ही प्राण हैं।

३. अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते।

—तैत्तिरीयउपनिषद् १।४।१

अन्न से ही सब प्राणों की महिमा बनी रहती हैं।

४. अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्। —तैतरीयआरण्यक ९।२

यह अच्छी तरह जान लीजिए कि अन्न ही ब्रह्म है।

५. अन्नसमं रत्नं न भूतं न भविष्यति। —वैद्यरसराज-समुच्चय

अन्न के समान रत्न न तो हुआ और न कभी होगा।

६. नास्ति मेघसमं तोयं, नास्ति चात्मसमं बलम्।
नास्ति चक्षुःसमं तेजो, नास्ति चान्नसमं प्रियम्।

—चाणक्यनीति ५।१७

मेघजल के समान जल नहीं, आत्मबल के समान बल नहीं, आँख के समान तेज नहीं और अन्न के समान कोई प्रिय वस्तु नहीं।

७. अन्नं न निन्द्यात् । —तैत्तिरीयउपनिषद् ३।७

अन्न की निन्दा मत करो।

८. अन्नेन हींद सर्वं गृहीतम्, तस्मात् यावन्तो नोऽशनमश्नन्ति तेनः सर्वे गृहीता भवन्ति। —शतपथब्राह्मण ४।६।५।४

अन्न ने सब को पकड़ रखा है अतः जो भी हमारा भोजन करता है, वही हमारा हो जाता है।

९. अन्नं हि भूतानां ज्येष्ठम् । तस्मात सर्वोपधमुच्यते । अन्नाद् भूतानि जायन्ते । जातान्यन्नेन वर्धन्ते ।

—तैत्तरीयउपनिषद् ८।२

प्राणि जगत में अन्न ही मुख्य है। अन्न को समग्र रोगों की औषध कहा है, (क्योंकि सब औषधियों का सार अन्न में है) अन्न से ही प्राणी पैदा होते हैं और अन्न से ही बढ़ते हैं।

१०. अन्नं बहु कुर्वीत तद व्रतम् । —तैत्तिरीयउपनिषद् ३।९

अन्न अधिकाधिक उपजाना-बढ़ाना चाहिए, यह एक व्रत (राष्ट्रीय-प्रण) है।

११. सर्वसंग्रहेषु धान्यसंग्रहो महान्, यतस्तन्निबन्धनंम् ; जीवित सकलप्रयासश्च ।

—नीतिवाक्यामृत ८।१८

सभी संग्रहों मे धान्य का संग्रह बड़ा हैं, क्योंकि जीवन तथा सारे प्रयासों का कारण धान्य ही हैं।

१२. अन्न मुक्ता र घी जुक्ता। —राजस्थानी कहावत

१३. हमारे बड़े-बूढ़े कहा करते थे कि अनाज मंहगा और रुपया सस्ता हो, वह जमाना 'खराब' और अनाज सस्ता और

रुपया मंहगा हो, वह जमाना 'अच्छा'; कारण अन्न से ही प्राण टिकते हैं।

१४. एक सेठ किसी कारणवश मकान में रह गया। बाहर से बन्द करके आरक्षक दूसरे गाँव चले गए। वहां हीरे, पन्ने, माणिक-मोती आदि जवाहरात काफी पड़ा था, लेकिन खाद्यवस्तु बिल्कुल नहीं थी। भूखा-प्यासा सेठ आखिर मर गया। प्राण निकलते समय उसने एक कागज पर लिखा कि "जवाहर से ज्वार का दाना बेहतर है।" तुलसीदासजी ने भी कहा है—

तुलसी तब ही जानिए, राम गरीब निवाज।
मोती-कण मंहगा किया, सस्ता किया अनाज।

७ **भोजन**

१. शतं विहाय भोक्तव्यं, सहस्रं स्नानमाचरेत् ।

सौ काम छोड़कर खाना चाहिए और हजार काम छोड़कर नहाना चाहिए ।

२. चढ़ी हांडी ने ठोकर नहीं मारणी ।

३. और बात खोटी, सिरै दाल-रोटी । —**राजस्थानी कहावतें**

४. यदि भोजन मिलता रहे तो सब दुःख सहे जा सकते हैं ।

५. चारु कदेई हारू को हुवैनी । —**राजस्थानी कहावत**

६. तीन महीनों में मनुष्य अपने शरीर के वजन जितना भोजन कर लेता है । —एक अनुभवी

७. **भोजन का पाचनकाल :–**

पदार्थ	घंटे	पदार्थ	घंटे
उबले चावल	१	कच्चा-दूध	२।
जौ	२	मक्खन	३
साबूदाना	१।।।	आलू	३।।
दूध	२	गोभी	४
		गाजर, मूली, मटर	३

८. आहारो, मैथुनं, निद्रा, सेवनात् तु विवर्धते ।

आहार, मैथुन और निद्रा, सेवन करने से इन तीनों में वृद्धि होती है ।

भोजन की विधि

१. पूजयेदशनं नित्य-मद्याचचैतदकुत्सयन् ।
दृष्ट्वा हृष्येत्प्रसीदेच्च, प्रतिनन्देच्च सर्वशः ॥५४॥
पूजितं ह्यशनं नित्यं, बलमूर्जं च यच्छति ।
अपूजितं तु तद्भुक्त-मुभयं नाशयेदिदम् ॥५५॥
नोच्छिष्ठंकस्यचिद्दद्या-न्नाद्याच्चैव तथान्तरा ।
न चैवाध्यशनं कुर्याद्, नचोच्छिष्टःक्वचिद्व्रजेत् ॥५६॥

—मनुस्मृति २

जो कुछ भोज्यपदार्थ मनुष्य को प्राप्त हो, वह उसे सदा आदर की दृष्टि से देखे। दोष न निकालता हुआ उसे खाए। उसे देखकर हर्ष, प्रसन्नता एवं उमंग का अनुभव करे ॥ ५४।

सत्कार किया हुआ अन्न बल और शक्ति को देता है एवं तिरस्कार को भावना से खाया हुआ अन्न उन दोनों का नाश कर देता है ॥ ५५ ॥

जूठा भोजन किसी को न दें। प्रातः भोजन करने के बाद सायंकाल से पहले बीच में कुछ न खाएं। अधिक न खायें और जूठे मुख कहीं न जायें ॥ ५६ ॥

२. अपवित्रोऽतिगाध्यीच्च, न भुञ्जीत विचक्षणः ।
कदाचिदपि नाश्नीया-दूर्ध्वीकृत्य च तर्जनीम् ।

—विवेक-विलास

विचक्षण पुरुष अपवित्रता की अवस्था में भोजन न करे। अति-लोलुपता से न खाए तथा तर्जनी (अंगूठे के पासवाली अंगुली को ऊंचा करके भी न खाए।

३. उष्णं स्निग्धं मात्रावत् जीर्णे वीर्याविरुद्धं इष्टे देशे, इष्टसर्वोपकरणं नातिद्रुतं नातिविलम्बितं अजल्पन् अहसन् तन्मना भुञ्जीत। आत्मानमभिसमीक्ष्य सम्यक्।

—चरकसंहिता, विमानस्थान १।२४

उष्ण, स्निग्ध, मात्रापूर्वक पिछला भोजन पच जाने पर, वीर्य के अविरुद्ध, मनोनुकूल स्थान पर, अनुकूलसामग्रियों से युक्त, न अतिशीघ्रता से, न अतिविलम्ब से, न ही बोलते हुए, न ही हंसते हुए, आत्मा की शक्ति का विचार करके एवं आहार-द्रव्य में मन लगाकर भोजन करना चाहिए।

४. ईर्ष्या-भय-क्रोधपरिक्षतेन, लुब्धेन रुग्दैन्यनिपीड़ितेन। प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमान-मन्नं न सम्यक् परिणाममेति।

—सुश्रुत

ईर्ष्या, भय, क्रोध, लोभ, रोग, दीनता, एवं द्वेष--इन सबसे युक्त मनुष्य द्वारा जो भोजन किया जाता है, उसका परिणाम अच्छा नहीं होता।

५. विरोधी-आहार का सेवन नहीं करना चाहिए, इसके देश-विरुद्ध, कालविरुद्ध, अग्निविरुद्ध, मात्राविरुद्ध, कोष्ठविरुद्ध, अवस्थाविरुद्ध एवं विधिविरुद्ध आदि अनेक भेद हैं।

—चरकसंहिता-सूत्रस्थान २७

६. **साथ न खाने के खाद्य पदार्थ—**

(१) गर्म रोटी आदि के साथ दही।

(२) पानी मिला दूध और घी।

(३) बराबर-बराबर घी-मधु (शहद)।
(४) चाय के पीछे ठण्डा पानी-ककड़ी-तरबूज आदि।
(५) खरबूजा और दही।
(६) मूली और खरबूजे के साथ मधु।

—कविराज हरनामदास

७. स्नानं कृत्वा जलैः शीतै-रुष्णं भोक्तुं न युज्यते।

—विवेकविलास

ठण्डे जल से स्नान करके गरम-द्रव्य न खाए।

८. ठंडो न्हावै तातो खावै, त्यांरै वैद कदे नहीं आवै।

९. ऊभो मूतै सूतो खावै, तिणरो दलदर कदे न जावै।

—राजस्थानी कहावत

९ भोजन कैसा हो?

१. स भारः सौम्य ! भर्तव्यो, यो नरं नावसादयेत् ।
तदन्नमपि भोक्तव्यं, जीर्यते यदनामयम् ।

—वाल्मीकिरामायण ३।५०।१८

हे सौम्य ! उसी भार को उठाना चाहिए, जिससे मनुष्य को कष्ट न हो। उसी अन्न को खाना चाहिए जो रोग पैदा किए विना पच जाए।

२. हितं मितं सदाश्नीयाद्, यत् सुखेनैव जीर्यते ।
धातुः प्रकुप्यते येन, तदन्नं वर्जयेद्यतिः ।

—अत्रिस्मृति

सदा हितकारी एवं परमित भोजन करना चाहिए, जो सुखपूर्वक हजम हो जाए।

३. षट् त्रिंशतं सहस्राणि, रात्रीणां हितभोजनः ।
जीवत्यनातुरो जन्तु-र्जितात्मा संमतः सताम् ॥

—चरकसंहिता, सूत्रस्थान २७।३४८

हितकारी भोजन करनेवाला प्राणी छत्तीस हजार रात्रि पर्यन्त अर्थात् १०० वर्ष तक जीवित रहता है तथा वह आत्मविजयी, नीरोग एवं सत्पुरुषों द्वारा सम्मानित होता है।

४. पचे सोई खाइबो, रुचे सोई बोलिबो। —बंगला कहावत

पाचन शक्ति के अनुसार खाना खाना चाहिए और रुचि के अनुसार बोलना चाहिए।

५. सुजीर्णमन्नं सुविचक्षणः सुतः,
सुशासिता स्त्री नृपतिः सुसेवितः।
सुचिन्त्य चोक्तं सुविचार्य यत्कृतं,
सुदीर्घकालेऽपि न याति विक्रियाम्।

—हितोपदेश १।२२

पचा हुआ भोजन, विचक्षण पुत्र, आज्ञा में रहनेवाली स्त्री, सुसेवित राजा, सोचाकर कहा हुआ वचन और विचारपूर्वक किया हुआ काम—ये लम्वे समय तक विकार को प्राप्त नहीं होते।

६. अजीर्णे भोजनं विषम्।

—चाणक्यनीति ४।१५

अजीर्ण के समय किया हुआ भोजन विष के समान काम करता है।

७. तक्रान्तं खलु भोजनम्।

—सुभाषितरत्नखण्डमंजूषा

भोजन के अन्त में तक्र (छाछ) पीनी चाहिए।

८. पुष्ट खुराक बिना नहीं, बनता तेज दिमाग।
तेल और बत्ती बिना, कैसे जले चिराग?

—दोहा-संदोहा ८३

९. राब खावै त्यामैं रूप किसो।

—राजस्थानी कहावत

१०. मथुरा का पेड़ा अरु जयपुर की कलाकन्द,
बूंदी का लड्डू सब लड्डू से सवाया है।
उज्जैन की माजम, अजमेर की रेवड़ी रु,
काबुल सा मेवा और काहू न दिखाया है।
बनारस की शक्कर टक्कर सभी से लेत;
सिंध सा सिंघाड़ा स्वाद और न बनाया है।
कहत **सजान** बीकानेर की अधिकताई,
मिसरी, मतीरा, भुजिया तीनूं ही सराया है॥

भोजन के भेद

१. अन्यच्छ्रेयोऽन्यदुतैव प्रेय-स्ते उभे नानार्थे पुरुषं सिनीतः।
तयोः श्रेय आददानस्य साधु भवति, हीयतेऽर्थाद् य
उ प्रेयो वृणीते। —कठोपनिषद् १।२।१

पदार्थ दो प्रकार के हैं—श्रेय और प्रेय!

आरम्भ में दुःख व अन्त में सुख देनेवाला **श्रेय** और इससे उलटा **प्रेय** कहलाता है। श्रेय का ग्राहक सुखी और प्रेय का ग्राहक दुःखी होता है।

२. प्रेयदृष्टि से असन का, लेना है अन्याय,
श्रेयदृष्टि से असन तो, **चन्दन** है निरुपाय।

३. आयुः-सत्त्व-बलारोग्य-सुख--प्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या, आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥८॥
कट्वम्ल-लवणात्युष्ण-तीक्ष्ण-रूक्ष-विदाहिनः।
आहारा राजसस्येष्टा, दुःखशोकभयप्रदाः ॥९॥
यातयामं गतरसं, पूति-पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं, भोजनं तामसप्रियम् ॥१०॥
—गीता अ०-१७

मनुष्य का आहार सात्त्विक, राजस और तामस के भेद से तीन प्रकार का है—आयु, जीवनशक्ति, बल, आरोग्य, सुख एवं प्रीति को बढ़ानेवाले तथा रसीले, चिकने, जल्दी खराब न होनेवाले एवं

हृदय को पुष्ट बनानेवाले भोज्यपदार्थ सात्त्विक-प्रकृतिवाले मनुष्यों को प्रिय होते हैं अतः ये **सात्त्विक** कहलाते हैं।

अतिकडुवे, अतिखट्टे, अतिनमकीन, अतिउष्ण, तीखे, रूखे, जलन पैदा करनेवाले दुःख-शोक एवं रोग उत्पन्न करनेवाले भोज्यपदार्थ राजस-प्रकृतिवाले मनुष्यों को प्रिय होते हैं अतः ये **राजस** कहलाते हैं।

बहुत देर का रखा हुआ, रसहीन, दुर्गन्धित, बासी, जूठा, अमेध्य-अपवित्र भोजन तामस-प्रकृतिवाले मनुष्यों को प्रिय होता हैं अतः यह **तामस** कहलाता हैं।

४. नामं उवणा दविए, खेत्ते भावे य होंति बोधव्वो।
एसो खलु आहारो, निक्खेवो होइ पंचविहो॥
दव्वे सचित्तादि, खेत्ते नगरस्स जणवओ होइ।
भावाहारो तिविहो, ओए लोमे य पक्खेव॥

—सूत्रकृतांग श्रु० २ अ० ३ निर्युक्ति

आहार का नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, और भाव—ऐसे पांच प्रकार से निक्षेप होता है।

किसी वस्तु का नाम **आहार** रखना **नामआहार** है एवं आहार की स्थापना करना **स्थापनाआहार** हैं।

द्रव्यआहार तीन प्रकार का है—१. सचित्त २. अचित्त ३. मिश्र। जिस क्षेत्र में आहार किया जाता है, उत्पन्न होता है अथवा आहार का व्याख्यान होता है, उस क्षेत्र को **क्षेत्रआहार** कहते हैं अथवा नगर का जो देश, धन-धान्यादि द्वारा उपभोग में आता है, वह क्षेत्रआहार है।

क्षुधावेदनीयकर्म के उदय से भोजनरूप में जो वस्तु ली जाती है, उसे **भावआहार** कहते हैं। वह तीन प्रकार का है—

१ **ओजआहार**—जन्म के प्रारम्भ में लिया जानेवाला, २ **लोभ-आहार**—त्वचा या रोम द्वारा लिया जानेवाला, ३ **प्रक्षिप्तआहार**—मुख अथवा इन्जेक्शन आदि द्वारा लिया जानेवाला।

५. णेरइयाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-इंगालोवमे, मुम्मुरोवमे, सीयले, हिमसीयले।

तिरिक्खजोणियाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-कंकोवमे, बिलोवमे, पाणमंसोवमे पुत्तमंसोवमे।

मणुस्साणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तं जहा-असणे, पाणे, खाइमे, साइमे।

देवाणं चउव्विहे आहारे पण्णत्ते, तंजहा-वण्णमंते, गंधमंते रसमंते फासमंते। —स्थानांग ४।४।३४०

नेरयिकों का आहार चार प्रकार का कहा है—

(१) **अंगारों के समान**—थोड़ी देर तक जलानेवाला।

(२) **मुर्मुर के समान**—अधिक समय तक दाह उत्पन्न करनेवाला।

(३) **शीतल**—सर्दी उत्पन्न करनेवाला।

(४) **हिमशीतल**—हिम के समान अत्यन्त शीतल।

तिर्यञ्चों का आहार चार प्रकार का कहा है—

(१) **कंक के समान**—सुभक्ष्य और सुखकारी परिणामवाला।

(२) **बिल के समान**—बिल में वस्तु की तरह (रस का स्वाद दिये बिना) सीधा पेट में जानेवाला।

(३) **मातङ्गमांस के समान**—मातङ्गमासवत् घृणा पैदा करनेवाला

(४) **पुत्रमांस के समान**-पुत्रमांसवत् अत्यन्त दुःख से खाया जानेवाला।

मनुष्यों का आहार चार प्रकार का कहा है—

(१) **असन**—दाल-रोटी-भात आदि ।

(२) **पान**—पानी आदि पेय पदार्थ ।

(३) **खादिम**—फल-मेवा आदि ।

(४) **स्वादिम**—पान-सुपारी आदि मुंह साफ करने की चीजें ।

देवताओं का आहार चार प्रकार का कहा है–

(१) अच्छे वर्णवाला, (२) अच्छी गन्धवाला, (३) अच्छे रसवाला, (४) अच्छे स्पर्शवाला ।

९. नव विगईओ पण्णत्ताओ, तं जहा–खीरं, दहिं, णवणीयं, सप्पिं, तिल्लं, गुलो, महु, मज्जं, मंसं । **–स्थानांग ९।६७४**

नव विकृत्तियां-विगय कही हैं–१ खीर-(दूध), २ दही ३ मक्खन, ४ घी, ५ तेल, ६ गुड़, ७ मधु-शहद ८ मद्य, ९. मांस । मक्खन मद्य, मांस, मधु–इन चारों को **महाविगय** भी कहा हैं ।

११ भोजन में आवश्यक तत्त्व

[१] **प्रोटीन**—मांस जातीय-पौष्टिकपदार्थ।

[२] **फेट्स**—चर्बीले पदार्थ घी-तेल आदि।

[३] **खनिज**—लवण सदृश पदार्थ।

[४] **कार्बोहाइड्रेट्स**—शर्कराजातीय-चीनी आदि पदार्थ।

[५] **कैलशियम**—चूना-फासफोरस आदि।

[६] **लोहा**—लोहयुक्त पदार्थ।

[७] **पानी**—पेय पदार्थ।

[८] **कैलोरी**—शरीर को गर्मी और शक्ति देनेवाले तत्त्व।

किस खाद्य में प्रोटीन आदि प्रतिशत कितनी हैं एवं कैलोरीशक्ति प्रतिसहस्र कितनी है—यह निम्नलिखित चार्ट से समझने योग्य है।

१२ रासायनिक तुलनात्मक चार्ट[1]

शाकाहारी-खाद्य

पदार्थ	प्रोटीन	फेट्स	खनिज लवण	कार्बोहाइड्रेट्स	कैलशियम	लोहा	पानी	कैलोरी
—	%	%	%	%	%	%	%	%Grs.
गेहूँ का आटा	१२·१	१·७	१·८	७२·२	०·०४	७·३	१२·२	३५२
मकई	११·१	३·६	१·५	६६·२	०·०१	२·१	१४·९	३४३
चावल	८·५	०·६	०·९	७७·४	०·०१	२·८	१२·६	३४९
मूंग	२४·०	१·३	३.६	५६.६	०·१४	८·४	१०·४	३३४
उड़द	२४.०	१.४	३·४	६०·३	०·२०	९·८	१०·९	३५०
अरहर	२२.३	१.७	३·६	५७·२	०·१४	८·८	१५·२	३३३
मसूर	२५·१	०·७	२·१	५९·७	०·१३	२·०	१२·४	३४६
भुना मटर	२२·९	१·४	२·३	६३·५	०·०३	५·०	९·९	३५८
भुना चना	२२·५	५·२	२·२	५८·९	०·०७	८·९	११·२	३७२
लोभिया बड़ा	२४·६	०·७	३·२	५५·७	०·०७	३·८	१२·०	३२७

सोयाबीन	४३·२	१९·५	४.६	२०.९	०·२४	११·५	८.१	४३२
भटबांस	४१·३	१७·०	४.५	२४.१	०.२१	९·९	—	४१५
वाल	२४·९	०·८	३·२	६०·१	०·०६	२·०	९·६	३४७
मेथी	२६.२	५.८	३.०	४४·१	०·१६	१४·१	१३·७	३३३
जीरा	१८·७	१५·०	५.८	३६·६	१·०८	३१·०	११·९	३५६
धनियां	१४.१	१६·१	४.४	२१.६	०·६३	१७.९	११·२	२८८
बादाम	२०.८	५८·९	२·८	१०·५	०·२३	३·५	५·२	६५५
काजू	२१.२	४६·९	२·४	२२.३	०.०५	५·०	५.९	५९६
भुनी मूंगफली	३१·५	३९·८	२·३	१९·३	०·०५	०·३	४·०	६६१
पिस्ता	१९·८	५३·५	२·८	१६·२	०·१४	१३.७	५·६	६२६
अखरोट	१५·५	६४·५	१.८	११.०	०·१०	४·८	४·५	६८७
मक्खन	—	८०·८	—	—	—	—	—	७३०
घी	—	९८·०	—	—	—	—	—	९००
पनीर	२४·१	२५·१	४·२	६·३	०·७९	२·१	४०·३	३४८
खोया	१४·१	३१·२	३·१	२०·५	०·६५	५·८	३०·६	४२१
स्प्रेटा दूध-पावडर	३८·०	०·१	६·८	५१.०	१·३७	१·४	४·१	३५७

मांसाहारी-खाद्य

पदार्थ	प्रोटीन	फेट्स	खनिज लवण	कार्बोहाइड्रेट्स	कैलशियम्	लोहा	पानी	कैलोरी
—	%	%	%	%	%	%	%	%Grs.
मुर्गी का अंडा	१३·३	१३·३	१·०	—	०·०६	२·१	७३·७	१७३
बत्तखका अंडा	१३·५	१३·७	१·०	०·७	०·०७	३·०	७१·०	१८०
कलेजी (भेड़)	१९·३	७·५	१·५	१·४	०·०१	६.३	७०·४	१५०
बकरीका गोस्त	१८·५	१३·३	१·३	—	०·१५	२·५	७१·५	१९४
सुअरका गोस्त	१८·७	४·४	१·०	—	०·०३	२·३	७७·४	११४
गायका गोस्त	२२·६	२·६	१·०	—	०·०१	०·८	७३·४	११४
मछली	२२·६	०·६	०·८	—	०·०२	०·९	७८·४	९१

१. भारत सरकार द्वारा प्रकाशित हेल्थ-बुलेटिन नं०-२३ से साभार।

● प्रकाशक—श्री केवलचन्द जैन, जनकल्याण समिति, १४४३, मालीवाड़ा-दिल्ली।

● (मांसाहारी-खाद्य से शाकाहारी-खाद्य की श्रेष्ठता दिखाने के निमित्त।

२. **विटामिन–**

विटामिन वे पदार्थ हैं, जिनकी मानवशरीर को कम मात्रा में आवश्यकता होती है, किन्तु ये अत्यावश्यक होते हैं ! इनके विना मानवशरीर सुचारुरूप से काम नहीं कर सकता।

विटामिन के प्रकार—विटामिन 'ए' आँखों के लिए बहुत जरूरी होता है।

विटामिन 'बी' कम्पलैक्स मांसपेशियों, नसों, भूख तथा पाचन शक्ति पर नियंत्रण रखता है।

विटामिन 'सी' छूत के रोगों का सामना करने की शक्ति देता है।

विटामिन 'डी' दांतों और हड्डियों को मजबूत बनाने में सहायक होता हैं।

विटामिन 'ए' आदि विशेषरूप से धारण करनेवाले पदार्थ–

विटामिन 'ए'–दूध ओर दूध से बनी चीजें, पालक, गाजर, आम, पपीता, टमाटर, मछली का तेल, अण्डे, कलेजी आदि।

विटामिन 'बी' कम्पलैक्स–गिरियाँ, हरी फलियाँ (मटर), सेम, आलू, डबलरोटी, हरी मूँग, बाजरा, सेला चावल, दूध, मांस और मछली।

विटामिन 'सी'--ताजे फल और सब्जी, आँवला, मौसम्मी, (नींबू और सन्तरा), पत्त वाली सब्जियाँ, (फूलगोभी,

बन्दगोभी, मूली के पत्ते), टमाटर, सहिजन की पत्तियाँ।

विटामिन 'डी'--सूरज की किरणें, दूध और दूध की बनी चीजें, मछली का तेल तथा अण्डे।[1]

–हिन्दुस्तान, १२ अप्रेल, १९७१

प्रोटीन आदि तत्त्व तथा विटामिन के लोभ से मांस मछली और अण्डों का सेवन करनेवाले व्यक्तियों को पुस्तक पृष्ठ ९६ से १०० तक का चार्ट और विटामिन का विवेचन ध्यान से पढ़कर मांसाहार परित्याग कर देना चाहिए।

–धनमुनि

---

१. भारत सरकार की तरफ से जनता के हित में पौष्टिक और स्वादिष्ट मार्डनब्रेड के निर्माता **मार्डन बेकरीज** की ओर से प्रकाशित।

१३ भोजन का ध्येय

१. खुराक स्वाद के लिए नहीं परन्तु शरीर को दास की तरह पालने के लिए है। —**गांधी**

२. जीने के लिए खाना किसी एक दृष्टि से जरूरी है, किन्तु खाने के लिए जीना (रसलोलुप होना) सभी प्रकार से मूर्खता हैं।

३. स्वाद के लिए खाना **अज्ञान**, जीने के लिए खाना **आवश्यकता** और संयम की रक्षा के लिए खाना **साधना** है।

४. उतर्या घाटी, हुया माटी। —**राजस्थानी कहावत**

५. प्रतिदिन दस खरब रक्त के लालपरमाणु नष्ट होते हैं। उनकी पूर्ति आहार से ही की जा सकती है।

१४ भोजन की शुद्धि

१. आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः, सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः,
स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः ।

—छान्दोग्योपनिषद् ७।२६३

आहार की (इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किये गये विषयों की) शुद्धि होने से सत्त्व-अन्तःकरण की शुद्धि होती है । उससे स्थायी स्मृति का लाभ होता है । स्मृति के लाभ से अर्थात् जागरूक अमूढ़ज्ञान की प्राप्ति से मनुष्य की सब ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं ।

२. आहार सुधारिये ! स्वास्थ्य अपने-आप सुधर जायेगा ।

—गांधीजी

.३ कुभोज्येन दिनं नष्टम् । —सुभाषितरत्नखण्ड मंजूषा

कुभोजन करने से दिन को नष्ट हुआ समझो ।

४. जिसो अन्न खावै, विसी ही डकार आवै ।

—राजस्थानी कहावत

५. जैसा खावे अन्न, वेसा होवे मन्न ।
जैसा पीवै पानी, वैसी बोले बानी ॥ —हिंदी कहावत

६. दीपो हि भक्षयेद् ध्वान्तं, कज्जलं च प्रसूयते ।
यदन्नं भक्ष्यते नित्यं, जायते तादृशी प्रजाः ॥

——चाणक्यनीति ८।३

जो जैसा अन्न खाता है उसके वैसी ही संतान पैदा होती है । दीपक काले अंधेरे का भक्षण करता है तो उसकी संतान भी काली (कज्जल) होती है ।

१५ भोजन का समय

१. बुभुक्षाकालो भोजनकालः ।

—नीतिवाक्यमृत २५।२६

भूख लगे, वही भोजन का समय है ।

२. अक्षुधितेनामृतमप्युपभुक्तं भवति विषम् ।

—नीतिवाक्यामृत

भूख के बिना खाया हुआ अमृत भी जहर हो जाता है ।

३. नाश्नीयात् संधिवेलायां, नगच्छेन्नापि संविशेत् ।

—मनुस्मृति ४।५५

संध्यासमय भोजन, गमन और शयन नहीं करना चाहिए ।

४. **कौन कब आहार के इच्छुक ?**

नरक के जीव असंख्यसमयवाले अन्तर्मुहूर्त से आहारार्थी (आहार करने के इच्छुक) होते हैं ।

तिर्यञ्चों में पृथ्वी आदि स्थावर-जीव प्रति समय, द्वीन्द्रिय-त्रीन्द्रिय,-चतुरिन्द्रिय असंख्यसमय वाले अन्तर्मुहूर्त से तथा तिर्यञ्चपञ्चेन्द्रिय जीव जघन्य अन्तर्मुहूर्त से एवं उत्कृष्ट दो दिन से आहारार्थी होते हैं ।

मनुष्यों को जघन्य अन्तर्मुहूर्त एवं उत्कृष्ट तीन दिन के अन्तर से आहार की इच्छा होती है ।

(अवसर्पिणीकाल में पहले आरे के मनुष्य तीन दिन से, दूसरे आरे के दो दिन से, तीसरे आरे के एक दिन से, चौथे आरे के दिन में एक बार और पाँचवें आरे के दिन में दो बार भोजन किया करते हैं, किन्तु छठे आरेवाले मनुष्य आहार के विषय में मर्यादाहीन हैं अर्थात् उन्हें भूख बहुत लगती है ।)

देवों के आहार के विषय में ऐसा माना गया है कि दस हजार वर्ष की आयुवाले देवता एक दिन से, पल्योपम की आयुवाले दो दिन से यावत् नौ दिन से, एक सागर की आयुवाले एक हजार वर्ष से एवं तेंतीससागर की आयुवाले देवता तेंतीस हजार वर्ष से, भोजन के इच्छुक होते हैं ।

(प्रज्ञापनापद २८ के आधार से)

१६ भोजन के समय दान

१. त्यक्तेन भुञ्जीथाः । —यजुर्वेद ४०।१

कुछ त्याग करके खाओ !

२. केवलाघो भवति केवलादी । —ऋग्वेद १०।१७।१६

अतिथि आदि को दिये बिना अकेला भोजन करनेवाला केवल पाप का भागी होता है ।

३. एकः स्वादु न भुञ्जीत, एकश्चार्थान्न चिन्तयेत् ।
एको न गच्छेदध्वानं, नैकः सुप्तेषु जागृयात् ।।

—विदुरनीति १।५१

मनुष्य को चाहिए कि कभी भी अकेला स्वादिष्ट भोजन न करे, अकेला किसी विषय का निश्चय न करे, रास्ते में कभी अकेला न चले और न रात को सबके सो जाने के बाद अकेला जागता ही रहे।

४. अशितवत्यतिथावश्नीयात् । ——अथर्ववेद ६।७।७

अतिथि के खाने के बाद ही खाना चाहिए ।

५. वीसमंतो इमं चिंते, हियमट्ठं लाभमट्ठिओ ।
जइ मे अणुग्गहं कुज्जा, साहू हुज्जामि तारिओ ।।९४।।
साहवो तो चिअत्तेणं, निमंतिज्ज जहक्कमं ।
जइ तत्थ केइ इच्छिज्जा, तेहिं सद्धिं तु भुंजए ।।९५।।

विश्राम करता हुआ लाभार्थी (मोक्षार्थी) मुनि इस हितकर अर्थ

का चिन्तन करे–यदि आचार्य और साधु मुझ पर अनुग्रह करें (मेरे द्वारा लाया हुआ आहार लें) तो मैं निहाल हो जाऊँ–मानूं कि उन्होंने मुझे भवसागर से तार दिया।

इस प्रकार विचारकर मुनि प्रेमपूर्वक साधुओं को यथाक्रम निमन्त्रण दे। उन निमन्त्रित साधुओं में से यदि कोई साधु भोजन करना चाहे तो उनके साथ भोजन करे।

६. **खानेवाले दो प्रकार के होते हैं—**

कुत्तों की तरह छीना-झपटी करके खानेवाले,
कौवे की तरह सभी साथ बैठकर खानेवाले।

—श्रीरामकृष्ण

भोजन के समय मौन—

१. भोजन करते समय खाद्यपदार्थों की निन्दा या प्रशंसा करने से कर्मों का बन्ध होता है अतः उस समय प्रायः मौन कर लेना चाहिए। —धनमुनि

२. ये तु संवत्सरं पूर्णं, नित्यं मौनेन भुञ्जते।
युगकोटिसहस्रं तैः, स्वर्गलोके महीयते॥

—चाणक्यनीति ११।६

जो भोजन करते समय एक वर्ष तक पूर्ण मौन रख लेते हैं, वे हजार-कोटि युग तक स्वर्ग में पूजे जाते हैं।

४०   भोजन के बाद

१. भुक्त्वा राजवदासीत, यावदन्नक्लमो गतः,
ततः पादशतं गत्वा, वामपार्श्वेन संविशेत् । —सुश्रुत

खाने के बाद जब तक शरीर में अन्न की क्लान्ति रहे, तब तक राजा की तरह प्रसन्नमुद्रा में बैठना चाहिए। फिर सौ कदम टहल कर कुछ समय लेट जाना चाहिए।

२. ऑफ्टर डिनर रेस्ट ए व्हाइल, ऑफ्टर सपर वाक ए माइल।
—अंग्रेजी कहावत

मध्याह्न भोजन के बाद कुछ आराम करना चाहिए एवं सांयकाल भोजन के बाद कुछ घूमना चाहिए।

३. खाय-पीय कर सो जाणा, मार-कूट कर भाग जाणा।
—राजस्थानी कहावत

४. भुक्त्वा व्यायाम-व्यवायौ सद्यो व्यापत्तिकारणम्।
—नीतिवाक्यामृत २५।५०

खाते ही व्यायाम करना एवं मैथुन करना आपत्ति का कारण है।

१८ भोजन की मात्रा

१. मात्राशीः स्यात्, आहारमात्रा पुनरग्निबलापेक्षिणी।

—चरकसंहितासूत्रस्थान ५।३

मात्रायुक्त आहार करनेवाले बनो। आहार की मात्रा अपने अग्निबल की अपेक्षा रखती है।

२. वायोः संचारणार्थाय, चतुर्थमवशेषयेत्।

श्वासोच्छ्वास के लिए अन्न की थैली का चौथा भाग खाली रखना चाहिए।

३. न भुक्तिपरिमाणे सिद्धान्तोऽस्ति। **—नीतिवाक्यामृत २५।४३**

कितना खाना—इस विषय में कोई निश्चय नही है।

४. तथा भुञ्जीतः ! यथा सायमन्येद्युश्च न विपद्यते वह्निः।

—नीतिवाक्यामृत २५।४२

वैसे खाना चाहिए, जिससे संध्या या सवेरे जठराग्नि न बुझे।

५. भक्षितेनापि किं तेन, येन तृप्तिर्न जायते।

उस खाने से क्या लाभ ? जिससे तृप्ति न हो।

६. यद्वा आत्मसम्मितमन्नं तदवति तन्नहिनस्ति,
यद् भूयो, हिनस्ति तद्, यत्कनीयो न तदवति।

शतपथब्राह्मण ६।६।३।१७

आवश्यकतानुसार खाया हुआ अन्न पुष्टि करता है, हानि नहीं।

अधिक होने पर हानि करता है और कम होने पर पुष्टि नहीं करता।

७. **कैलोरी**—हम जो भोजन करते हैं, वह ईंधन का काम करता है। वह धीरे-धीरे जलता रहता है और हमारे जीवित रहने के लिये आवश्यक गर्मी और शक्ति प्रदान करता है। कौनसा भोजन शरीर को कितनी गर्मी प्रदान करता है, इसे कैलोरियों में गिना जाता है। जैसे एक औंस लौकी में ८ कैलोरियाँ और एक औंस बादाम में ८० कैलोरियाँ होती हैं। बच्चों को अधिक कैलोरीयुक्त भोजन की जरूरत होती है। अगर उनकी अवस्था ९ से १२ वर्ष तक की है तो उन्हें प्रतिदिन २५०० कैलोरियों की आवश्यकता पड़ेगी। **—विश्वकोष भाग ३**

८. भारत में खाद्य पदार्थों के प्रति व्यक्ति उपभोग की कैलारी प्रतिदिन १७५१ से बढ़कर २१४५ हो गई। अनाज की प्रति व्यक्ति सप्लाई १२.८ औंस से बढ़कर १५.४ औंस प्रतिदिन हो गई।

—हिन्दुस्तान ३१ अगस्त १९६६

१९ मित भोजन

१. यो मितं भुङ्क्ते, स बहु भुङ्क्ते ।

—नीतिवाक्यामृत २५।३८

जो परिमित खाता है, वह बहुत खाता है ।

२. गुणाश्च षड्मितभुजं भजन्ते, आरोग्यमायुश्च बलं सुखं च
अनाविलं चास्य भवत्यपत्यं, न चैनमाद्यून इति क्षिपन्ति ।

—विदुरनीति ५।३४

परिमित भोजन करनेवाले को ये छः गुण प्राप्त होते हैं—अरोग्य, आयु, बल और सुख तो मिलते ही हैं । उनकी संतान सुन्दर होती हैं तथा यह बहुत खानेवाला है, ऐसे कहकर लोग उसपर आक्षेप नहीं करते ।

३. हियाहारा मियाहारा, अप्पाहारा य जे नरा ।
न ते विज्जा चिगिच्छंति, अप्पाणं ते तिगिच्छगा ।।

—ओघनिर्युक्ति ५७८

जो मनुष्य हितभोजी, मितभोजी एवं अल्पभोजी हैं, उसको वैद्यों की चिकित्सा की आवश्यकता नहीं होती । वे अपने-आप ही चिकित्सक (वैद्य) होते हैं ।

४. कालं क्षेत्रं मात्रां स्वात्म्यं द्रव्य-गुरुलाघवं स्वबलम् ।
ज्ञात्वा योऽभ्यवहार्यं, भुङ्क्ते किं भेषजैस्तस्य ।।

—प्रशमरति १३७

जो काल, क्षेत्र, मात्रा आत्मा का हित, द्रव्य की गुरुता-लघुता एवं अपने बल को विचार कर भोजन करता है, उसे दवा की जरूरत नहीं रहती।

५. बीमारियों की अधिकता पर यदि आपको आश्चर्य हो तो अपनी थाली गिनिये। —**सिनेका**

२० अतिभोजन

१. अनारोग्यमनायुष्य-मस्वर्ग्यं चातिभोजनम् ।

—मनुस्मृति २।५७

अधिक भोजन करना अस्वास्थ्यकर है। आयु को कम करने-वाला और परलोक को बिगाड़नेवाला है।

२. मधुरमपि बहुखादितमजीर्णं भवति ।

अधिक मात्रा में खाया हुआ मधुर पदार्थ की बदहजमी पैदा कर देता हैं।

३. अतिमात्रभोजी देहमग्नि विधुरयति ।

—नीतिवाक्यामृत १६।१२

मात्रा से अधिक खानेवाला जठराग्नि को खराब करता है।

४ बहुभोजी एवं बहुभोगी बहुरोगी होता है।

—डायोजिनस

५. भूखों मर जाना विवशता है और खाकर मरना मूर्खता ।

—आचार्य तुलसी

६. आहार मारै या भार मारै । —राजस्थानी कहावत

७. मनमां आवे तेम वोलवूं नहिं नें भावे तेटलुं खावुं नहिं ।
अन्न पारकुं छे पण पेट कई पारकुं नथी ।

—गुजराती कहावत

८. एकबार खानेवाला महात्मा, दो बार संभलकर खानेवाला

बुद्धिमान और दिन भर बिना विवेक खानेवाला पशु ।

—बुद्ध

९. बार-बार खानेवालों की अपेक्षा कम बार खानेवाले विशेष सुखी होते हैं ।

१०. पांचवें आरेवाले मनुष्यों की अपेक्षा ४-३-२-१ आरेवाले मनुष्य एवं देवता क्रमशः अधिक सुखी हैं, क्योंकि वे कम खाते हैं ।

११. थोवाहारो थोवभणियो य, जो होइ थोवनिद्दो य ।
थोवोवहि-उवगरणो, तस्स देवावि पणमंति ॥

—आवश्यकनिर्युक्ति १२६५

जो साधक थोड़ा खाता है, थोड़ा बोलता है, थोड़ी नींद लेता है और थोड़ी ही धर्मोपकरण की सामग्री रखता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं ।

१२. कम खाना और गम खाना अक्लमंदी है ।

—हिन्दी कहावत

२१ अधिक खानेवाले आदमी

१. बालोत्तरा (मारवाड़) में एक मन घी को तेरह आदमी खा जाते थे एवं वे **मण के तेरिये** कहलाते थे। नये हाकिम ने उनको देखना चाहा। लोगों ने कहा—हजूर घटती का जमाना है। अतः अब तो नौ ही रह गये अर्थात् नौ आदमी ही मन घी खा जाते हैं।

२. बीकानेर में एक सेठानी ने खीर-पूड़े का श्राद्ध किया, **सूंसा, तेजा** एवं उनकी बहन **लाज** तीनों भाई-बहन सवा मन दूध की खीर खा गये।

३. कलकत्ते में एक राजस्थानी ब्राह्मण ने खाना खाकर ठाकुर से दो पापड़ मांगे। ठाकुर ने कहा—फुलके चाहे जितने ले लो, पापड़ दो नहीं मिल सकते। विवाद बढ़ा ब्राह्मण ने ५९ फुलके खाए। ठाकुर ने माफी माँगी एवं दूसरा पापड़ देकर पल्ला छुड़ाया।

४. हरियाणा के एक खिलाड़ी ने परस्पर विवाद करके ६० रोटियाँ खाईं। विस्मित लोगों के पूछने पर कहा—ये कोई रोटियां थोड़ी ही हैं, ये तो बुरकियाँ हैं।

—हिन्दुस्तान, ३० मार्च, १९७१

५. गंगाशहर के **जगन्नाथ** वैद्य विवाह के प्रसंग पर रतनगढ़ में पौने दो धामा बादाम का सीरा खा गए। (एक धामे में लगभग ३-४ सेर सीरा समाता है।)

६. डूंगरगढ़-निवासी छोगमलजी-मूलचन्दजी भादानी ५-५ सेर बादाम की कतलियाँ खा जाते थे। हरखचन्दजी भादानी ५-५ सेर आमरस पी जाते थे।

७. मघवागणी **पायली** पधारे। दीक्षार्थी **भानजी** का पक्का पानी और दाल-बाटियाँ अधिक देखकर रतनगढ़ के श्रावक कुछ शंका-शील हुए। दीक्षार्थी २४ बाटियाँ खाकर एक घड़ा पानी एक साथ पी गए। श्रावकों की शंका दूर हुई।

८. **चैनजी-चिमनजी** स्वामी ने चुरू में गुरुमुखरायजी कोठारी के यहाँ से दूध, दही, मक्खन, ठंडी रोटियाँ आदि १८ सेर करीब वजन की गोचरी की एवं बिहार करके शहर के बाहर जाकर नाश्ता कर लिया। कोठारीजी ने पूछा कमी तो नहीं रही ? मुनि बोले—नाश्ता हुआ है, गोचरी तो आगे जाकर करेंगे।

९. **चैनजी** स्वामी एक बार आहार करने के बाद सवा सेर घी (अधिक आ गया था) डेढ़ सेर चीनी में मिलाकर खा गए। गृहस्थाश्रम में उन्होंने शर्त लगाकर गेहूँ से भरी हुई गाड़ी को अपनी पीठ पर उठाकर सारे गेहूँ ले लिए थे।

१०. छोटूजी **स्वामी** (जयपुर-निवासी) दुपहरी (टीफन) में पाँच रुपये की बर्फी खा जाते थे। उन्होंने दीक्षा की अर्ज की,

तब जयाचार्य ने कहा, बर्फी कहाँ से मिलेगी ? छोटूजी बोले, बर्फी न सही, दो रोटी तो मिलेंगी।

११. **बैंगकाक** के सीमावर्ती नगर **लोबपुर** से आया हुआ एक ४२ वर्षीय ग्रामीण सामान्यतया खानेवाले ३० मनुष्य के बराबर भोजन खा जाता है। एक बार में तीन गेलन पानी या सोडा-लैमन जैसे मधुरपेय की तीन-तीन पेटियाँ पी जाता है। **—नवभारत टाइम्स, २४ मई, सन् १९६५**

१२. विश्व में अधिक गेहूँ खानेवाला देश फ्रांस है और अधिक चीनी खानेवाला पंजाब है।

२२ राक्षसी-खुराकवाले व्यक्ति

१. अखाड़े में **किंगकांग** के नाम से मशहूर "स्माईल स्जाया" नामक व्यक्ति जिसे लोग दैत्याकार होने से **इन्सानी-पहाड़** भी कहा करते थे। १५ मई को सिंगापुर के अस्पताल में दो रुग्णशय्याओं पर मरा।

इस किंगकांग का वजन था ४०० पौंड। यह दुनियाँ का सबसे शानदार कुश्तीबाज था। कहते हैं कि वह नास्ते में तीन दर्जन कच्चे अण्डे और रात के भोजन में ६ मुर्गे खाता था। वह हर रोज १०-१५ पौंड फल, एक पौंड पनीर और दो दर्जन पाइन्ट दूध भी भोजन में लेता था।

२. रुस्तमेजमां **गामा** का दैनिक आहार था-बकरे की ४० टांगों का शोरबा, पाँच सेर गोश्त, २५ सेर दूध, एक सेर बादाम, आधा सेर घी और ३० पौंड फल।

३. २७५ पौंड वजनी रुस्तमेहिन्द **दारासिंह** जिसने, किंगकांग को कई वर्ष पूर्व फ्रीस्टाईल कुश्ती में हराया था वर्जिस कर लेने के बाद हर रोज चार परिन्दों का शोरबा आधा किलो बादाम, पाव किलो घी, चार किलो दूध और दस किलो फल लेता है।

४. एक डाक्टर ने मुआयना करके बताया कि फ्रांस के **एम० डिलेयर** का पेट गाय के जैसा था। वह दो घण्टों में ४२० पिन्ट जल पी जाता था। दस मिनटों में सौ गिलास बीयर पी जाता था। उसने दो दिनों में पावरोटी के २१० टुकड़े खा लिये थे। अपना आहार बदल-बदल कर लेने के शौक में वह जिन्दा मछलियां, कछुए तथा मेढ़क खा जाता था। —हिन्दुस्तान, ११ जुलाई, १९७०

२३ मुफ्त का खाने वाले

१. कॉक्स मेक फ्री आफ हार्सेस कार्न। —अंग्रेजी कहावत
पार के पैसे दीवाली।

२. भररे पेटा जांरे दिवसा। —मराठी कहावत
मुफ्त का खाकर दिन काटनेवालों के लिये।

३. परघर चौड़ा चीगटा, घर रा धर दे आंडा।
परघर ब्याह मंड्यो, काकाजी, करो खीचड़ी में खांडा।

४. साठे कोसे लापसी, सौए कोसे सीरो;
मिलियां सूं छोड़े नही, नणदबाई रो वीरो।

—राजस्थानी दोहे

५. दीखत दीखे टाबर्यो, पगां सूधो पोलो।
एक बहन ने छोटे से साधु को भोजन का निमन्त्रण दिया। साधु ने घर की सारी खाद्यसामग्री खा डाली तब बहन ने कहा—
पीस्यो पोयो सगलो खाधो, अब तो कांयक बोलो।
साधु ने उत्तर दिया—
म्हे छां साधु रामानन्दी तीन लोक में डोलां,
थां रांड रो हीयो फूट्यो, धाप्या हुवां तो बोलां।

—राजस्थानी दोहे

६. भोजनं कुरु दुर्बुद्धे ! मा शरीरे दयां कुरु !
परान्नं दुर्लभं लोके, शरीराणि पुनः-पुनः ॥

अरे मूर्ख ! भोजन करले, शरीर पर दया मत कर, क्योंकि संसार में पराया अन्न दुर्लभ है; शरीर तो फिर-फिर के मिलता ही रहता है।

माले मुफ्त दिले बेरहम। —उर्दू कहावत

मुफ्त री मुर्गी काजीजी ने हलाल। —राजस्थानी कहावत

मुफ्त का चन्दन घस बे लाला।
तूं भी घस, तेरे बाप को बुलाला। —हिन्दी कहावत

२४ रात्रिभोजन-निषेध

१. घोरान्धकार रुद्धाक्षैः, पतन्तो यत्र जन्तवः ।
नैव भोज्ये निरीक्ष्यन्ते, तत्र भुञ्जीत को निशि ॥

—योगशास्त्र ३।४६

रात्रि में घोर अन्धकार के कारण भोजन में गिरते हुए जीव आँखों से दिखाई नहीं देते, उस समय कौन समझदार व्यक्ति भोजन करेगा !

२. नैवाहुतिर्न च स्नानं, न श्राद्धं देवतार्चनम् ।
दानं वा विहितं रात्रौ, भोजनं तु विशेषतः ॥

—योगशास्त्र ३।५६

अन्यमत में कहा है कि रात्रि में होम, स्नान, श्राद्ध देवपूजन या दान करना भी उचित नहीं है, किन्तु भोजन तो विशेषरूप से निषिद्ध है ।

३. देवैस्तु भुक्तं पूर्वाह्णे, मध्याह्ने ऋषिभिस्तथा ।
अपराह्णे च पितृभिः, सायाह्ने दैत्य-दानवैः ॥
संध्यायां यक्ष-रक्षोभिः, सदा भुक्तं कुलोद्वह !
सर्ववेलां व्यतिक्रम्य, रात्रौ भुक्तमभोजनम् ॥

—योगशास्त्र ३।५८-५९

हे युधिष्ठिर दिन के पूर्वभाग में देवों ने, मध्याह्न में ऋषियों ने

अपराह्न में पितरों ने, सायंकाल में दैत्यों-दानवों ने, तथा संध्या-दिन रात की संधि के समय यक्षों-राक्षसों ने भोजन किया है। इन सब भोजनबेलाओं का उल्लंघन करके रात्रि में भोजन करना अभक्ष्य-भोजन है।

४. हृन्नाभिपद्मसंकोच-श्चण्डरोचिरपायतः।
अतो नक्तं न भोक्तव्यं, सूक्ष्मजीवादनाऽपि।

—**योगशास्त्र ३।६०**

आयुर्वेद का अभिमत है कि शरीर में दो कमल होते हैं--हृदय-कमल और नाभिकमल। सूर्यास्त हो जाने पर ये दोनों कमल संकुचित हो जाते हैं अतः रात्रि-भोजन निषिद्ध है। इस निषेध का दूसरा कारण यह भी है कि रात्रि में पर्याप्त प्रकाश न होने से छोटे-छोटे जीव भी खाने में आ जाते हैं। इसलिए रात्रि में भोजन नहीं करना चाहिए।

५. अत्थंगयम्मि आइच्चे, पुरत्था य अणुग्गए।
आहारमाइयं सव्वं, मणसा वि न पत्थए।

—**दशवैकालिक ८।२८**

सूर्य के अस्त हो जाने पर और प्रातःकाल सूर्य के उदय न होने तक सब प्रकार के आहारादि की साधु मन से भी इच्छा न करे।

६. रात्रि के समय यदि भोजन का उद्गार (गुचलकी) आ जाए तो थूक देना चाहिए। न थूककर वापिस-निगल जानेवाले साधु-साध्वी को गुरु-चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आता है। —**निशीथ १०।३५**

७. सूर्य उदय हुआ जान कर साधु कदाच आहार को याचकर खाने लगे, फिर यदि पता लग जाए कि सूर्य उदय नहीं हुआ

तो आहार को परठ देना चाहिए। चाहे मुंह में हो, हाथों में हो या पात्र में हो। न परठनेवाले साधु-साध्वी को गुरु-चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आता है।

—निशीथ १०।३१-३२

८. जे भिक्खू राइ भोयणस्स वन्नं वदई वदंतं वा साइज्जई।

—निशीथ ११।७६

जो साधु रात्रिभोजन की प्रशंसा करे एवं प्रशंसा करते हुए का अनुमोदन करे तो उसे मासिक-प्रायश्चित्त आता है।

९. किं जैनैः रजनीभोजनं भजनीयम् !

क्या जैनलोगों को रात्रिभोजन करना चाहिए? नहीं-नहीं, कदापि नहीं।

१०. नोदकमपि पातव्यं, रात्रौ नित्यं युधिष्ठिर !
तपस्विनां विशेषेण, गृहिणां च विवेकिनाम् ॥

हे युधिष्ठर? रात के समय पानी भी नहीं पीना चाहिए, फिर भोजन का तो कहना ही क्या? यह बात साधुओं को और विवेकी गृहस्थों को विशेष ध्यान देने योग्य है।

११. मृते स्वजनमात्रेऽपि, सूतकं जायते किल।
अस्तं गते दिवानाथे, भोजनं क्रियते कथम्?
अस्तं गते दिवानाथे, आपो रुधिरमुच्यते।
अन्नं मांससमं प्रोक्तं, मार्कण्डेयमहर्षिणा॥
रक्तीभवन्ति तोयानि, अन्नानि पिशितानि च।
रात्रौ भोजनसक्तस्य, ग्रासे तन्मांसभक्षणात्॥

स्वजन के मरने पर भी सूतक होता है तो फिर सूर्य के अस्त होने पर (मर जानेपर) भोजन कैसे किया जाए ?

सूर्य अस्त होने के बाद मार्कण्डेय ऋषि ने पानी को खून एवं अन्न कों मांस के समान कहा है , क्योंकि रात्रिभोजन में आसक्त व्यक्ति के ग्रास में किसी जीव का मांस खाया जाने से पानी खून एवं अन्न मांसवत् हो जाता है ।

२५ रात्रि भोजन से हानि

१. मेधां पिपीलिका हन्ति, यूका कुर्याज्जलोदरम् ।
कुरुते मक्षिका वान्ति, कुष्ठरोगं च कोलिकः ॥५०॥
कण्टको दारुखण्डं च, वितनोति गलव्यथाम् ।
व्यञ्जनान्तर्निपतित-स्तालु विद्ध्यति वृश्चिकः ॥५१॥
विलग्नश्च गले बालः, स्वरभङ्गाय जायते ।
इत्यादयो दृष्टदोषाः, सर्वेषां निशि भोजने ॥५२॥

—योगशास्त्र ३

भोजन के साथ चिउंटी खाने में आ जाय तो वह बुद्धि का नाश करती है, जूं जलोदर रोग उत्पन्न करती है, मक्खी से वमन हो जाता है और कोलिक-छिपकली से कोढ़ उत्पन्न होता है ॥५०॥ काँटे और लकड़ी के टुकड़े से गले में पीड़ा उत्पन्न होती है, शाक आदि व्यंजनों में बिच्छू गिर जाए तो वह तालु को बेध देता है ॥५१॥

गले में बाल फंस जाए तो स्वर भंग हो जाता है। रात्रि भोजन में पूर्वोक्त अनेक दोष प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं ॥५२॥

२. उलूक-काक-मार्जार-गृध्र-शम्बर-शूकराः ।
अहि-वृश्चिक-गोधाश्च, जायन्ते रात्रिभोजनात् ॥

—योगशास्त्र ३।६७

रात्रिभोजन करने से मनुष्य मरकर उल्लू, काक, बिल्ली,

गीध, सम्बर, शूकर, सर्प, बिच्छू और गोह आदि अधम गिने जानेवाले तिर्यञ्चों के रूप में उत्पन्न होते हैं।

३. इन्दौर में पुजारी का दूध साँप ऐंठ गया, रात को उसे पीने से पुजारी मर गया।

४. उत्तरप्रदेश में रांधते समय खीर में साँप गिर जाने से काफी बराती मर गए।

५. मुजफ्फरनगर के गाँव में रात को पानी पीते समय बिच्छू आ गया एवं गले में डंक मारने से, पानी पीनेवाला व्यक्ति मर गया।

६. गोगुंदा (उदयपुर) में रात को खाते समय एक भाई के मुंह में आम के आचार की जगह मरी हुई चुहिया आ गई।

२६ रात्रिभोजन के त्याग से लाभ

१. ये रात्रौ सर्वदाहारं, वर्जयन्ति सुमेधसः।
तेषां पक्षोपवासस्य, फलं मासेन जायते।

जो रात्रि भोजन का सदा त्याग कर देते हैं, उनको महीने में पन्द्रह दिनों के उपवास का फल यहीं मिल जाता है।

२. एक भक्ताशनान्नित्य--मग्निहोत्रफलं भवेत्।
अनस्तभोजनो नित्यं, तीर्थयात्राफलं लभेत्।

रात्रिभोजन का त्याग करनेवाले को अग्निहोत्र का एवं तीर्थ-यात्रा का फल हमेशा मिलता रहता है।

२७ भूख

१. खुहासमा वेयणा नत्थि ।

भूख के समान कोई भी दूसरी वेदना-पीड़ा नहीं है ।

२. नास्ति क्षुधासमं दुःखं, नास्ति रोगः क्षुधासमः ।

भूख जैसा कोई दुःख नहीं और भूख जैसी कोई बीमारी नहीं ।

३. जिघच्छा परमा रोगा । —**धम्मपद १५।७**

भूख सबसे बड़ा रोग है ।

४. आहारमग्निः पचति, दोषानाहारवर्जितः ।
धातून् क्षीणेसु दोषेषु, जीवितं धातुसंक्षये । —**आयुर्वेद**

जठराग्नि आहार को पचाती है । आहार के अभाव में दोषों को, उनके अभाव में धातुओं को और उनके क्षीण होने पर जीवन को खा जाती है ।

५. या सद्रूपविनाशिनी श्रुतहरी पञ्चेन्द्रियोत्कर्षिणी,
चक्षुः - श्रोत्र-ललाट-दैन्यकरणी वैराग्यमुत्पादिनी ।
बन्धूनां त्यजनी विदेशगमनी चारित्रविध्वंसिनी,
सेयं बाध्यति पञ्चभूतदमनी क्षुत् प्राणसंहारिणी ।
—**चन्दकेवलीरास**

जो रूप का विनाश करनेवाली है, ज्ञान का हरण करनेवाली

है, पांच इन्द्रियों का उत्कर्षण करनेवाली है, आंख-कान-नाक को हीन-दीन बनानेवाली है, वैराग्य को उखाड़ फेंकनेवाली है, स्वजन बन्धुओं से दूर करनेवाली है, विदेशों में भटकानेवाली है, चारित्र का ध्वंस करनेवाली है और पांचों भूतों का दमन करनेवाली है। वह प्राण-संहारिणी यह क्षुधा सारे जगत को पीड़ित कर रही है।

६. अशनाया वै पाप्मा मतिः। —ऐतरेय-ब्राह्मण २।२

भूख ही सब पापों की जड़ एवं बुद्धि को नष्ट करनेवाली है।

७. आगी बड़बागि से बड़ी है भूख पेट की। –तुलसी कवितावली

८. भूख रांड भूंडी, आंख जाय ऊंडी।
पग थाय पाणी, हैड़े नो आवे बाणी ॥
बाजरानो रोटलो, तांदला नी भाजी।
एटला बाना जस तो मन थाय राजी ॥ —गुजराती पद्य

९. काम न देखे जात-कुजात, भूख न देखे बासी भात।
नींद न देखे टूटी खाट, प्यास न देखे धोबी घाट।
—हिन्दी कहावत

१० ऊंघ न जुवै साथरो, भूख न जुवै भाखरो।
—गुजराती कहावत

११. छुहा जाव सरीरं, ताव अत्थि। —आचाराङ्ग चूलिका १।२।२
जब तक शरीर है, तब तक भूख है।

१२. बुभुक्षां जयते यस्तु, स स्वर्गं जयते ध्रुवम्।
—महाभारत-अश्वमेधपर्व ९०।९१

जो भूख को जीत लेता है, वह निश्चितरूप से स्वर्ग को जीत लेता है।

२८ भूख में स्वाद

१. सब सूं मीठी भूख । —राजस्थानी कहावत

२. भोजन के लिये सबसे अच्छी चटनी भूख है । —सुकरात

३. भूख मीठी क लापसी । —राजस्थानी कहावत

४. सम्पन्नतरमेवान्नं, दरिद्रा भुञ्जते सदा,
क्षुत् स्वादुतां जनयति, साचाढ्येषु सुदुर्लभा ।

— विदुरनीति २।५०

गरीब व्यक्ति जो कुछ खाते हैं, स्वादिष्ट ही खाते हैं । भूख भोजन को स्वादिष्ट बना देती है । धनिकों को वह भूख दुर्लभ है । उन्हें प्रायः भूख कम लगती हैं ।

५. तरुणं सर्षपशाकं, नवौदनपिच्छलानि च दधीनि ।
अल्पव्ययेन सुन्दरि ! ग्राम्यजनो मिष्ठमश्नाति ॥

ताजा सरसों का शाक और थिरकी सहित दही में बनाये हुए नये भातों के भोजन खाकर ग्रामीण लोग थोड़े ही खर्चे में मीठा भोजन कर लेते हैं ।

६. दि फुल स्टमक लूथ्स दि हनी कोम्ब । —अंग्रेजी कहावत

भरे पेट पर शक्कर खारी ।

७. अमीर भूख की खोज करता है, गरीब रोटी की खोज करता है । —डेनिस कहावत

८. एक वे, जिनके पास भूख से ज्यादा भोजन है।
दूसरे वे, जिनके पास भोजन से ज्यादा भूख है।
—निकोलस चेम्फर्ट

९. खावे जीती भूख, सोवे जीती नींद। —राजस्थानी कहावत

१०. मारवाड़ का एक चारण २६ रोटियां खाता था। दुष्काल पड़ा। घरवाले उससे नाराज होने लगे। ठाकुर साहब के कहने पर उसने सात-सात दिन से एक-एक रोटी घटानी शुरू कर दी। आखिर तीन रोटी पर आ गया।

भूखा

१. भूखा सो रूखा। —राजस्थानी कहावत

२. भूख्ये भक्ति न थाय मुरारी, न थाय जरारी।

—गुजराती कहावत

३. भूखां भजन न होय गोपाला ;

ले ले अपनी कंठी-माला। —राजस्थानी कहावत

४. ढिड ना पईयां रोटीयां, सबे गल्लां खोटीयां।

—पंजाबी कहावत

५. भूखी कूतरी भोटीला खाय।

६. भूख्यानें शुं लूखुं। —गुजराती कहावतें

७. कोफतारा नानेतिही कोफतस्त। —पारसी कहावत

भूखे के लिये सूखी रोटी भी मिठाई के बराबर है।

८. भूखो धायां पतीजे। —राजस्थानी कहावत

९. भूखो मारवाड़ी गावै, भूखो गुजराती सूवै,

भूखो बंगाली भात-भात पुकारे।

१०. हाथ सूको र टाबर भूखो। —राजस्थानी कहावतें

११. बुभुक्षितः किं द्विकरेण भुङ्क्ते।

भूखा क्या दो हाथों से खाता है!

३० भूखा क्या नहीं करता ?

१. त्यजेत् क्षुधार्ता महिला स्वपुत्रं,
खादेत् क्षुधार्ता भुजगी स्वमण्डम् ।
बुभुक्षितः किं न करोति पापं,
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति ॥ —हितोपदेश ४।५६

क्षुधा से पीड़ित स्त्री अपने पुत्र को त्याग देती है, सर्पिणी अपने अण्डों को खा जाती है। भूखा व्यक्ति क्या पाप नहीं करता ? क्षीण-पुरुष निर्दय हो जाते हैं।

२. अजीगर्तः सुतं हन्तु-मुपासर्पद् बुभुक्षितः । —मनुस्मृति १०।१०५

भूख से व्याकुल अजीगर्त ऋषि ने अपने पुत्र शुनःशेप को यज्ञ में होम करने के लिए बेचा।

३. क्षुधार्तश्चात्तुमभ्यागाद् विश्वामित्रः श्वजाघनीम् ।
चाण्डालहस्तादादाय, धर्माधर्म-विचक्षणः ॥
—मनुस्मृति १०।५८

भूख से व्याकुल विश्वामित्र ऋषि चाण्डाल के हाथ से लेकर कुत्ते की जांघ का मांस खाने को तैयार हुए।

४. भूख से पीड़ित होकर मृत बालिका को उसके बाप-भाई खा गये। —ज्ञाताश्रुत अ० १

५. सन् १९४५ के लगभग बंगाल में खाद्याभाव के कारण एक माता अपने बच्चे को पकाकर खा गई।

पेट

१. पाँव दिये चलने-फिरने कहुँ,
हाथ दिये हरिकृत्य करायो।
कान दिये सुनिये प्रभु को यश
नैन दिये तिन मार्ग दिखायो॥
नाक दियो मुख सोभन कारन,
जीभ दई प्रभु को गुण गायो।
सुन्दर साझ दियो परमेश्वर,
पेट दियो कहा पाप लगायो॥

२. बड़े पेट के भरन को, है **रहीम** दुख बाढ़ि।
यातें हाथी हिहर के, दिये दाँत द्वै काढ़ि॥

३. अस्य दग्धोदरस्यार्थे, किं न कुर्वन्ति मानवाः।
वानरीमिव वाग्देवीं, नर्तयन्ति गृहे-गृहे॥
इस पापी पेट के लिए मनुष्य क्या नही करते ! सरस्वतीदेवी को भी वे वानरी की तरह घर-घर नचा रहे हैं।

४. कथन कला वोह कूर, किता मुख होय कवीश्वर,
सुत दासी नो सोय, न्याय-सुध होय नरेश्वर।
कायर नैं सूरा कहै, कहै सूम नैं दाता,
नरां घणां री नार, कहै आ लिछमी माता।

जाचवा काज जिरण-जिरण विधे, हुलस हाथ हेठै धरै ।
दुभर पेट भरवा भणीं, करम एह मानव करै ॥१॥
रचरण प्रवहरण रचै, वोह नर बाहरण बैसे,
अथग नीर - आगमे, पूर जोखा में पैसे ।
किर्णाहक वाय-कुवाय, कोर कालेजा कंपै,
उत्थ न को आधार, जीव दुख किरण सूं जंपै ।
जल में नाव डूबै जरै, बिरलो कोइक ऊबरै ।
दुभर पेट भरवा भणीं, करम एह मानव करै ॥२॥
राते परघर जाय, गीत गावै गीतेरण ।
रावरण का रोवणां अधिक सीखे ऊगेरण ॥
खांसै बैठो कन्त, मेल्ह पर-मंदिर जावै ।
ऊँची चढ़ आवास, पुरुष पारका मल्हावै ॥
ऊँचो साद तागें अधिक, एक पईसा ऊपरै ।
दुभर पेट भरवा भणीं, करम एह मानव करै ॥३॥

५. सौ मणनी कोठी भराय पण सवा सेर नी कोठी नुं पुरूं न थाय ।

६. दरिया नुं ताग आवै पण छः तसु छाती नुं ताग न आवै ।

७. पेट माटे लंका जवुं पड़े ।

८. पेट भर्‌युं एटले पाटण भर्‌युं ।

९. आप जम्यां एटले जगत जम्यां ।

१०. सौनुं हाथ मोंमणीं बले । —गुजराती कहावतें

११. बेली टीचैज ऑल आर्ट्स । —अंग्रेजी कहावत
पेट सब हुन्नर सिखा देता है ।

१२. पेट थी सहू हेठ, पेट करावे बेठ ।

१३. पेहली पेट नें पछी सेठ । —गुजराती कहावतें

१४. पहली पेट पूजा, पछै देव दूजा । —राजस्थानी कहावत

१५. लज्जा स्नेहः स्वरमधुरता बुद्धयो यौवनश्रीः,
कान्ता संगः स्वजनममता, दुःखहानिर्विलासः ।
धर्मः शास्त्रं, सुरगुरुमतिः शौचमाचारचिन्ता,
पूर्णे सर्वे जठर पिठरे प्राणिनां सभवन्ति ॥
—पञ्चतंत्र ५।९२

लज्जा, स्नेह, स्वर का मिठास, काम करने में बुद्धि, जवानी की शोभा, स्त्री संग, स्वजनों का अपनत्व, दुःख नाश, खेलकूद आदि विलास, क्षमा आदि धर्म, वेद आदि शास्त्र, कर्त्तव्य का विवेचन करनेवाली बुद्धि, बाह्याभ्यन्तर शुद्धि और सदाचरण की चिन्ता ये सब बातें उदररूपी कुंड भर जाने पर ही संभवित होती हैं ।

१६. जब पेट भरा होता है तभी–
आदमी को धर्म और ईमान सूझता है,
जब मन भरा होता है तभी–
आदमी को दर्शन और विज्ञान सूझता है,
आत्मा परमात्मा मानवता और
नैतिकता की बातें यूं बहुत अच्छी हैं;
लेकिन हकीकत यह है कि–
भूखे पेट को रोटी मे ही भगवान सूझता है !
—'खुले आकाश में' से

१७. काकड़ी-चीभड़ कापी ने जोवाय पण चीरी ने जोवाय नहीं ।

—गुजराती कहावत

१८. जठरं को न विभर्ति केवलम् ।

मात्र पेट को कौन नहीं भरता ? कुत्ते भी भर लेते हैं ।

३२ पानी

१. पानी समदर्शी है, इसकी दृष्टि में ऊंच-नीच, गरीब-अमीर का कोई भेद-भाव नहीं होता। यह समानरूप से सब की प्यास बुझाता है।

२. पानी मिलनसार है। यह जिसके साथ मिलता है, उसी के अनुरूप बन जाता है।

३. पानी से बिजली पैदा होती है तथा इसमे कभी खड्डा नहीं पड़ता। चाहे नीचे कितना ही गहरा खड्ढा हो, पानी ऊपर बराबर रहेगा।

४. पानी औषधि है। अंगुली आदि कटने पर या तेज बुखार होने पर इसकी पट्टी लगाई जाती है।

ऋगवेद १०।१३।७।६ में कहा है—

> आप इद्वा भेषजी आपो अमी वा चात नीः।
> आप सर्वस्वय भेषजी स्तास्तेकण्वतु भेषजम्॥

जल औषधि है, वही रोगनाश का कारण है, वही सकल व्याधियों की औषधि है। हे जल! तुम लोगों की औषधि बनो।

५. अजीर्णे भेषजं वारि, जीर्णे वारि बलप्रदम्।
भोजनेचामृतंवारि, भोजनान्ते विषं जलम्॥

—चाणक्यनीति ८।७

जलपान अजीर्ण में औषधि है, पचजाने पर बल देनेवाला है, भोजन के बीच में अमृत है, किन्तु भोजन के अन्त में जहर के समान अनिष्ट करनेवाला है।

६. प्रातकाल खटिया तै उठिके, पिये तुरत जो पानी।
ता घर वैद्य कबहुँ न आवै, बात **घाघ** कहे जानी ॥

—घाघकवि

७. पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम्।

—चाणक्यनीति १४।१

पृथ्वी में तीन रत्न हैं—जल, अन्न और सुभाषित।

८. पानी के विना संसार में कुछ भी नहीं है—

एक बार बादशाह ने पूछा--२७ नक्षत्रों में से वर्षा के १० नक्षत्र निकाल दें तो शेष कितने रहे ? बीरबल ने कहा—शून्य। तत्त्व यह है कि दस नक्षत्रों में ही वर्षा होती है। उनके अभाव में वर्षा न होगी और संसार शून्य हो जायगा।

९. शैत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः, स्वाभाविकी स्वच्छता,
किं ब्रूमः शुचितां व्रजन्त्यशुचयः, सङ्गेन यस्यापरे।
किं चातः परमस्ति ते शुचिपदं, त्वं जीवितं देहिनां,
त्वं चेन्नीच पथेन गच्छसि पयः ! कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥

हे जल ! तेरे में सहज शीतलता है, स्वाभाविक स्वच्छता है। तेरी पवित्रता के लिए क्या कहें ! तेरा संग होते ही अशुचि पदार्थ दूर हो जाते हैं। इससे बढ़कर तेरा क्या पवित्र पद हो ! तू ही देहधारियों का जीवन है। हे जल ! इतना कुछ होने पर

भी यदि तू नीचे की ओर जाता है, तो अब तुझे कौन रोक सकता है ?

१०. वटेमार्गु ने दाणी रोके, के पाणी रोके।

—गुजराती कहावत

११. फारस की खाड़ी के उत्तर कुवेत रियासत में यंत्र द्वारा दस लाख गैलन खारा पानी मीठा बनाया जाता है।

—नवभारतटाइम्स, १ मई, १९५५

१२. सबसे ऊँचा झरना अफ्रीका में जो आउमान पर्वत से झरता है, एक मील ऊँचा है।

१३. दुनियाँ की सबसे बड़ी झील अमरीका में लेकसुपीरियर है तथा भारत राजस्थान में **जयसमंद** (५४ वर्गमील) है।

१४. फिलस्तीन की डेडसी नामक झील का पानी बेहद खारा होने के कारण इतना भारी है कि आदमी उसमें तैर नहीं सकता और डूब भी नहीं सकता।

—सर्जना, पृष्ठ ३३

१५. एक एकड़ भूमि में होनेवाली एक इंच वर्षा के पानी का भार लगभग २२६५१२ पौंड होता है।

—पंजाबकेसरी, ६ दिसम्बर १९७०

१६. न्यूजीलेंड में एक विचित्र झरना है, जिसका प्रवाह बंद हो तो थोड़ा-सा साबुन फैंकने से वह गरजता हुआ २०० फुट तक ऊँचा उठता है, लेकिन पत्थर आदि फैंकने से हिलता भी नहीं। —दैनिक हिंदुस्तान, ३० मई, सन् १९७१

तओ समुद्दा पगईए उदगरसेणं, पण्णत्ते तं. जहा—कालोदे, पुक्खरोदे, सयंभुरमणे। तओ समुद्दा बहुमच्छकच्छभाइण्णा पण्णत्ता, तं जहा—लवणे, कालोदे, सयं भुरमणे।

—स्थानाङ्ग ३।२

तीन समुद्र स्वभाव से ही सामान्य पानी के समान स्वादवाले हैं—(१) कालोदधि (२) पुष्करोदधि (३) स्वयंभूरमणसमुद्र। तीन समुद्र मच्छ-कच्छप आदि जलजन्तुओं से अधिक भरे हुए हैं--(१) लवणसमुद्र, (२) कालोदधि, (३) स्वयंभूरमणसमुद्र।

तीसरा कोष्ठक

१ मोक्ष-(मुक्ति)

१. एगे मोक्खे। —स्थानांग १।१

आठों कर्मों के नाशरूप **मोक्ष** एक है।

२. **पाँच प्रकार की मुक्ति :—**

१. **सालोक्यः**– भगवान के समान लोक-प्राप्ति।

२. **सार्ष्टिः**– भगवान् के समान ऐश्वर्य-प्राप्ति।

३. **सामीप्यः**– भगवान् के समीप स्थान-प्राप्ति।

४. **सारूप्यः**– भगवान् के समान स्वरूप-प्राप्ति।

५. **सायुज्यः**– भगवान् में लय-प्राप्ति।

—भागवत ३।२६।१३

२ मोक्ष की परिभाषाएँ

१. विवेगो मोक्खो । —आचाराङ्ग चूर्णि १।७।१

वस्तुतः **विवेक** ही **मोक्ष** है ।

२. सव्वारंभ-परिग्गहणिक्खेवो, सव्वभूतसमया य ।
एक्कग्गमणसमाहाणया य, अह एत्तिओ मोक्खो ।।

—बृहत्कल्पभाष्य ४५८५

सब प्रकार के आरम्भ और परिग्रह का त्याग, सब प्राणियों के प्रति **समता** और **चित्त की एकाग्ररूपसमाधि**—बस इतना मात्र **मोक्ष** है ।

३. कृत्स्नकर्मक्षयादात्मनः स्वरूपावस्थानं मोक्षः ।

—जैनसिद्धांतदीपिका ५।३९

समस्त कर्मों का फिर बन्धन हो-ऐसा जड़ामूल से कर्मक्षय होने पर आत्मा जो अपने ज्ञान-दर्शनमय-स्वरूप में अवस्थित होती है, उसका नाम **मोक्ष** है ।

४. अज्ञानहृदयग्रन्थि—नाशो मोक्ष इतिस्मृतः । **—शिवगीता**

हृदय में रही हुई अज्ञान की गाँठ का नाश हो जाना ही मोक्ष कहा गया है ।

५. आत्मन्येवलयो मुक्ति-र्वेदान्तिक मते मताः । **—विवेकविलास**

वेदान्तिकमत के अनुसार परब्रह्मस्वरूप ईश्वरीय शक्ति में लीन हो जाना मुक्ति है ।

६, भोगेच्छा मात्र कोबन्ध-स्तत्त्यागो मोक्ष उच्यते ।

—योगवाशिष्ठ ४।३५।३

भोग की इच्छामात्र बन्ध है और उसका त्याग करना मोक्ष है ।

७. प्रकृति वियोगो मोक्ष : । —षड्दर्शन-समुच्चय ४३

सांख्यदर्शन के अनुसार आत्मारूप पुरुषतत्त्व से प्रकृतिरूप पुरुष-तत्त्व भौतिकतत्त्व का अलग होजाना मोक्ष है ।

८. कामानां हृदये वासः, संसार इति कीर्तितः ।
तेषां सर्वात्मना नाशो, मोक्ष उक्तो मनीषिभिः ।।

हृदय में कामों-शब्दादि विषयों का होना संसार है एवं उनका समूल नष्ट हो जाना मोक्ष है--इस प्रकार मनीषियों ने कहा है ।

९. चित्तमेव हि संसारो, रागादिक्लेशवासितम् ।
तदेव तैर्विनिर्मुक्तं, भवान्त इति कथ्यते ।।

—बौद्ध

रागादि क्लेशयुक्त चित्त ही संसार है । वह यदि रागादिमुक्त हो जाय तो उसे भवान्त अर्थात् मोक्ष कहते हैं ।

१०. नाशाम्बरत्वे न सिताम्बरत्वे, न तर्कवादे न च तत्त्ववादे ।
न पक्षसेवाश्रयणेन मुक्तिः, कषायमुक्तिः किलमुक्तिरेव ।।

—हरिभद्रसूरि

मुक्ति न तो दिगम्बरत्व में है, न श्वेताम्बरत्व में, न तर्कवाद में है, न तत्त्ववाद में तथा न ही किसी एक पक्ष की सेवा करने में है । वास्तव में क्रोध आदि कषायों से मुक्त होना ही मुक्ति है ।

३ मोक्ष-स्थान

१. अत्थि एगं धुवं ठाणं, लोगग्गंमि दुरारुहं।
नत्थि जत्थ जरा-मच्चू, वाहिणो वेयणा तहा ॥ ८१ ॥
निव्वाणंति अबाहंति, सिद्धीलोगग्गमेव य।
खेमं सिवं अणाबाहं, जं चरंति महेसिणो ॥ ८३ ॥

—उत्तराध्ययन २३

लोक के अग्रभाग पर एक ऐसा दुरारोह-ध्रुवस्थान है, जहाँ जरा, मृत्यु, व्याधि और वेदना नहीं है ॥८१॥

वह स्थान निर्वाण, अव्याबाध, सिद्धि, लोकाग्र, क्षेम, शिव और अनाबाध नाम से विख्यात है। उसे महर्षि लोग प्राप्त करते हैं ॥८३॥

२. तं ठाणं सासयं वासं, जं संपत्ता न सोयंति।

—उत्तराध्ययन २३।८४

वह मोक्षस्थान शाश्वत निवासवाला है, जिसे पाकर आत्माएं शोकरहित हो जाती हैं।

३. अविच्छिन्न सुखं यत्र, स मोक्ष परिपठ्यते। —शुभचन्द्राचार्य

जहाँ शाश्वत सुख है, उसे मोक्ष कहते हैं।

४. स मोक्षो योऽपुनर्भवः ! —भागवत

जहाँ जाने के बाद फिर कभी जन्म नहीं होता, वह मोक्ष है।

५. अभिलाषापनीतं यत्, तज् ज्ञेयं परमं पदम् —**मोक्षाष्टक**

आशा, तृष्णा, मूर्च्छा आदि सभी प्रकार की विकृत भावनाओं का जहाँ अभाव है, वह परमपद मोक्ष है।

६. अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्त-स्तमाहुः परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं मम ॥

—**गीता ८।२३**

जो भाव अव्यक्त एवं अक्षर है, उसे परमगति कहते हैं। जिस सनातन-अव्यक्त भाव को प्राप्त होकर मनुष्य वापिस संसार में नहीं आते, वह मेरा परमधाम है।

७. न तद् भासयते सूर्यो, न शशाङ्को न पावकः ।
यद् गत्वा न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं मम ॥

—**गीता १५।६**

जिस स्वयं प्रकाशमय परमपद को न तो सूर्य प्रकाशित कर सकता है, न चन्द्रमा एवं अग्नि प्रकाशित कर सकते हैं तथा जिस पद को पाकर मनुष्य पुनः संसार में नहीं आते, वह मेरा परमधाम है।

८. संसार भाड़े का घर है ; वह समय होने पर सबको (चाहे देवता भी हों) खाली करना ही पड़ता है। मुक्ति अपना निजी घर है, जहाँ निवास करने के बाद कभी निकलना नहीं पड़ता।

४ मोक्ष-मार्ग

१. पणए वीरे महाविहिं, सिद्धिपहं णेयाउयं धुवं।

—सूत्रकृतांग श्रुतस्कन्ध २।१।२१

मुक्तिमार्ग महान् विधिरूप है। न्याययुक्त एवं शाश्वत है। वीरपुरुष नम्र होकर उस पर चलता है।

२. नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एसमग्गुत्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदंसिहिं॥

—उत्तराध्ययन २८।२

सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र एवं सम्यक्तप मुक्ति का यह मार्ग विशिष्टज्ञानी जिनेश्वरों ने कहा है।

३. सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः।

—तत्त्वार्थसूत्र १।१

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, एवं सम्यक्चारित्र-यह मोक्ष-मार्ग है।

५ मोक्ष के साधन

१. मोक्खसब्भूयसाहणा, नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं चेव ।

—उत्तराध्ययन २३।३३

सम्यग् ज्ञान-दर्शन-चारित्र—ये मोक्ष के साधन हैं ।

२. णाणं पयासगं, सोहओ तवो, संजमो य गुत्तिकरो ।
तिण्हंपि समाजोगे, मोक्खो जिणसासणे भणिओ ।।

—आवश्यक निर्युक्ति १०३

ज्ञान प्रकाश करता है, तप विशुद्धि करता है एवं संयम पापों का निरोध करता है । तीनों के समयोग से ही मोक्ष होता है । यही जिनशासन का कथन है ।

३. नाणस्स सव्वस्स पगासणाए, अन्नाणमोहस्स विवज्जणाए ।
रागस्स दोसस्स य संखएणं, एगंतसोक्खं समुवेइ मोक्खं ।।

—उत्तराध्ययन ३२।२

सम्पूर्ण ज्ञान के प्रकाश से अज्ञान एवं मोह के विवर्जन से तथा राग-द्वेष के क्षय से आत्मा एकान्तसुखमय मोक्ष को प्राप्त होती है ।

४. नाण-किरियाहिं मोक्खो । —विशेषावश्यकभाष्य, गाथा ३

ज्ञान एवं क्रिया (आचार) से ही मुक्ति होती है ।

५. जे जत्ति आ अ हेउ भवस्स, ते चेव तत्तिया मुक्खे ।

—ओघनिर्युक्ति ५३

जो और जितने हेतु संसार के हैं, वे और उतने ही हेतु मोक्ष के हैं।

६. मोक्षद्वारे द्वारपाला-श्चत्वारः परिकीर्त्तिताः ।
शमो विचारः संतोष-श्चतुर्थः साधुसंगमः ।।

—योगवाशिष्ठ २।१६।५८

मुक्तिमहल के चार द्वारपाल हैं—(१) शान्ति, (२) सद्विचार, (३) सन्तोष, (४) साधुसंगति ।

७. मुक्तिमिच्छसि चेत् तात ! विषयान् विषवत् त्यज ।
क्षमार्जव-दया-शौचं, सत्यं पीयूषवत् पिब ।।

—चाणक्यनीति ९।१

यदि मुक्ति पाने की इच्छा है, तो विषयों को विषतुल्य समझकर छोड़ो और क्षमा, सरलता, दया, पवित्रता एवं सत्य का अमृतवत् पान करो ।

६ मोक्षगामी कौन ?

१. णाणस्स दंसणस्स य, सम्मत्तस्स चरित्तजुत्तस्स।
जो काही उवओगं, संसाराओ विमुच्चिहिति ॥

—आतुरप्रत्याख्यान ८०

जो ज्ञान, दर्शन और चारित्र का उपयोग करेगा, वह संसार से छुटकारा पायेगा—मुक्त बनेगा।

२. जं किच्चा निव्वुडा एगे, निट्ठं पावंति पंडिया।

—सूत्रकृतांग १५।११

जिन सम्यग् ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना करके अनेक महापुरुष निर्वाण को प्राप्त हुए हैं, उन्हीं की आराधना द्वारा विद्वान् सिद्धि को प्राप्त करते हैं।

३. सयं वोच्छिंद काम-संचयं, कोसारकीडेव जहाइ बंधणं।

—ऋषिभाषित

जैसे—रेशम का कीड़ा अपने बन्धनों को तोड़ता है, उसी प्रकार आत्मा स्वयमेव कर्मबन्धनों को तोड़कर मुक्त होती है।

४. निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुख-दुःखसंज्ञै-र्गच्छन्त्यमूढा पदमव्ययं ते ॥

—गीता १५।५

वे ज्ञानीपुरुष ही अव्यय पद-मोक्ष को प्राप्त होते है, जो मान-मोह से रहित हैं, आसक्तिदोष को जीतनेवाले हैं, सदा अध्यात्म

भाव में स्थित हैं, कामनाओं से निवृत्त हैं और सुख-दुःख नाम के द्वन्द्वों से मुक्त हो चुके हैं।

५. य इत् तद्विदुस्ते अमृतमानशुः। —अथर्ववेद ९।१०।२

जो उस उस ब्रह्म को जान लेते हैं, वे मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

६. यः स्नाति मानसे तीर्थे, स वै मोक्षमवाप्नुयात्।

—गरुड़पुराण

जो सत्य, शील, क्षमा, अहिंसा आदि मानसतीर्थ में स्नान करता है, वही मोक्ष को प्राप्त होता है।

७. सकामः स्वर्गमाप्नोति, निष्कामो मोक्षमाप्नुयात्॥

—अत्रिस्मृति

फलप्राप्ति की भावना से धर्म करनेवाला स्वर्ग एवं निष्काम-भाव से धर्म करनेवाला मोक्ष पाता है।

८. मोक्ष जाते समय भौतिक चीजें तो छोड़नी पड़ती ही हैं, लेकिन साधनभूत (घोड़े की तरह) धर्मक्रिया भी छोड़नी पड़ती है।

७ मुक्त आत्मा

१. न सुखाय सुखं यस्य, दुःखं दुःखाय यस्य नो।
अन्तर्मुखमतेर्यस्य, स मुक्त इति उच्यते ॥

—**योगवाशिष्ठ ६।२।१६६।१**

जो अन्तर्मुखी बुद्धिवाला सुख को सुख एवं दु;ख को दु;ख नहीं मानता, वह 'मुक्त' कहलाता है।

२. नोदेति नास्तमायाति, सुखे-दुःखे मुखप्रभा।
यथाप्राप्तस्थितेर्यस्य स जीवन्मुक्त उच्यते।

—**योगवाशिष्ठ** ;।१६ २१

जो कुछ प्राप्त हो उसी में प्रसन्न रहनेवाला वह व्यक्ति **जीवन्मुक्त** कहलाता है, जिसकी मुखकान्ति सुख में बढ़ती नहीं एवं दुःख में घटती नहीं।

३. अस्तुति-निन्दा नांहि जहिं, कंचन-लोह समान।
कहे **नानक** सुन रे मना ! ताहि मुक्त तू जान ॥

सिद्ध भगवान

१. उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगा य। ॥२०॥

सिद्ध आत्माएँ कर्म कवच से मुक्त हैं, अजर हैं, अमर हैं और असंग हैं।

निच्छिन्नसव्वदुक्खा, जाइ-जरा-मरण-बंधणविमुक्का।
अव्वाबाहं सोक्खं, अणुहोंति सासयं सिद्धा। ॥२१॥

जिन्होंने शारीरिक-मानसिक दुःखों को छेद डाला है, जो जन्म-जरा-मरण के बन्धनों से मुक्त हो गये हैं, ऐसे सिद्ध-मुक्त आत्माएँ अव्याबाध शाश्वतसुखों का अनुभव करते हैं।

सव्वमणागयमद्धं, चिट्ठंति सुही सुहंपत्ता।
—**औपपातिक सूत्र सिद्धवर्णन,** ॥२२॥

सिद्ध आत्माएँ सदाकाल शाश्वत सुखों में स्थिर रहती हैं।

२. एतस्मान्न पुनरावर्तन्ते। —**प्रश्नोपनिषद्**

उस स्थान से मुक्त आत्माएँ पुनः संसार में नहीं आतीं।

३. तेषु ब्रह्मलोकेषु परापरावतो वसन्ति,
तेषां न पुनरावृत्तिः। —**बृहदारण्यकोपनिषद्**

उन ब्रह्मलोकों में मुक्त आत्माएँ अनन्तकाल तक निवास करती हैं। उनका पुनः संसार में आगमन नहीं होता।

सिद्धों के १५ भेद—

४. सिद्धा पण्णरसविहा पण्णत्ता, तंजहा—(१) तित्थसिद्धा, (२) अतित्थसिद्धा, (३) तित्थगरसिद्धा, (४) अतित्थगर-सिद्धा, (५) सयंबुद्धसिद्धा, (६) पत्तेयबुद्धसिद्धा, (७) बुद्ध-बोहियसिद्धा, (८) इत्थीलिंगसिद्धा, (९) पुरिसलिंगसिद्धा, (१०) नपुंसगलिंगसिद्धा, (११) सलिंगसिद्धा, (१२) अन्न-लिंगसिद्धा, (१३) गिहिलिंगसिद्धा, (१४) एगसिद्धा, (१५) अणेगसिद्धा। —**प्रज्ञापना १**

(१) तीर्थसिद्ध, (२) अतीर्थसिद्ध, (३) तीर्थङ्करसिद्ध, (४) अतीर्थ-ङ्करसिद्ध, (५) स्वयंबुद्धसिद्ध, (६) प्रत्येकबुद्धसिद्ध, (७) बुद्ध-बोद्धितसिद्ध, (८) स्त्रीलिङ्गसिद्ध, (९) पुरुषलिङ्गसिद्ध, (१०) नपुंसकलिङ्ग, (११) स्वलिंगसिद्ध, (१२) अन्यलिंगसिद्ध, (१३) गृहस्थलिंगसिद्ध, (१४) एकसिद्ध, (१५) अनेकसिद्ध।

५. सिद्धों के ३१ गुण—

नव दरिसणंमि चत्तारि, आउए पंच आइमे-अंते।
से-से दो-दो भेया, खीणभिलावेण इगतीसं।

—**समवायाङ्ग ३१**

आठों कर्मों की प्राकृतियों को अलग-अलग गिनने से सिद्धों के ३१ गुण हो जाते हैं।

जैसे :—ज्ञानावरणीयकर्म की ५, दर्शनावरणीयकर्म की ९, वेद-नीय कर्मकी २, मोहनीयकर्म की २, (दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय) आयुकर्म की ४, नामकर्म की २, (शुभनाम और अशुभनाम) गोत्रकर्म की २, (उच्चगोत्र और नीचगोत्र) तथा अन्तरायकर्म की ५—इन ३१ प्रकृतियों के क्षय होने से सिद्धों के ३१ गुण प्रकट होते हैं। मतिज्ञानावरणीय कर्म के क्षय होने से

वे **क्षीणमतिज्ञानावरणीय** कहलाते हैं यावत् वीर्यान्तराय के क्षय होने से **क्षीणवीर्यान्तराय** कहलाते हैं।

८. जीवेणं भन्ते ! सिज्झमाणे कयरंमि आउए सिज्झइ ? गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगट्ठवासाउए, उक्कोसेणं पुव्वकोडियाउए सिज्झइ। **—औपपातिकसूत्र सिद्धवर्णन**

भगवन् ! जीव किस आयु में सिद्ध-मुक्त बन सकता है ? गौतम ! जघन्य साधिक आठ वर्ष में और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व की आयु में सिद्ध बन सकता है।

९. बतीसा अडयाला, सट्ठी बावत्तरि य बोधव्वा।
चुलसीई छिन्नुवई य, दुरहिय-अट्ठुत्तरसयं च।

—प्रज्ञापना १

एक समय में अधिक से अधिक कितने जीव सिद्ध हों सकते हैं ? इसके लिए बतलाया गया है कि यदि प्रति समय १-२-३ यावत् ३२ जीव निरन्तर सिद्ध हों तो आठ समय तक हो सकते हैं। उसके बाद निश्चित रूप से अन्तर पड़ता है।

तेतीस से अड़तालीस तक जीव निरन्तर सात समय, उनचास से साठ तक जीव निरन्तर छः समय, इकसठ से बहत्तर तक जीव निरन्तर पाँच समय, तिहत्तर से चौरासी तक जीव निरन्तर चार समय, पचासी से छियानबे तक जीव निरन्तर तीन समय तथा सतानवें से से एक सौ दो तक जीव निरन्तर दो समय तक सिद्ध हो सकते हैं। फिर निश्चितरूप से अन्तर पड़ता है। एक सौ तीन से लेकर एक सौ आठ तक जीव यदि सिद्ध हों तो केवल एक ही समय हो सकते हैं, अर्थात् एक समय में १-३ यावत् १०८ सिद्ध होने के बाद दूसरे समय अवश्य अन्तर पड़ता है। दो, तीन आदि समय तक निरन्तर उत्कृष्ट सिद्ध नहीं हो सकते।

९ मुक्ति के सुख

१. आत्मायत्तं निराबाध-मतीन्द्रियमनीश्वरम् ।
घातिकर्मक्षयोद्भूतं-यत्तन्मोक्षसुखं विदुः ॥

—**तत्त्वानुशासन** २४२

जो सुख स्वाधीन है, बाधारहित है, इन्द्रियों से परे है—आत्मिक है, अविनाशी है और ज्ञानावरणीय आदि घातिक कर्मों के क्षय होने से प्रकट हुआ है, उसे **मुक्तिसुख** कहा जाता है ।

२. णवि अत्थि मणुस्साणं, तं सोक्खं ण वि य सव्वदेवाणं ।
जं सिद्धाणं सोक्खं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥
जं देवाणं सोक्खं, सव्वद्धा पिंडियं अणंतगुणं ।
ण य पावइ मुत्तिसुहं, णंताहिं वग्ग-वग्गूहिं ॥

—**औपपातिक सिद्धवर्णन, गाथा** १३-१४

निराबाधअवस्था को प्राप्त सिद्धों को जो सुख हैं, वैसे न तो मनुष्यों के पास हैं एवं न सभी प्रकार के देवों के पास हैं ।
देवताओं के तीनों (भूत, भविष्यत्, वर्तमान) काल के सुखों को एकत्रित किया जाय, फिर उन्हें अनन्तवार वर्ग अर्थात् गुणित किया जाय तो भी वे क्षण-भर मुक्तिसुखों के बराबर नहीं हो सकते ।

१० संसार

१. संसरणं संसारः भवाद् भवगमनं, नरकादिषु पुनर्भ्रमणं वा।

—विशेषावश्यक-भाष्य

संसरण करना एवं एक भव से दूसरे भव में जाना अथवा नरकादि चार गतियों में पुनः-पुनः भ्रमण करना **संसार** कहलाता है।

२. जीवा चेव अजीवा य, एस लोए वियाहिए।
अजीवदेसमागासे, अलोए से वियाहिए॥

—उत्तराध्ययन ३६।२

जिस आकाश के भाग में जीव-अजीव दोनों रहते हों, उसे **लोक** कहते हैं। जहाँ केवल आकाश ही हो, धर्म-अधर्म आदि न हों, उसे **अलोक** कहते हैं।

३. धम्मो अहम्मो आगासं, कालो पुग्गल-जन्तवो।
एस लोगोत्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदंसिहिं॥

—उत्तराध्ययन २८।७

धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल—ये पाँच अजीव और छठा जीव—ये छः द्रव्य लोक की आत्मा हैं। अतः जो यह षड्द्रव्यात्मक है, वही लोक है—ऐसा श्रेष्ठदर्शन के धारक श्रीजिनभगवान ने कहा है।

४. विचार के सिवा जगत् और कोई चीज़ नहीं है।

—महर्षिरमण

५. अच्छी-बुरी सभी प्रकृतियों के व्यक्तियों के संमिलन से ही विश्व की रचना होती है।

—डॉ. गरास. जे रोल्ड

११ संसार का स्वरूप

१. अणंते नितिए लोए, सासए न विणस्सइ ।

—सूत्रकृतांग १।४।६

यह लोकद्रव्य की अपेक्षा से नित्य है, शाश्वत है एवं इसका कभी नाश नहीं होता।

२. अनादिरेष संसारो, नानागतिसमाश्रयः ।
पुद्गलानां परावर्ता, अत्रानन्तास्तथागताः ॥

—योगबिन्दु ७०

नरकआदि गतिरूप पर्यायों का आश्रय यह संसार अनादि है। इसमें अनन्त-पुद्गलपरावर्तन व्यतीत हो चुके हैं।

३. सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते, तं जहा—ओरालिय-पोग्गलपरियट्टे, वेउव्विय-पोग्गलपरियट्टे एवं तेया-कम्मा-मण-वइ-आणूपाण-पोग्गलपरियट्टे ।

—भगवती १२।४ तथा स्थानाङ्ग ७।५३६

सात प्रकार का पुद्गलपरावर्तन कहा है—
(१) औदारिक-पुद्गलपरावर्तन (२) वैक्रिय-पुद्गलपरावर्तन (३) तेजस-पुद्गलपरावर्तन, (४) कार्मण-पुद्गलपरावर्तन, (५) मनः-पुद्गलपरावर्तन, (६) वचन-पुद्गलपरावर्तन (७) श्वासोच्छ्वास-पुद्गल परावर्तन ।

('मोक्ष प्रकाश' ८।१५ में इसका विस्तृत विवेचन है।)

४. तिहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया, तं—अरिहंतेहिं वोच्छि-ज्जमाणेहिं, अरिहन्तपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे, पुव्व-गए वा वोच्छिज्जमाणे।

—स्थानाङ्ग ३।१

तीन कारणों से लोक में अन्धकार होता है। १. अरिहन्तभगवान् का विच्छेद होने से, २. अरिहन्तप्ररूपित-धर्म का विच्छेद होने से एवं ३. पूर्वों के ज्ञान का विच्छेद होने से।

१२ संसार के भेद

१. चउव्विहे संसारे पण्णत्ते, तं जहा दव्वसंसारे, खेत्तसंसारे, कालसंसारे, भावसंसारे ।

—स्थानांग ४।१।२६१

चार प्रकार का संसार कहा है–

(१) षड्द्रव्य रूप-द्रव्यसंसार (२) चतुर्दशरज्जु-परिमित क्षेत्ररूप क्षेत्रसंसार (३) दिन-रात, पक्ष-मास यावत् पुद्गलपरावर्तनों तक परिभ्रमण रूप - कालसंसार (४) कर्मोदय से उत्पन्न होनेवाले विभिन्न राग-द्वेषात्मक विचाररूप-भावसंसार ।

२. चउव्विहे संसारे पण्णत्ते, तं. जहा—णेरइयसंसारे जाव देवसंसारे । — स्थानाङ्ग ४।१।२६४

चार प्रकार का संसार कहा है–

(१) नैरयिकसंसार, (२) तिर्यञ्चसंसार,
(३) मनुष्यसंसार, (४) देवसंसार ।

३. जीवाणं नवहिं ठाणेहिं संसारं वत्तिसु वा वत्तंति वा वत्तिस्सति वा तं जहा-पुढवीकाइयत्ताए जाव पंचेंदियकाइयत्ताए ।

—स्थानांग ६।३।६६६

जीवों ने नव स्थानों में संसार का अनुभव किया, कर रहे हैं एवं करेंगे–पृथ्वीकाय के रूप में यावत् पञ्चेन्द्रिय के रूप में।

४. लख चौरासी योनि में, गूंगा बावन लाख।
बत्तीस लाख है बोलता, लख चौपन बिन नाक ॥[1]

१ चौरासी लाख योनी के जीवों में पृथ्वी–अप्–तेजस्–वायु–इन चारों के सात-सात लाख; प्रत्येक वनस्पति के दस लाख और साधारण-वनस्पति के १४ लाख—ये ५२ लाख गूंगे हैं अर्थात् जीभरहित हैं। शेष बत्तीस लाख बोलनेवाले हैं–जीभसहित हैं। पूर्वोक्त ५२ लाख और द्वीन्द्रिय के दो लाख–ऐसे ५४ लाख नाक-रहित हैं।

१३ दुःखरूप संसार

१. दुहरूवं दुहफलं, दुहाणुबंधी विडंबणारूवं।
संसारं जाणिउण, नाणी न रई तहिं कुणइ॥

यह संसार रोग-शोक आदि दुःखरूप है, नरकादि दुःखरूप फलों का देनेवाला है, बारम्बार दुःखों से सम्बन्ध जोड़नेवाला है एवं बिडंबनारूप है—ऐसा जानकर ज्ञानी को इस संसार से राग नहीं करना चाहिए।

२. पास लोए महब्भयं। —आचारांग ६।१

देखो! यह संसार महाभयवाला है।

३. एगंतदुक्खं जरिए व लोए। —सूत्रकृतांग १७।११

यह संसार ज्वर के समान एकान्त दुःखरूप है।

४. मच्चुणाब्भाहओ लोओ, जराए परिवारिओ।

—उत्तराध्ययन १४।२३

यह संसार मृत्यु से पीड़ित है एवं वृद्ध-अवस्था से घिरा हुआ है।

५. मृत्युनाभ्याहतो लोको, जरया परिवारितः।
अहोरात्राः पतन्त्येते, ननु कस्मान्न बुध्यसे॥

—महाभारत शान्तिपर्व, १७५।९

पुत्र ने कहा—पिताजी! यह सम्पूर्ण जगत् मृत्यु के द्वारा मारा जा रहा है। बुढ़ापे ने इसे चारों ओर से घेर लिया है और ये

दिन-रात ही वे व्यक्ति हैं–जो सफलतापूर्वक प्राणियों की आयु का अपहरणस्वरूप अपना काम करके व्यतीत हो रहे हैं, इस बात को आप समझते क्यों नहीं ?

(उक्त पिता-पुत्र संवाद उत्तराध्ययन १४ से मिलता-जुलता है।)

६. प्रदीप्ताङ्गारकल्पोयं, संसारः सर्वदेहिनाम्।

–त्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र

सभी प्राणियों के लिए यह संसार धधकते हुए अंगारे के समान है।

७. डज्झमाणं न बुज्झामो, राग-दोसग्गिणा जगं।

–उत्तराध्ययन १४।४३

राग-द्वेषरूप अग्नि से जलते हुए इस संसार को देखकर भी हम नहीं समझते !

८. बहु दुक्खा हु जंतवो। **–आचाराङ्ग ६।१**

संसारी जीव बहुत दुःखों से घिरे हुए हैं।

९. न तदस्ति दुःख किंचित्, संसारी यन्न प्राप्नोति।

–योगवाशिष्ठ २।१२।४

ऐसा कोई भी दुःख नहीं है, जो संसारियों को सहना न पड़ता हो।

१०. सारीरा माणसा चेव, वेयणाओ अणंतसो।

–उत्तराध्ययन १९।४६

इस संसार में शरीरसम्बन्धी और मनसम्बन्धी अनन्त वेदनायें हैं।

११. जम्मदुक्खं जरादुक्खं, रोगा य मरणाणि य।
अहो ! दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसंति जंतुणो॥

–उत्तराध्ययन १९।१६

जन्म का दुःख है, वृद्ध-अवस्था का दुःख है, रोग एवं मृत्यु का

दुःख है। अहो ! यह संसार निश्चितरूप से दुःखमय है एवं इसमें प्राणी दुःख पा रहे हैं।

१२. हर सांझ वेदना एक नई, हर भोर सवाल नया देखा।
दो घड़ी नहीं आराम कहीं, मैंने घर-घर जा-जा देखा।

—हिन्दी कविता

१३. गतसारेऽत्रसंसारे, सुख-भ्रान्तिः शरीरिणाम्।
लालापानमिवाङ्गुष्ठे, बालानां स्तन्यविभ्रमः॥

—सुभाषितरत्न भाण्डागार, पृष्ठ ३८४

इस निःसार संसार में सुख न होने पर भी अज्ञानी जीव भ्रमवश सुख मानते हैं। जैसे—बच्चे अँगूठे के साथ अपनी लार (थूक) को चूसकर भी भ्रमवश उसे माता के स्तन का दूध समझते हैं।

१४. छोड़कर निश्वास कहता है नदी का यह किनारा,
उस किनारे पर जमा है, जगत भर का हर्ष सारा।
वह किनारा किन्तु लम्बी साँस लेकर कह रहा है,
हायरे ! हर एक सुख उस पार ही क्या वह रहा है ?

—हिन्दी कविता

१५. यह जगत् काँटों की बाड़ी है, देख-देख कर पैर रखना !

—गुरु गोरख

१४ सब को दुःख

१. कौन है जग में सुखी ? दुखिया तो सब संसार है ।

२. वह मूर्खों में भी महामूर्ख है—जो मानता है कि संसार में सुख है । मुझे तो जो भी मिला दुःख की कहानी सुनाता मिला । **—विनोबा**

३. दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
कछु ना सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥ **—कबीर**

४. सूर्य गरम है चाँद दगीला, तारों का संसार नहीं है ।
जिस दिन चिता नहीं सुलगेगी, ऐसा कोई त्यौंहार नहीं है ॥
—हिन्दी पद्य

५. कोई कहे शुं खाऊं अने कोई कहे शामां खाऊं ?
—गुजराती कहावत

६. ऊंचा चढ़-चढ़ देखो ! घर-घर ओही लेखो ।
—राजस्थानी कहावत

७. केचिदज्ञानतो नष्टा, केचिन्नष्टाः प्रमादतः ।
केचिद्ज्ञानावलेपेन, केचिन्नष्टैस्तु नाशिताः ॥ **—सुभाषितावलि**

संसार में कई अज्ञान से नष्ट हुए, कई प्रमाद एवं ज्ञान के अभिमान से नष्ट हुए तथा कइयों का नाश नष्ट होनेवालों ने कर दिया ।

८. भूल गये रंग-राग, भूल गए छकड़ी ।
तीन बात याद रही, तेल लूण लकड़ी । **—राजस्थानी पद्य**

१५ सुख-दुःखमय संसार

१ क्वचिद्वीणानादः क्वचिदपि च हाहेति रुदितं,
क्वचिद् विद्वद्गोष्ठी क्वचिदपि सुरामत्तकलहः।
क्वचिद् रम्या रामा क्वचिदपि जराजर्जरतनु,
न जाने संसारः किममृतमयः किं विषमयः॥

—सुभाषितरत्नभाण्डागार, पृ. ६२

कहीं वीणा का नाद है तो कहीं हाहाकार रोदनमय है, कहीं विद्वानों की गोष्ठी है तो कहीं शराबियों का कलह है। कहीं सुन्दर नारियाँ हैं तो कहीं जर्जरित शरीर वाली वृद्धाएं हैं। अतः समझ में नहीं आता कि इस संसार में अमृतमय क्या है? और विषमय क्या है?

२ तितलियाँ हैं फूल भी हैं, हैं कोकिलाएं गान भी हैं।
इस गगन की छांह में मानो! महल उद्यान भी हैं।
पर जिन्हें कवि भूल बैठे, वे अभागे मनुज भी हैं।
हैं समस्याएं, व्यथाएं भूख है अपमान भी है।

—मिलिन्द

३ फल थोड़े हैं पात बहुत है, काम अल्प है बात बहुत है।
प्यार लेश आघात बहुत है, यत्न स्वल्प व्याघात बहुत है।
मंजिल में पग-पग पर देखा, विजय अल्प है हार बहुत है,
सार स्वल्प निस्सार बहुत है, सुन्दर कम आकार बहुत है॥

—'पथ के गीत' से

४ सारा संसार संतुष्ट है और सारा असंतुष्ट।
प्रत्येक प्राणी को इस खिचड़ी का भाग मिला है—
कहीं दाल अधिक है और कहीं भात।

—सद्गुरुचरण अवस्थी

५ जो केवल विचारते हैं, उनके लिए संसार सुखमय है, किन्तु जो इसका अनुभव करते हैं, उनके लिए दुःखमय है।

—होरेस वालपोल

६ जैसे-ईर्ष्या और कुटिलता द्वारा संसार को हम नरक बना सकते है, वैसे—प्रेम द्वारा स्वर्ग भी।

७. अन्तर जितना उज्ज्वल होगा, जगत उतना मङ्गल होगा।

—संतज्ञानेश्वर

१६ गतानुगतिक-संसार

१. गतानुगतिको लोको, न लोकः पारमार्थिकः ।

—पंचतंत्र १।२६६

संसार गतानुगतिक—दूसरों की नकल करनेवाला है, किंतु वास्तविकता को नहीं देखता ।

२. कीड़ी नुं कटक—एक कीड़ी चाले एटले बधी चाले ।

—गुजराती कहावत

३. गड्डरीप्रवाह संसार । —हिन्दी कहावत

४. खरबूजे नै देख र खरबूजो रंग बदलै । —राजस्थानी कहावत

५. दुनियां मथुरा के बंदरों के समान नकल करनेवाली है ।

६. इंगलैण्ड के राजा के गलगंड (कंठमाल) का रोग हुआ । डाक्टर ने सुन्दर पट्टा लगाया । देखा-देखी लोग भी पट्टा लगाने लगे एवं 'नेकटाई' चल पड़ी ।

७. यद् यदाचरति श्रेष्ठ-स्तत्तदेवेतरोजनः ।
स यत प्रमाणं कुरुते, लोकस्तदनुवर्तते ।। —गीता ३।२१

श्रेष्ठ व्यक्ति जो-जो आचरण करता है, साधारण लोग भी उसी तरह करते हैं । श्रेष्ठ व्यक्ति जो बात सत्य मानता है, लोग भी उसके पीछे चलते हैं ।

८. श्रेष्ठ पुरुषों को चाहिए कि वे कोई भी ऐसा काम न करें, जिसका अनुकरण करके लोगों को कष्ट का सामना करना पड़े । —धनमुनि

१७ परिवर्तनशील संसार

१. सभी वस्तुएँ नवीन और विचित्र रूपों में परिर्वतित होती रहती हैं।

—लांगफेलो

२. पर्यायार्थिक-नय की दृष्टि से सारा संसार समय-समय पर बदलता रहता है।

—जैनशास्त्र

३. केवल एक परिवर्तन को छोड़कर सभी वस्तुएँ परिवर्तन-शील हैं।

—जैंगविल

४. जो कुछ मैं पहले था, वह अब नहीं हूँ।

—वायरन

५. परिवर्तन के तीन क्रम—पहले हृदयपरिवर्तन, फिर जीवन-परिवर्तन और फिर समाजपरिवर्तन।

१८ संसार का पागलपन

१. आदित्यस्यगतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितं,
व्यापारैर्बहुकार्यभारगुरुभिः कालो न विज्ञायते ।
दृष्ट्वा जन्म-जरा-विपत्ति-मरणं त्रासश्च नोत्पद्यते,
पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरामुन्मत्तभूतं जगत् ।।

—भर्तृहरि-वैराग्यशतक ७

सूर्य के उदय-अस्त होने से दिन-दिन आयु घटती जा रही है। अनेक कार्यों के भार से बढ़े हुए व्यापारों में बीतता हुआ काल भी जाना नहीं जाता। जन्म-जरा-मरण को देखकर त्रास नहीं होता अतः प्रतीत होता है कि मोहमयी प्रमाद-मदिरा को पीकर जगत् मतवाला हो रहा है।

२. झूठा साचा कर लिया, विष को अमृत जाना।
दुख को सुख सब कोई कहै, ऐसा जगत दिवाना ।।

—कबीर

३. दुनिया आंधली नथी, दीवानी छे।

—गुजराती कहावत

४. रंगी को नारंगी कहे, पके दूध को खोया।
चलती को गाड़ी कहे, देख कबीरा रोया ।। **—कबीर**

५. गाड़ी का नाम ऊंखली, चलती का नाम गाड़ी।

—हिंदी कहावत

६. भारत में एक करोड़ तीस लाख पागल हैं, एक हजार में २३ मानसिक रोगी हैं उनमें से १८ केस संगीन समझने चाहिए।

(मानसिक रोग-चिकित्सालय के अधीक्षक डा० कैलाशचन्द्र दुबे)

७. काम क्रोध जल आरसी, शिशु त्रिया मद फाग,
होत सयाने बावरे, आठ बात चित्त लाग।

८. दिल्ली में पागलों की मर्दुमशुमारी हो रही थी, एक व्यक्ति ने गणना के अधिकारी से कहा--कि मेरा नाम पागलों में लिख लीजिये ! मुझे लोग पागल कहते हैं। विस्मित अधिकारी ने पूछा--कैसे ?

उसने कहा--एक दिन कई नौजवान लड़कियाँ अश्लील फिल्मी गीत गाती हुई बाजार में नंगे सिर जा रही थीं, उनमें एक लड़की मेरे मित्र की पुत्री थी। मैंने उसे बुलाकर कहा--बेटी ! ऐसे अश्लीलगीत गाते हुए बाजार में नंगे सिर घूमना अपने कुल को शोभा नहीं देता। लड़की ने कुछ शर्म महसूस की और चुपचाप चली गई। सहेलियों ने पूछा—यह बूढ़ा क्या कहता है ? उसने जबाब दिया—कुछ नहीं, पागल है; यों ही बकवास करता है।

● एक दिन नवविवाहित पति-पत्नी हलवाई की दुकान पर खड़े-खड़े खा रहे थे, वे प्रेममुग्ध होकर एक-दूसरे के मुंह में चम्मच से कुछ डाल रहे थे। लड़का मेरे सम्बन्धी का

था इसलिए मेरे से रहा नहीं गया, अतः मैंने धीरे से उसे कह दिया, बेटा ! ऐसा व्यवहार अच्छा नहीं लगता, लड़के ने मुंह मोड़ लिया। बहू के पूछने पर कहने लगा—कुछ नहीं, योंही पागलपन की बात करता है।

१९ संसार का स्वभाव

१. निन्दति तुण्हीमासीनं, निन्दति बहुभाणिनं ।
मितभाणिनं पि निन्दति, नत्थि लोए अनिन्दिओ ।।

—धम्मपद २२७

संसार चुप रहनेवालों की निन्दा करता है, बहुत बोलनेवालों की निन्दा करता है और मितभाषियों की भी निन्दा करता है। विश्व में ऐसा कोई नहीं, जिसकी निन्दा न होती हो।

२. दुनियां चढ़्या नैं हंसे और पालानैं पण हंसे ।

—राजस्थानी कहावत

३. महात्मा छहों दिशाओं में पैर कर करके हार गये, क्योंकि लोगों ने कहा—पूर्व में जगन्नाथपुरी है, पश्चिम में द्वारका है, उत्तर में बद्रीनारायण है, दक्षिण में रामेश्वरम् है, नीचे शेष भगवान् हैं और ऊपर बैकुण्ठ है।

४. परिचितजनद्वेषी लोको नवं-नवमीहते । —माघकवि

संसार का यह स्वभाव ही है कि वह परिचित लोगों से द्वेष करता है एवं नए-नए व्यक्तियों को चाहता है।

५. अर्थार्थी जीवलोकोऽयम् । —विष्णु शर्मा

यह सारा संसार अपने स्वार्थ को सिद्ध करनेवाला है।

६. भिन्नरुचिर्हि लोकः । —रघुवंश

लोगों की रुचियां भिन्न-भिन्न हुआ करती हैं।

७. फकीर हाल में मस्त, जरदार माल में मस्त,
बुलबुल बाग में मस्त और आकाश दीदार में मस्त।

—उर्दू कहावत

८. अपनी-अपनी डफली, अपना-अपना राग।

९. अपना-अपना काम, अपना-अपना खाना।

१०. अपना ठेंठ न देखें और दूसरों की फूली निहारें।

११. दुनियां झुकती है, झुकानेवाला चाहिए।

—हिन्दी कहावतें

१२. मियाँजी की दाढ़ी बलै, लोग तापण नैं जावै।

—राजस्थानी कहावत

१३. घर आए पूजें नहीं, बांबी पूजन जाय।

—हिन्दी कहावत

१४. हाथ पोलो-जगत गोलो, हाथ काठो-जगत भाठो।

—राजस्थानी कहावत

२० दृष्टि के समान सृष्टि

१. जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।

—रामचरितमानस

२. डू नॉट मेजर अदर पीपुल्स कार्न बाइ युअर ओन बूशल।

—अंग्रेजी कहावत

दृष्टि के समान सृष्टि।

३. **समर्थगुरु रामदास** ने रामायण सुनाते समय कहा—हनूमान ने लंका में श्वेत फूल देखे। गुप्तहनूमान ने कहा—लाल फूल थे, तुम झूठे हो। दोनों राम के पास पहुँचे। राम ने कहा—फूल तो श्वेत थे, किन्तु हनूमान की आंखों में क्रोध की लालिमा थी अतः इनको लाल दीखे, क्योंकि दृष्टि के समान ही सृष्टि होती है।

४. एक एव पदार्थस्तु, त्रिधा भवति वीक्षितः।
कुणपः कामिनी मांसं, योगिभिः, कामिभिः श्वभिः॥

—चाणक्यनीति १४।१६

एक ही पदार्थ अर्थात् स्त्री का शरीर दृष्टिभेद से तीनरूपों में देखा जाता है, योगी मुर्दा के रूप, कामीपुरुष सुन्दर स्त्री के रूप में और कुत्ते उसे मांस-रूप में देखते हैं।

५. पुष्ट पुत्र को माता दुर्बल, स्त्री पतिदेवता, शत्रु राक्षस

एवं मित्र बन्धु मानते हैं। धर्मपुस्तकों को श्रद्धालुभक्त शास्त्र, रद्दीवाला रद्दीकागज और गाय-भैंस-बकरी आदि अपना खाद्य मानती हैं।

६. द्वारका में युधिष्ठर को बुरा आदमी नहीं मिला और दुर्योधन को भला आदमीं नहीं मिला।

७. सन् १८५७ की हलचल को अंग्रेजों ने गदर (रिवोलेशन) कहा और आज के लोग क्रान्ति कहते हैं।

८. १६ दिसम्बर १९७१ के दिन को बांगलावासी स्वतन्त्रता का स्वर्णिम प्रभात मानते हैं, भारत तथा कई अन्य देश इसे मुक्ति की संज्ञा देते हैं। और पश्चिमी पाकिस्तान इस दिन को इतिहास का सबसे बड़ा मनहूस दिन कहता है।

९. दूसरे लोग हरिजन और विधवा को अपवित्र कहते थे, जबकि गांधीजी उन्हें पवित्र मानते थे।

१०. एक कहता है गुलाब खुशबूदार है, दूसरा कहता है, गुलाब कांटोंवाला है।

११. चर्मचीड़ी (चमगादर) के लिए अंधेरी रात ही दिन है, जबकि कौवे के लिए वह डरावना अंधेरा है।

१२. दौड़ते घोड़े का चित्र उल्टा देखो तो घोड़ा लौटता दीखेगा।

१३. गाँधी टोपीवालों को शराब पीते देखकर एक ने कहा– हाय! हाय! कांग्रेसी भी शराबी हो गए! दूसरा बोला नहीं-नहीं! शराबी कांग्रेसी-टोपी पहनने लग गए, ऐसा कहो!

१४. एक गरीब रसोईदारिन बेटे के लिए कागज के पुड़िया में थोड़ा सा हलवा ले चली। हाथ से पुड़िया छुट जाने से हलवा नीचे गिर गया। उसे देखकर एक बहन ने कहा–यह चोर है, दूसरी ने कहा–गरीबी का दोष है, तीसरी ने कहा—बेटे का ममत्व है।

१५. प्रत्येक व्यक्ति अपनी दृष्टि के अनुसार ही अपने सिद्धान्त की सृष्टि करता है। जैसे—वेदनिर्माता ने स्त्री और शूद्र को घृणित दृष्टि से देखकर कह दिया—

स्त्री-शूद्रौ नाधीयेताम् अर्थात् स्त्री और शूद्र को वेद नहीं पढ़ाना चाहिए। इसी प्रकार तुलसीदासजी ने भी कह डाला—

ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।

क्रोधी कहता है—

साँच कहूं होकर निडर, कोई हो नाराज,
मैंने तो सीखा यही, साँच बोलिए गाज।

कटुभाषी ने कहा—

बुरे लगे हित के बचन, हिये विचारो आप,
कडुवी औषधि बिन पिये, मिटे न तन का ताप।

व्यापारी बोला—

सत्यानृतं तु वाणिज्यम्! अर्थात् साँच-झूठ का नाम ही व्यापार है, यह केवल सत्य से नहीं चल सकता।

१६. शहर के बाहर मेला लग रहा था। वृक्ष पर चिड़िया चीं-चीं कर रही थीं। वृक्ष के नीचे विभिन्न विचार के कई

व्यक्ति बैठे थे। उनमें से हिन्दू ने कहा—चिड़िया कह रही है—

राम-लछमन-दसरथ, राम-लछमन-दसरथ !

मुसलमान ने कहा—नहीं-नहीं ! यह तो कह रही है–

सुभान तेरी कुदरत, सुभान तेरी कुदरत !

पहलवान ने कहा—नहीं, नहीं ! यह तो कह रही है–

दण्ड मुग्दर कसरत, वण्ड मुग्दर कसरत !

किराने के व्यापारी ने कहा–नहीं,नहीं ! यह तो कह रही है—

हल्दी धनियां अदरख, हल्दी धनियां अदरख !

आखिर सूत कातनेवाली बुढ़िया ने कहा–नहीं, नहीं, यह तो कहती है—

चरखा पोनी चमरख, चरखा पोनी चमरख !

२१ संसार को उपमाएँ

१. सुपने सब कुछ देखिए, जागे तो कुछ नाँहि ।
ऐसा यह संसार है, समझ देख ! मन माँहि ॥

—दादूजी

२. जग है सपना अपना न कहूं,
नर काहे को झूठ में जात ठगा ॥
कवि **सूरत** क्यों न भजे प्रभु को,
तज सूतज भूल के भाव लगा ॥
तेरे जीवत हैं सब ही गरजी,
वरजी इह बात न खात दगा ॥
तेरे अंत समे भगवंत बिना,
न झगा न पगा न तगा न सगा ॥

३. नाटक सो संसार, **जुगल** पार्ट सब कर रह्या ।
एक-एक, रे लार, मंच छोड़ सब चालसी ॥

४. सम्पूर्ण विश्व एक मंच है और स्त्री-पुरुष इस पर अभिनय करनेवाले पात्र । —शेक्सपियर

५. संसार एक सिनेमा है । सिनेमा में जैसे प्रकाश और अंधकार दो तत्त्व काम करते हैं, एक से काम नही बनता, वैसे संसार-सिनेमा में भी ज्ञान-अज्ञान दोनों तत्त्व आवश्यक

हैं। जहाँ ज्ञान है वहाँ अनासक्ति, ऐश्वर्य एवं आनन्द है तथा जहाँ अज्ञान है वहाँ आसक्ति, वासना एवं दुःख हैं। कीड़े मक्खी, मच्छर, पशु-पक्षी, साधारणमनुष्य एवं ज्ञानी-मुनियो में क्रमशः ज्ञान की विशेषता होने से वे गंदगी घास-फूस, रुपया-पैसा आदि-आदि पूर्व-पूर्व वस्तुओं में आनन्द नही मानते। सिनेमा में पूर्ण प्रकाश होते ही खेल खतम हो जाता है, ऐसे ही पूर्ण-ज्ञान मिलने से मुक्ति मिल जाती है। फर्क इतना-सा है कि सिनेमा में पर्दो पर चित्रित मनुष्य, पशु-पक्षी जड़ होते हैं और सांसारिक प्राणी चेतन।

६. **वृक्ष**—संसार वृक्ष है। इस पर बंदर भी बैठते हैं और पक्षी भी। बंदर इधर-उधर वृक्षों पर भटकते रहते हैं. किन्तु पक्षी मौका पाकर उड़ जाते हैं। तुम बंदर बनोगे या पक्षी ? पक्षी बनना हो तो पाँखें मैं लगा दूं।

७. **कोठरी**—जग काजल की कोठरी, रहिये सदा सशंक।
रत्नाकर को तनय भी, बच्यो न बिना कलङ्क॥

८. हरो ताप सींचो सुधा, छहरो ज्योति अमंद।
लाख करो अब **प्रेमनिधि**, जात कलङ्क न चन्द॥

९. कहत भली समझत बुरी, यही जगत की रीति।
रज्जब कोठी गार की, ज्यों धोवे त्यों कीच॥

१०. विश्व एक सुन्दर पुस्तक के समान शिक्षापूर्ण है, किन्तु उसके लिए कुछ भी नही, जो इसे पढ़ नहीं सकता।

—**गोल्डोनी**

११. सरीरमाहु नावत्ति, जीवो वुच्चइ नाविओ।
संसारो अन्नवो वुत्तो, जं तरंति महेसिणो ॥

—उत्तराध्ययन २३।७३

शरीर नाव है, जीव नाविक है, संसार समुद्र है, इससे महर्षि लोग ही पार तरते हैं।

१२. संतोषः साधुसङ्गश्च, विचारोऽथ शमस्तथा।
एत एव भवाम्बोधा-वुपायास्तरणे नृणाम् ॥

—योगवाशिष्ठ २।१२।१६

संतोष, साधुसंगति, सद्विचार और क्रोध आदि कषायों का शमन—ये ही मनुष्यों के लिए संसारसमुद्र से तरने के उपाय हैं।

२२ दुनियां की ताकत

१. को लोकमाराधयितुं समर्थः।

—हृदयप्रदीप

इस संसार को एक साथ प्रसन्न करने में कौन समर्थ है ?

२. ढोर नां चाव्या मां कूचो रहे, पण लोकोनां चाव्या मां न रहे ।

३. घंटी ना गालमां बचे, पण लोकोनां चाव्या मां न बचे ।

४. कुआने मोढे ढाकणो देवाय पण गामने मोढे न देवाय ।

—गुजराती कहावतें

५. डू एज यू लाइक यू कैन्नॉट कर्ब मैन्स टंग ।

—अंग्रेजी कहावत

अपनी जबान पकड़ सकते हो, दूसरों की नहीं ।

६. मारनार नुं हाथ झलाय पण बोलनार नी जीभ न झलाय ।

—गुजराती कहावत

२३ जगत् को वश करने के उपाय

१. क्षमया, दयया, प्रेम्णा, सुनृतेनार्जवेन च ,
वशीकुर्याज्जगत्सर्वं, विनयेन च सेवया ।

क्षमा, दया, प्रेम, मधुरवाणी, नम्रता, सरलता और सेवा से सब जगत् को वश में करना चाहिए ।

२. यदीच्छसि वशीकर्तुं, जगदेकेन कर्मणा ।
पुरा पञ्चदशास्येभ्यो, गां चरंतीं निवारय !

—चाणक्यनीति १४।१४

जो एक ही कर्म से जगत् को वश किया चाहते हो तो पहले पन्द्रह मुखों से चरती हुई मनरूपी गाय को रोको । तात्पर्य यह है कि आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा—ये पाँचों ज्ञानेन्द्रियां हैं । मुख, हाथ, पाँव, लिंग, गुदा में ये पांच कर्मेन्द्रियां हैं । शब्द, स्पर्श रूप, रस, गंध—ये पांच ज्ञानेन्द्रियों के विषय हैं । इन पन्द्रहों के सहारे से ही मन इधर-उधर भटकता है । अतः इसे इनके सम्पर्क से हटाओ !

३. सद्भावेन हरेन्मित्रं, संभ्रमेण तु बान्धवान् ।
स्त्री-भृत्यौ दान-मानाभ्यां, दाक्षिण्येनेतरान् जनान् ॥

—हितोपदेश

सद्भावनासे मित्र को, सम्मान से बांधवों को, दान से स्त्री को, मान से सेवक को और चतुरता से अन्य लोगों को वश में करना चाहिए ।

४. लुब्धमर्थेन गृह्णीयात्स्तब्धमञ्जलिकर्मणा ।
मूर्खं छन्दानुरोधेन, याथार्थ्येन च पण्डितम् ॥

—चाणक्यनीति ६।१२

लोभी को धन से, अभिमानी को हाथ जोड़कर, मूर्ख को उसका मनोरथ पूरा करके और पण्डित को सच-सच कह कर वश में करना चाहिए ।

चौदह रज्ज्वात्मक संसार कितना बड़ा है, इसको समझाने के लिये जैनशास्त्र (भगवती ११। ०) में छः देवों का दृष्टान्त दिया गया है, वह इस प्रकार है—

जम्बूद्वीप की परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन, तीन कोस, एक सौ अट्ठाईस धनुष्य और कुछ अधिक साढ़े तेरह अंगुल है। अब कल्पना कीजिये कि महान् ऋद्धिवाले छः देवता जम्बूद्वीप के मेरु-पर्वत की चूलिका को घेर कर खड़े हैं। इधर चार दिक्कु-मारियां, (देवियां) हाथों में बलिपिण्ड लेकर जम्बूद्वीप की आठ योजन ऊँची जगती पर चारों दिशाओं में बाहर की तरफ मुख करके खड़ी हैं। वे एक ही साथ चारों बलिपिण्डों को नीचे गिरायें। उस समय उन छहों देवों में से हर एक देवता मेरुचूलिका से अपनी शीघ्रतर गति द्वारा नीचे आकर पृथ्वी तक पहुँचने से पहले ही उन चारों बलिपिण्डों को ग्रहण करने में समर्थ है। बलिपिण्ड जितनी देर में देवियों के हाथों से छूटकर जमीन तक आठ योजन भी नहीं आ पाते, उतनी-सी देर में वह देवता मेरुचूलिका से लाख योजन तो नीचे आजाता है और लगभग सवा

तीन लाख योजन का जम्बूद्वीप के चारों ओर एक चक्कर लगा देता है अर्थात् सवा चार लाख योजन क्षेत्र लांघ देता है।

लोक कितना बड़ा है, यह जानने के लिए उपर्युक्त शीघ्रगति से उन छहों देवों में से घनीकृत लोक के मध्य भाग से चार देवता तो चारों दिशाओं में जायें और दो ऊपर-नीचे जायें। उस समय हजार वर्ष की आयुवाला एक बालक उत्पन्न होकर पूर्ण आयुष्य भोगकर मर जाये, यावत् उसकी सात पीढ़ियां बीत जाये एवं उसके नाम-गोत्र भी नष्ट हो जायें। इतने लम्बे समय तक भी यदि वे छहों देवता अपनी शीघ्रतरगति से निरन्तर चलते ही जायें तो भी इस लोक का अन्त नहीं आ सकता एवं जितना रास्ता वे तय करते हैं, उससे असंख्यातवां भाग शेष रह जाता है।

२. आईंस्टीन के मतानुसार प्रति सेकिण्ड एक लाख ८६ हजार मील चलनेवाली प्रकाश की किरणें यदि संसार की परिक्रमा करें तो उन्हें १२ करोड़ वर्ष लग जायेंगे।

३. **ग्रहों और ब्रह्माण्डों के विषय में वैज्ञानिकों का मत–**

वैज्ञानिकों के मतानुसार यह पृथ्वी एक लम्बूतरे फुटबॉल की तरह गोल है और एक हजार मील प्रति घंटा की गति से अपनी धरी पर घूम रही है तथा ६६ हजार मील प्रति घंटा की गति से सूर्य की वार्षिक परिक्रमा पूरी कर रही

है। पृथ्वी की तरह अन्य ग्रह भी सूर्यमण्डल के चारों ओर घूम रहे हैं। सूर्य से इनकी दूरी निम्न प्रकार है—

ग्रह	**दूरी (मीलों में)**
बुध	३ करोड़ ६० लाख
शुक्र	६ करोड़ ७३ लाख
पृथ्वी	९ करोड़ ३० लाख
मंगल	१४ करोड़ १७ लाख
बृहस्पति	४८ करोड़ ३० लाख
शनि	८८ करोड़ ७१ लाख
अरुण	१७८ कराड़ ५० लाख
वरुण	२७९ करोड़ ७० लाख
यम	३४७ करोड़

हमको यह भी जान लेना चाहिए कि सूर्य का आकर्षण इन ग्रहों से भी करोड़ों मील दूर तक है। पर वहां कोई ग्रह नहीं है। सूर्यमंडल ९०० करोड़ मील लम्बा है और इतना ही चौड़ा है। यह गोला इस ब्रह्माण्ड (जिसे आकाशगंगा कहते हैं) के चारों ओर घूम रहा है। इसे अपना एक चक्कर पूरा करने में ३० करोड़ ६७ लाख २० हजार वर्ष लगते है। इस ब्रह्माण्ड के बाहर हमारा सूर्य-मण्डल अकेला ही नहीं है ऐसे डेढ़ अरब सूर्यमण्डल घूम रहे हैं। हमारा यह सूर्यमण्डल उन सबसे छोटा है। पूर्वोक्त बृहत् सूर्यमण्डलों के बीच में घूमता हुआ हमारा यह सूर्य-मण्डल ऐसा प्रतीत होता है, मानो हजारों मील प्रतिघंटा

की गति से चलती हुई आंधी में घूमते हुए बड़े-बड़े वृक्षों एवं पहाड़ों के बीच में एक राई का दाना घूम रहा है।

आकाशगंगा से आगे जो चमकते हुए सितारे दिखाई देते हैं, उनमें से प्रत्येक सितारा एक-एक ब्रह्माण्ड है। ऐसे कितने ब्रह्माण्ड हैं, यह किसी को पता नहीं है। कहाजाता है कि लगभग १० हजार करोड़ ब्रह्माण्ड ता वैज्ञानिकों ने गिन लिए हैं। कई सितारे तो पृथ्वी से इतने दूर हैं कि १ लाख ८३ हजार मील प्रतिसेकिण्ड की गति से चलने वाली उनकी रोशनी यहाँ अरबों वर्षों तक भी नहीं पहुंच सकती। इन सबसे परे भी कितने खरब ब्रह्माण्ड और है, उनका अभी तक कोई पता नहीं लगा है और न कभी लग सकता है। अस्तु, इस अनन्त सृष्टि पर ज्यों-ज्यों विचार किया जाता है त्यों-त्यों हैरानी होती है और दिमाग चक्कर खाने लगता है।

हमारी यह दृश्यमान पृथ्वी एक सिरे से दूसरे सिरे तक ७९२७ मील चौड़ी है इस पर ३५० करोड़ से भी अधिक मनुष्य रहते हैं। चाँद पृथ्वी से लगभग ढाई लाख मील दूर है

(मिलाप, २१ मई १९६९ के सम्पादकीय लेख के आधार पर।)

२५ नरक-संसार

१. नरकः पापकर्मिणां यातनास्थानेषु ।

—**सूत्रकृतांग श्रुत २ अ. १ टीका**

पापी जीवों के दुःख भोगने के स्थानों के अर्थ में नरक शब्द का प्रयोग होता है ।

२. अहेलोगेणं सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ........एयासिणं सत्तण्हं पुढवीणं सत्त णामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा–घम्मा, वंसा, सेला, अंजणा रिट्ठा,मघा माघवती । —**स्थानांग ७**

अधोलोक में सात पृथ्वियाँ हैं, उनके ये सात नाम हैं–
१ घमा, २ वंशा, ३ शेला, ४ अञ्जना, ५ रिष्ठा, ६ मघा, ७ माघवती ।

३. एयासिणं सत्तण्ह पुढवीणं सत्त गोत्ता पण्णत्ता, तं जहा–रयणप्पभा, सक्करप्पभा, बालुकापभा, पंकप्पभा, धूमप्पभा, तमा, तमतमा । —**स्थानांग ७**

इन सातों पृथ्वियों के सात गोत्र हैं–१ रत्नप्रभा, २ शर्कराप्रभा, ३ बालूकाप्रभा, ४ पङ्कप्रभा, ५ धूम्रप्रभा, ६ तमःप्रभा, ७ तमतमाप्रभा ।

(शब्दार्थ से सम्बन्ध न रखनेवाली अनादिकाल से प्रचलित संज्ञा को **नाम** कहते हैं । शब्दार्थ का ध्यान रखकर किसी का जो नाम दिया जाता है, उसे **गोत्र** कहते हैं । घमा आदि सात पृथ्वियों के नाम हैं और रत्नप्रभा आदि गोत्र हैं । —**प्रज्ञापना २ टीका**

४. आसीयं बत्तीसं, अट्ठावीसं तहेव वीसं च ।
अट्ठारस सोलसगं, अट्ठुत्तरमेव हेट्ठिमया ।।

—जीवाभिगम प्रतिपत्ति ३ उ. १. नरकाधिकार

रत्नप्रभादि पृथ्वियों की मोटाई क्रमशः निम्नलिखित है—
(१) एक लाख अस्सी हजार योजन, (२) एक लाख बत्तीस हजार योजन, (३) एक लाख अठाईस हजार योजन, (४) एक लाख बीस हजार योजन, (५) एक लाख अठारह हजार योजन,
(६) एक लाख सोलह हजार योजन, (७) एक लाख आठ हजार योजन ।

५. तीसा य पन्नवीसा, पन्नरस दसा य तिन्नि य हवंति ।
पंचूणसयसहस्सं, पंचे व अणुत्तरा णरगा ।।

—जीवाभिगम प्रतिपत्ति ३., उ. १ नरकाधिकार

१ तीस लाख, २ पच्चीस लाख, ३ पन्द्रह लाख ४ दस लाख, ५ तीन लाख, ६ पाँच कम एक लाख, ७ पांच । ये क्रमशः सातों नरकों के नरकवासों की संख्या है । (सब मिलकर ८४ लाख नरकावास होते हैं ।)

६. रत्नप्रभा आदि पृथ्वियों में ग्राम-नगर आदि नहीं हैं । (विग्रहगति प्राप्त जीवों के अतिरिक्त) बादर अग्निकाय नहीं है । वहाँ जो बादल-गर्जना एवं वृष्टि होती है, वह सुर-असुर एवं नागों द्वारा की जाती है ।

—भगवती ६।८

७. नरगा अंतो वट्टा बाहिं चउरंसा, अहे खुरप्पसंठाणसंठिया, निच्चंधकारतमसा, ववगयगह-चंद-सूर-नक्खत्त-जोइसप्पहा, मेद-वसा-मांस-रुहिर - पूयपडल - चिक्खल - लित्ताणु-

लवेणतला, असुचिविसा, परमदुब्भिगंधा, काउयअगणि-वण्णाभा, कक्खड़फासा, दुरहियासा, असुभानरगा, असुभा नरएसु वेयणा। नो चेव णं नरए नेरइया निद्दायंति वा, पयलायंति वा, सुइं वा, रइं वा, धिइं वा, मइं वा उवलभंति।

—दशाश्रुत स्कन्ध ६

नरकस्थान भीतर से गोल, बाहर से चौकोना और नीचे से उस्तरे के समान तीक्ष्ण है। वहां सदा अंधकार रहता है। सूर्य-चन्द्रादिक का प्रकाश नहीं होता। नरकों का भूमितल विकृत वसा मांस-लोही-पीव के समूह के कीचड़ से लिप्त रहता है। मल-मूत्रादि युक्त एवं दुर्गन्धसहित है, कृष्णअग्नि के समान प्रभा है। उसका स्पर्श कर्कश एवं दुस्सह है। इस प्रकार नरक-स्थान अशुभ है एवं उसमें वेदना भी अशुभ है। नरक में पापीजीव निद्रा एवं विशेषनिद्रा नहीं ले सकते तथा स्मृति, रति, धृति एवं मति की प्राप्ति नहीं कर सकते।

८. नेरइयाणं भंते! केवइयं कालंट्ठिई पन्नत्ता?
गोयमा! जहन्नेणं दसवाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं।

—प्रज्ञापना ४

भगवन्! नरको में आयुष्य कितनी हैं?

गौतम! जघन्य दस हजार वर्ष की एवं उत्कृष्ट तेंतीस सागरोपम की है।

नरक के दुःख

१. जारिसा माणुसे लोए, ताया दीसंति वेयणा ।
एत्तो अणंतगुणिया, नरएसु दुक्खवेयणा ।।

—उत्तराध्ययन १६।७४

मनुष्यलोक में जो वेदनाएं नजर आ रही हैं, नरकों में उनसे अनन्तगुणी वेदनाएं हैं ।

२. अच्छिनिमीलियमेत्तं, नत्थि सुहं दुक्खमेव पडिबद्धं ।
नरए नेरइयाणं, अहोनिसं पच्च माणाणं ।।११।।
अइसीयं अइउण्हं अइतण्हा अइखुहा अइभयं वा ।
नरए नेरइयाणं, दुक्ख सयाइं अविस्सामं ।।१२।।

—जीवाभिगम-प्रतिपत्ति ३ उ. २. नरकाधिकार

नरक में पापी जीव दिनरात दुःख में पच रहे हैं । उन्हें आंख-मींच कर खोलें, इतनी देर भी सुख नहीं है । नरक में अतिशीत, अति उष्णता, अतितृषा, अतिक्षुधा एवं अतिभय आदि सैकड़ों प्रकार के दुःख हैं, जिन्हें पापी जीव अविश्रान्तरूप से सह रहे हैं ।

३. णेरइयाणं दसविहं वेयणं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति तं जहा-
सीयं, उसिणं, खुहं पिवासं, कंडु, परब्भं, भयं, सोगं, जरं, वाहिं ।

—स्थानाङ्ग १०।७५३

नरक के जीव १० प्रकार की वेदना का अनुभव करते हुए विचरते हैं। यथा—(१) शीत, २ उष्ण, ३ भूख, ४ तृषा, ५ खाज, ६ परवशता, ७ भय, ८ शोक, ६ जरा-वृद्धावस्था, १० ज्वर-कुष्ट आदि रोग।

४. एगमेगस्स णं.......नेरइयस्स असब्भावपट्ठवणाए सव्वोदही वा सव्व पोग्गले वा आसगंसि पक्खिवेज्जा, णो चेव णं से णेरइए तित्तो वा सिया वितण्हे वा सिया। एरिसयाणं गोयमा! णेरइया खुहप्पिवासं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति।

—जीवाभिगम, प्रतिपत्ति ३ उ. २ नरकाधिकार

• असत्कल्पना से यदि एक नरकनिवासी जीव के मुख में सारे समुद्रों का पानी और दुनियां के सारे खाद्य-पुद्गल डाल दिए जायें तो भी उसकी भूख-प्यास नहीं बुझती। हे गौतम! नरक के जीव इस प्रकार अनन्त भूख-प्यास का अनुभव कर रहे हैं।

५. तेणं तत्थ णिच्चं भीया, णिच्चं तसिया, णिच्चं छुहिया, णिच्चं ऊव्विग्गा, णिच्चं उपप्पुया, णिच्चं वहिया, णिच्चं परममसुभमउलमणुबद्धं निरयभवं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति। **—जीवाभिगम, प्रतिपत्ति ३ नरकाधिकार उ. २**

वे नरक के जीव सदा भयभीत, त्रस्त, क्षुधित, उद्विग्न एवं व्याकुल रहते हैं। वे निरन्तर बध को प्राप्त होते हैं वे अतुल-अशुभ परमाणुओं से अनुबद्ध होते हैं। इस तरह घोर-पीड़ा का अनुभव करते हुए विचरते हैं।

६. हण भिंदह भिंदह णं दहेति,
सद्दे सुणित्ता परहम्मियाणं।
ते नारगाओ भयभिन्नसन्ना,
कंखंति कं नाम दिसं वयामो। **—सूत्रकृताङ्ग ५।१।६**

इन पापियों को मुग्दरादिक से मारो, खड्गादिक से छेदों, शूलादिक से भेदो, अग्नि से जलाओ। परमाधार्मिक देवों के ऐसे शब्द सुन कर नैरयिक भय से नष्ट प्राय-संज्ञावाले होकर सोचते हैं कि अब भाग कर कहां जाएँ ?

७. छिंदंति बालस्स खुरेण नक्कं,
उट्ठे वि छिंदंति दुवेवि कन्ने।
जिब्भं विणिक्कस्स विहत्थिमित्तं,
तिक्खाहि सूलाहिऽभितावयंति।

—सूत्रकृताङ्ग ५।१।२२

परमाधार्मिक देवता पूर्वजन्म में किये हुए पापों का स्मरण करवा कर छुरे से पापी जीवों के नाक, होठ एवं दोनों कान काटते हैं। उनकी जीभों को खींचकर वितस्ति (गिठ) मात्र बाहर निकाल लेते हैं और फिर उसका तीखे शूलों द्वारा भेदन करते हैं।

८. कर-कर पाप प्रचंड नर, पड़े नरक जमहत्थ।
बन विकराल विशेष सुर, फिर गये ते सब सत्थ ।।
फिर गये ते सब सत्थत, पकड़ पिछत्थत,
घर के लग्गग, गुर्ज अगग्गग,
सिंह विण भग्गग, डरपिय अग्गन मग्गग पग्गग,
धर भुंई धूजत धर-धर, शुद्धज नांह सुबुद्धज हीन,
कुबुद्धज कर-कर। —अमृतध्वनिछंद

९. जं नरए नेरइया, दुहाइं पांवति घोर-अणंताइं।
ततो अणंतगुणियं, निगोयमज्झे दुहं होइ ।।

नरक में जो पापीजीव घोर अनन्त दुःख पा रहे हैं, निगोद में उससे अनन्तगुणा दुःख होता है।

२७ नरक में जाने के कारण

१. चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा—महारंभयाए, महापरिग्गहयाए, पंचिंदियवहेणं, कुणिमाहारेणं।

—स्थानांग ४।४।३७३

चार कारणों से जीव नरक के योग्य आयुष्य का उपार्जन करते हैं। यथा—१ महाआरम्भ से, २ महापरिग्रह से, ३ पञ्चेन्द्रिय-जीवों का बध करने से, ४ मद्य-मांस का आहार करने से।

२. त्रिविधं नरकस्येदं, द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभ-स्तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत् ॥

—गीता १६।२१

काम क्रोध और लोभ—ये तीन नरक के द्वार हैं।

३. पंचहिं ठाणेहिं जीवा दुग्गइं गच्छंति तं जहा—पाणाइवाएणं जाव परिग्गहेणं।

—स्थानाङ्ग ५।१।३९१

पांच कारणों से जीव दुर्गति में जाता है—प्राणातिपात से यावत् परिग्रह से।

२८ नरकगामी कौन ?

१. जे केइ बाला इह जीवियट्ठी,
पावाइं कम्माइं करेंति रुद्दा।
ते घोररूवे तमिसंधयारे,
तिव्वाभितावे नरए पडंति ॥

—सूत्रकृतांग ५।१।३

जो अज्ञानी इहलोक के अर्थी बनकर घोरपाप करते हैं, वे अत्यधिक अन्धकारवाले एवं तीव्रअभितापवाले नरक में पड़ते हैं।

२. इमं दंडेह, इमं मुंडेह, इमं तज्जेह, इमं तालेह ....
इमं हत्थछिन्नयं करेह, इमं पायछिन्नयं करेह, इमं, उट्ठछिन्नयं करेह, इमं सीसछिन्नयं करेह, इमं मुहछिन्नयंकरेह, इमं वेयछिन्नयं करेह, ... इमं भत्तपाणं निरुद्धयं करेह, इमं जावज्जीवबंधणं करेह, इमं अन्नयरेणं असुभकुमारेणं मारेह ! ...

तहप्पगारे पुरिसजाए .... कालमासे कालं किच्चाधरणीयलमईवइत्ता अहे नरगधरणीयले पइट्ठाणे भवइ।

—दशाश्रुतस्कन्ध ६

इसे दण्डित करो, इसे मुण्डित करो, इसे मारो, इसे पीटो, इसके हाथ काटो, इसके पैर काटो, इसके कान काटो, इसकी नाक

काटो, ईसके होंठ काटो, ईसका सिर काटो, इसका मुखच्छेदन करो, इसका लिंगच्छेदन करो, इसका भोजन-पानी रोको, इसे यावज्जीवन के लिए बाँधो तथा इसे किसी एक कुमरण से मारो! इस प्रकार आदेश-निर्देश करनेवाला पुरुष मरकर नीचे नरक-पृथ्वीतल में जाता है।

३. आशापाशशतैर्बद्धाः, काम-क्रोधपरायणाः।
ईहन्ते काम-भोगार्थ-मन्यायेनार्थसचयान् ॥१२॥
इदमद्य मया लब्ध-मिमं प्राप्स्ये मनोरथम्।
इदमस्तीदमपि मे, भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥
असौ मया हतः शत्रु-र्हनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोऽहमहं भोगी, सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥१४॥
आढ्योऽभिजनवानस्मि, कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य, इत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥
अनेकचित्तविभ्रान्ता, मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः काम-भोगेसु, पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥१६॥

—गीता १६

आशारूप, सैकड़ों बन्धनों से बंधे हुए काम-क्रोध में लीन प्राणी काम-भोग की प्राप्ति के लिए अन्याय से धन का संचय करना चाहते हैं ॥१२॥

वे सोचते हैं—यह तो मुझे आज मिल गया और आगे यह मिल जाएगा। मेरे पास यह इतना धन तो है एवं इतना फिर हो जाएगा ॥१३॥

मैंने इस शत्रु को मार दिया, दूसरों को भी मार दूंगा। मैं ईश्वर हूँ, भोगी हूं, सिद्ध हूँ, बलवान हूं, सुखी हूँ ॥१४॥

मैं धनवान् हूँ, परिवारवाला हूं, आज मेरे समान दूसरा कौन है ? मैं यज्ञ करूंगा, दान दूंगा और हर्षित हो जाऊंगा ॥१५॥

ऐसे अज्ञान से मोहित अनेक प्रकार से चित्त में विभ्रांत मोह-जाल में फँसे हुए एवं काम-भोग में तत्पर प्राणी अपवित्र नरक में जाते हैं ॥१६॥

४. मित्रद्रोही कृतघ्नश्च, यश्च विश्वासघातकः ।
तें नरा नरकं यान्ति, यावच्चन्द्र-दिवाकरौ ॥

—पञ्चतन्त्र १।४५४

जो मनुष्य मित्रद्रोही, कृतघ्न एवं विश्वासघाती होते हैं; वे नरक में जाते हैं, जब तक सूर्य-चन्द्र विद्यमान हैं ।

५. कुक्षि-भरणनिष्ठा ये, ते वै नरकगामिनः । —गरुड़पुराण

जो केवल पेटभराई की चिंता में रहते हैं, वे नरकगामी होते हैं ।

देव-संसार

१. देवों की पहचान—

अमिलाय - मल्लदामा, अरिणमिसनयरणा य नीरजसरीरा,
चउरंगुलेरण भूमिं, न पिसंति सुरा जिरणो कहए।

—व्यवहार ३।२ भाष्य

देवता अम्लानपुष्पमालावाले अनिमेष नेत्रवाले, निर्मल शरीर-वाले और पृथ्वी से चार अंगुल ऊपर रहने वाले होते हैं—ऐसा भगवान का कथन है।

२. देवों की उत्पत्ति—

मनुष्यरिणयों की तरह देवियाँ गर्भ धाररण नहीं करतीं। देवों के उत्पन्न होने का एक नियत स्थान होता है, उसे **उपपात** कहते हैं। —स्थानाङ्ग ५।३।१४

३. देवों की कार्यक्षमता—

(क) कई देवता हजार प्रकार के रूप बनाकर पृथक्-पृथक् हजार भाषायें बोल सकते हैं। —भगवती १४।६।६

(ख) कई देवता मनुष्यों की आंखों के भांपरणों पर बत्तीस प्रकार का दिव्यनाटक दिखा देते हैं, फिर भी मनुष्यों को बिल्कुल तकलीफ नहीं होने देते। उन देवों को अव्याबाध देव कहते हैं। —भगवती १४।८।१७

(ग) शक्रेन्द्र महाराज के लिए कहा जाता है कि वे मनुष्य के मस्तक को तलवार से काटकर, उसे कूट-पीट कर चूर्ण बना देते हैं एवं कमंडलु में डाल लेते हैं। फिर तत्काल उस चूर्ण के रजकणों का पुनः मस्तक बनाकर मनुष्य की धड़ से जोड़ देते हैं। कार्य इतनी दक्षता व शीघ्रता से करते हैं कि मनुष्य को पीड़ा का बिलकुल अनुभव तक नहीं होने देते।

—भगवती १४।८।१८

४. देवों की आयु—

(क) देवों की आयु जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट ३३ सागर की है। —प्रज्ञापना ४ के आधार से

(ख) चउहिं ठाणेहिं जीवादेवाउयत्ताए कम्म पगरेंति, तं जहा–सरागसंजमेणं, संजमासंजमेणं, बालतवोकम्मेणं, अकामणिज्जराए। —स्थानांग ४।४।३७३

चार कारणों से जीव देवता का आयुष्य बाँधते हैं। यथा–(१) राग भावयुक्त संयम पालने से, (२) श्रावक-व्रत पालने से, (३) अज्ञान दशा की तपस्या से (४) अकाम–मोक्ष की इच्छा के बिना की गई निर्जरा से।

(ग) दानं दरिद्रस्य विभोः क्षमित्वं,
यूनां तपो ज्ञानवतां च मौनम्।
इच्छानिवृत्तिश्च सुखोचितानां,
दया च भूतेषु दिवं नयन्ति॥

—पद्मपुराण, पाताल खण्ड ९२।५८

जो आदमी दरिद्र हैं उनका दान करना, जो सामर्थ्यवाले हैं उनका क्षमा करना, जो जवान हैं उनका तपस्या करना, जो ज्ञानी हैं उनका मौन रखना, जो सुख भोगने के योग्य हैं उनका सुख की इच्छा का त्याग करना और सभी प्राणियों पर दया करना–ये सद्गुण मनुष्य को स्वर्ग में लेजानेवाले हैं।

५. देवों के भेद—

(क) देवा चउव्विहा पण्णत्ता तं जहा—भवणवइ, वाणमंतरा, जोइसिया, वेमाणिया। —**प्रज्ञापना १**

देवता चार प्रकार के होते है–(१) भवनपति, (२) व्यन्तर, (३) ज्योतिष्क, (४) वैमानिक।

(ख) पंचविहा देवा पण्णत्ता, तं जहा—भवियदव्वदेवा, णरदवा, धम्मदेवा, देवाधिदेवा, भावदेवा।

—**स्थानांग ५।१**

पाँच प्रकार के देव कहे हैं–

(१) **भव्य द्रव्यदेव**–भविष्य में देवयोनि में उत्पन्न होनेवाले जीव, (२) **नरदेव**–चक्रवर्त्ती, (३) **धर्मदेव**–अनागार-साधु, (४) **देवाधिदेव**--तीर्थंकर (५) **भावदेव**–भवनपतिदेव आदि।

१. **झाला राजपूत**-पाटड़ीनरेश **करण गेला** की रानी से **बावरा** भूत संगम करने लगा। **हलवद** के राजपूत श्री **हरपालदेव** जो पाटड़ीनरेश के भानजे थे, छिपकर रानी के महल में रहे। ज्योंही भूत आया, चोटी पकड़ कर उसे पछाड़ने लगे। भूत ने हारकर सारी उम्र सेवा स्वीकार की। भूत को जीत कर घर जाते समय भूख लगी। श्मसान में चिता जल रही थी। हरपालदेव उसमें दो बकरे पकाने लगे। अचानक जलती चिता में से दो हाथ निकले। मांस समर्पण किया, लुप्त हुआ, तब जंघा चीर कर खून दिया। शक्तिदेवी प्रकट हुई एवं मुझको पूछे बिना कोई काम न करना-इस शर्त से वह हरपालदेव की रानी बनी भूत का उपद्रव मिटाने से पाटड़ीनरेश ने यथेष्ट मांगने का वरदान दिया। भूत एवं शक्ति की सलाह से रात-रात में तोरण बांधे जायँ, उतने गांव मांगे। राजा की स्वीकृति मिली, हरपालदेव घोड़े पर चढ़कर दौड़े एवं २३५२ गांवों में तोरण बांधे। फिर ५५० गांव शक्तिरानी को विशेषरूप से दान में दिये। ध्रांगध्रा राजधानी बनाई गई।

एकदिन राजकुमार खेल रहे थे। मत्त हाथी उन्हें

मारने लगा। महल में बैठी हुई शक्ति रानी ने हाथ लम्बे किये एवं राजकुमारों को झाल (पकड़) कर ऊँचे ले लिये। झालने से **झाला** राजपूत कहलाए। बात प्रसिद्ध होने से शक्ति अन्तर्धान हो गई। राज-परिवार अब भी शक्ति-माता की पूजा करता है। **—ध्रांगध्रा में श्रुत**

२. **मेवे की खिचड़ी—**

महाराणा प्रताप जंगल में थे। अकबर फकीर के रूप में आया एवं मेवे की खिचड़ी मांगी। सामान न होने से शर्मिन्दा होकर महाराणा मरने लगे। अचानक एक आदमी बैल पर समान लाद कर लाया और देकर गायब हो गया। मेवे की खिचड़ी बनाकर खिलाई। अकबर महाराणा की उदारता पर प्रसन्न होकर लौटा। **—उदयपुर में श्रुत**

३. **रुपयों की थैली—**

नेपोलियनबोनापार्ट से माता ने पैसे मांगे। न दे सकने से वह मरने लगा। एक दोस्त रुपयों की थैली देकर गुम होगया।

४. **वंशच्छेद सांप—**

फतेपुर निवासी 'धीरमलजी माहेश्वरी' व्यापारार्थ भिवानी जा रहे थे। रास्ते में एक गांव में एक जाट के घर ठहरे। वहां सांप के काटने से ठाकुर का कुँवर मर गया था। उसे चिता में सुलाकर जलाने की तैयारी हो रही थी। धीरमल जी वहां पहुंचे। चाकू से उसका खून लिया और बोले—इसे बाहर निकालो, यह जी जायेगा। बाहर निकाल कर

मंत्र पढ़ा, सांप आया। पूछने पर कहा—इसने खेलते समय मुझे पत्थर से मारा था। धीरमलजी ने मन्त्र पढ़कर माफ करने के लिये कहा। सांप बोला—१०० कमेड़े दिलाऊँगा। फिर मन्त्र पढ़कर आग्रह किया, साँप ने पचास कमेड़े घटाए। इस प्रकार धीरमलजी पुनः-पुनः मन्त्र पढ़ते गये और कमेड़ों की संख्या घटती गई। आखिर एक कमेड़े पर साँप डट गया। फिर मन्त्र पढ़ा एवं कहा–आधा हनूमान के नाम का और आधा मेरे नाम का छोड़ दे ! साँप माना एवं कुंवर जी गया।

● एक बार संपेरों से विवाद हुआ। उन्होंने एक राजसर्प लाकर धीरमलजी पर छोड़ा, सांप ने डंक मारा एवं वे बेहोश हुए। पूर्व कथानुसार उन्हें गोबर से भरे खड्डे मैं सुला कर ऊपर भी गोबर डाल दिया गया। सात दिन के बाद गोबर फटा एवं बाहर निकलाकर उनके मुंह में धी डाला गया। वे तत्काल होश में आगये। फिर वे जंगलों में घूमकर एक बिल्कुल पतला पीले रंग का साँप लाये और कहने लगे इसका नाम "वंशच्छेद सर्प" है। यह जिसे भी काटेगा उसके वंश के सभी मर जायँगे। सपेरों ने हार मानी। **—साध्वी श्रीदीपांजी से श्रुत**

५. **साँपों की गाड़ी**–कच्छ की बात है, एक मन्त्रवेत्ता ठाकुर घोड़े पर चढ़कर कहीं जा रहे थे। दो कालेनागों पर सवार होकर जाता हुआ एक हरा साँप मिला। ठाकुर ने मन्त्र पढ़कर रास्ते में लकीर खींची, नाग रुके, सर्पराज ने नीचे

उतरकर उसको मिटा दिया। नाग चलने लगे, पुनः लकीर खींची, पुनः मिटाई। ज्यों ही तीसरी बार लकीर खींची, सर्पराज ने उस लकीर पर पूछ का प्रहार किया एवं घोड़े से गिरकर ठाकुर मर गए। **–श्रीडालगणी से प्राप्त**

६. **मन्त्रित कौड़ियाँ**—डुमार (बंगाल) में एक आदमी को साँप ने काट खाया। मन्त्रवादी ने चारों दिशाओं में मंत्रित कौड़ियाँ फेंकी। तीन दिशाओं से वापिस आ गई लेकिन चौथी दिशा से तीन कौड़ियाँ साँप को लेकर आई। मंत्रवादी ने दूध के चार प्याले रखे, साँप डंक चूसता गया और दूध में डालता गया। तीन प्यालों के दूध का रंग नीला हो गया। फिर चौथे प्याले का दूध पीकर सांपचला गया और वह आदमी जी गया।

—पृथ्वीराज सुराणा से श्रुत

७. **वर्ष भर का खर्च**–अहमदाबाद लाल-पोल में एक पटेल की मृत्यु के बाद जब तक उसकी स्त्री जीवित रही, तब तक नये वर्ष के दिन भोंयरा के द्वार पर सारे वर्ष के खर्च का हिसाब और एक दूध का प्याला रख दिया जाता। साँप आकर दूध पी जाता और खर्च के रुपए रख जाता। माता की मृत्यु के पश्चात् पुत्रों ने भोंयरा खोला, एक आदमी मिला तब से उस साँप का आना बन्द हो गया।

८. **सिकोतरी**–अकबर भटेबर के तालाब पर सो रहा था। महाराणाप्रताप **जांबूड़ी** की नाल में गए। कृषक खेत में पत्थर फेंक रहा था। बुढ़िया बोली–"अरे ध्यान राखजे!

मेवाड़नाथ पधारे हैं" फिर प्रताप को दूध पिलाया। वह बुढ़िया सिकोतरी थी अतः विद्या से घोड़ी बनकर प्रताप को अकबर के डेरे में ले गई। राणा ने तलवार उठाई। आवाज आई--"ॐ हूँ" राणा ने पूछा कौन ? उत्तर मिला वीर हूं। फिर दाढ़ी और मूंछ काटकर ले आये। उसके बाद फिर अकबर ने मेवाड़ आना छोड़ दिया।

–उदयपुर में श्रुत

९. **रुई का फुआं**–चुरू में हीरालालजी यति ने श्रावकों का अतिआग्रह देखकर मन्त्र पढ़ना शुरू किया। ३०-४० आदमी चमत्कार देखने के लिए बैठे थे। पहले एक रुई का फुआं आकर गिरा। चन्द ही क्षणों में वह फुआं बालक, जवान एवं दाढ़ीवाला बूढ़ा बन गया। दर्शक सारे मूर्छित हो गए। फिर यति जी ने मंत्रित खून का छींटा डालकर उस उपद्रव को शांत किया।

कहा जाता है कि दर्शकों में से दो तो मर गये और एक (सुखलाल बरड़िया के पिता) चार दिन के बाद सचेत हुये।

–सुखलाल बरड़िया से श्रुत

१०. **यतिजी का पत्र**–पटियाला-महाराज ने सुनाम के यति से पूछा–मैं कौन से मार्ग से निकलूँगा ? यतिजी ने एक पत्र लिखा और उसे बन्द करके उन्हें दे दिया। राजा यतिजी को झूठा करने के लिए शहरपनाह की दीवार को फोड़कर बाहर निकला और एक वृक्ष की डाली पकड़कर वह

पत्र पढ़ने लगा। राजा ने जो कुछ किया वह सब उस पत्र में पहले से लिख रखा था। राजा ने प्रसन्न होकर भेंट के रूप में प्रतिवर्ष उन्हें ८४ रुपया देना स्वीकार किया।

११. **अजब ठंडाई**–बालोतरा (मारवाड़) में एक दिन 'सगतमलजी' आदि संत यतीजी का पुस्तकभण्डार देख रहे थे। दोपहर के बाद यतीजी ने थोड़ी-सी (तीन पाव अन्दाज) ठण्डाई बनाई और एक बर्तन में ढंककर रख दी। पीनेवाले आते गए और यतीजी पिलाते गये। लगभग तीस-चालीस आदमी पी गये। बाद में ढंका हुआ वस्त्र हटाकर देखा तो ठंडाई ज्यों की त्यों थी। फिर सन्तों के जलपात्र पर हाथ घुमाया। पानी जम गया एवं पात्र से चिपक गया। सन्त कुछ घबराये। यतीजी ने पुनः पात्र पर हाथ फेरा। सन्त पात्र उठाकर देखने लगे ता सारा पानी ढुल गया।

–सगतमलजी से श्रुत

१२. **मन्त्रित उड़द**–डाकिनियों ने एक यती के शिष्य को ग्रहण कर लिया एवं वह मर गया। क्रुद्ध गुरु ने मंत्रित उड़द दिये। जलती चिता में फैंकने से चीलों के रूप में आकर डाकिनियां उसमें गिरकर भस्म होने लगीं। एक मुट्ठी उड़द रख लेने से कुछ जीवित बच गयीं।

—उदयपुर में श्रुत

१३. **सुराणाजी बचे**–सात्युं गांव में तेजपालजी सुराणा को डाकिनी ने ग्रहण कर लिया। यतीजी ने अपना घुटना

मूंडा, ठाकुर साहब की माता (जो डाकिनी थीं)[1] का सिर मूंडा गया एवं सुराणा जी बचे। यतीजी को उसी समय ऊंट पर चढ़कर भागना पड़ा।

—चुरू के श्रावकों से श्रुत

१४. **मूसलाधार बरसात**—मालेरकोटला में यतीजी ने सवारी निकलते समय सलाम नहीं किया। नवाब क्रुद्ध हुआ। लोगों ने कहा—ये चमत्कारी पुरुष हैं। नवाब ने दस बजे तक बारिस बरसाने के लिये कहा। साढ़े नौ बजे के बाद बादल निकले और मूसलाधार बरसात होने लगी। नवाब एवं लोगों ने माफी मांगी। वृष्टि बन्द की। फिर वहाँ से यतीजी सिरसा चले गये। **—हाकमचन्द से श्रुत**

१५. **जलाशय सुखा दिए**—रानियां गांव पर बीकानेर का हमला हुआ। यतीजी ने रानियाँ से तीन-तीन कोस में सभी

---

१ डाकिनी मनुष्यणी ही होती है और यदा-कदा जरख पर सवार होकर घूमा करती है। पहले वह मन्त्र के बल से बिलौने में रहे हुए मक्खन को तथा तरबूज आदि फलों में रही हुई गिरी को स्यारने (खींचने) लगती है। इस प्रकार स्यारने के कारण वह **स्यारी** कहलाती है। ऐसा करते-करते जब वह बच्चों का कलेजा निकाल कर खाने लगती है तब उसे डाकिनी कहते हैं। डाकिनियो द्वारा गृहीत बालक सूखने लग जाता है और अन्त में मर जाता है। ऐसी भी दन्त कथा है कि जमींन में दाटे हुए मृत बच्चे को डाकिनी रात के समय निकालकर जीवित कर लेती है, उस समय यदि डाकिनी को मार दिया जाय तो बच्चा जीवित भी रह सकता है।

जलाशय सुखा दिये। शत्रु-सेनापति ने भिक्षु के वेष में आकर माफी मांगी तब तीन कोस पर एक तालाब में जल प्रकट किया। —हाकमचन्द से श्रुत

१६ (क) **फीकी-कड़वी चीनी**—राजलदेसरनिवासी मालचंदजी बैद ने चीनी (शक्कर) को मन्त्र द्वारा फीकी एवं कड़वी बना दिया। **प्रकाश बैद** का मुंह बहुत देर तक तक कड़वा रहा। —चूरू में आँखों देखा

(ख) इन्हीं मालचन्दजी ने दिव्य-शक्ति से खिवाड़ा (मारवाड़) में विदामांजी की दीक्षा के समय नौ सेर गुड़ की लापसी से ३४५ मनुष्यों को भोजन करवाया और सात सेर लापसी बचा भी ली।

(ग) मारवाड़ जंकशन में खारची गांव से बालचन्दजी के घर से पाँच सेर बादाम की वर्फी मंगवाकर लोगों को खिलाई तथा लाडनूं में विवाह के प्रसंग पर खुद तीस सेर मिठाई खा गये। और कुछ समय के बाद पुनः ज्यों की त्यों दिखा दी। —मालचन्दजी से श्रुत

१७. **कालूगणी की आवाज**—विक्रम संवत २००२ पोष की बात है। आचार्यश्री तुलसी मोमासर से सरदारशहर पधार रहे थे। उन दिनों आचार्यश्री के खांसी का प्रकोप इतना बढ़ रहा था कि कोई भी औषधि काम नहीं कर रही थी। मोमासर से छः मील दूर भादासर गाँव में रात के समय खांसी बहुत अधिक सता रही थी और नींद न आने से

काफी परेशानी हो रही थी। उस समय अष्टमाचार्य कालूगणी को आवाज आई–चिंता मत कर, ओढ़कर सो जा! आचार्यश्री सो गये। खांसी बिल्कुल बन्द थी। कुछ देर बाद पुनः विचार आया कि कालूगणी की आवाज नहीं आई, केवल मन का भ्रम था। बस, खांसी पहले से भी अधिक चलने लगी। आचार्यश्री बहुत खिन्न हो गये और सोचने लगे कि जो सन्देह किया वह मेरी गलती हुई। इतना-सा सोचने के साथ ही नींद आगई। प्रातः उठे तो खांसी का नाम-निशान भी नहीं था।

–आचार्यश्री तुलसी से श्रुत

१८. **खाटू का वृद्ध श्रावक**–संभवतः वि. सं. २००१ मिगसिर की बात है। रात को हम कई साधु आचार्य श्री तुलसी की सेवा में बैठे थे और देवताओं की बातें चल रही थीं। आचार्य श्री ने फरमाया कि अभी कुछ दिन पहले 'खाटू' से एक वृद्ध श्रावक दर्शनार्थ यहाँ (छापर) आगये। मैंने उनसे साश्चर्य पूछा–आँखों से तुम्हें पूरा दीखता नहीं, चलने की तुम्हारी शक्ति नहीं और बवासीर रोग से तुम पीड़ित हो, इस हालत में अकेले दर्शनार्थ कैसे आये? उन्होंने कहा–गुरुदेव! दर्शन की अभिलाषा बहुत दिनों से लग रही थी, लेकिन साधन के अभाव में उसकी पूर्ति नहीं हो सकी। एक दिन रात के समय छोटा बेटा (जो मर चुका था) दृष्टिगोचर हुआ और कहने लगा, पिताजी! चलिये मैं करवा लाऊं आपको दर्शन! मैंने पूछा तू कहाँ है? उसने कहा-व्यंतरदेवता की योनि में हूं। कई बार

अपने मित्रदेव के साथ आचार्य श्री के पास जाया करता हूं, मैंने कहा तू मुझे दर्शन कैसे करवाएगा ? उसने कहा, आप टिकिट लेकर केवल गाड़ी में बैठ जाइए। फिर मैं अपने आप संभाल लूंगा। गुरुदेव ! मैं उसका विश्वास करके गाड़ी में बैठ गया, गाड़ी रवाना होते ही मैं पूर्ण-स्वस्थ हो गया और आपके चरणों में पहुँच गया।

—धनमुनि

२० **श्रीभिक्षुस्वामी के स्मारक की उपलब्धि—**

जैनश्वेताम्बर तेरापंथ के आचार्य श्रीभिक्षुस्वामी का स्वर्गवास वि० सं० १८६० भाद्र सुदी १३ के दिन सिरयारी (मारवाड़) में हुआ था। १३ खंडी मंडी बनाई गई, १४० गाँवों के आदमी इकट्ठे हुए एवं नदी के किनारे अग्नि-संस्कार किया गया। वहां एक स्मारक बनाया तो गया था, लेकिन सिरियारी के श्रावकों की स्थिति बदल जाने से (कहा जाता है कि सिरियारी में तेरापंथी श्रावकों के जो ७०० घर थे वे प्रायः दक्षिण में व्यापार्थ चले गये और अब वहाँ केवल ३०-३५ घरही रह गये हैं।) उसकी सार,संभाल यहां तक नहीं हुई कि वह स्मारक कहाँ है और कौनसा है ? यह भी पता नहीं रहा। तेरापंथ-द्विशताब्दी के अवसर पर पुराने स्मारकों का अन्वेषणकार्य युवकवर्ग ने संभाला। सम्पतकुमार गधैया एवं मन्नालाल बरड़िया आदि सिरियारी पहुंचे। काफी खोज की गई, किन्तु स्मारक का पता नहीं लगा। जिसे लोग श्रीभिक्षुस्वामी का स्मारक मान रहे

थे, उस पर वहाँ के 'गुरांसा' 'हमारे पूर्वजों का है !' ऐसा दावा करने लगे। रात को स्मारक की चर्चा करते-करते सब सो गये। प्रातः उठकर वे युवक लोग शौचार्थ जङ्गल गये। चर्चा वही चल रही थी, वे नदी के किनारे एक वीरान पहाड़ी-ढाल पर पहुँचे और स्मारक की खोज में हाथ-पैर मार रहे थे ; इतने में सफेद बाल, झुकी कमर और चमकीली आखोंवाला एक बूढ़ा (जंगली-सा) आदमी पहाड़ी से उतरकर नीचे आया और पूछने लगा—'भाई ! क्या ढूंढ़ रहे हो' ?

सबने सिर झुकाकर कहा 'बाबा ! स्वामी जी का स्मारक !'

बाबा—'कौनसे स्वामीजी का ?'

युवक—तेरापंथ के आदि गुरु 'श्रीभिक्षु स्वामी का।'

बाबा—'हाँ–हाँ, था तो सही, भाई ! मैं अपने दादागुरु के साथ यहाँ अनेक बार आया करता था और दादागुरु कहते भी थे कि जिसने एक नया पंथ चलाया है यह उस 'बाबे' का चबूतरा है।''

युवक—'बाबा ! वह कहाँ है ?'

बाबा ने अँगुली लगाकर कहा—'इस स्थान पर होना चाहिए।'

बस, सभी युवक जुट गये और लोटों से मिट्टी खोदने लगे। कुछ ही क्षणों में एक ईंट निकली और बाद में चबूतरा भी प्रकट हो गया, जो तीन तरफ ठीक था, एक

तरफ ढहा हुआ था। इधर मुड़कर देखा तो बूढ़ा बाबा नजर नहीं आया था। काफी प्रयत्न करने पर भी पता नहीं लगा कि वह कौन था एवं कहाँ से आया था।

बस, पता लगते ही स्वर्गीय श्री बस्तीमलजी छाजेड़ आदि शहर के अनेक श्रावक वहाँ आ पहुँचे एवं युवकों को धन्यवाद देने लगे। फिर समाज ने चबूतरे पर संगमरमर का 'स्मारक-भवन' बनवा दिया, जो इस समय विद्यमान है। **—बंगलौर से प्रकाशित स्मारिका के आधार पर**

श्रीजयाचार्य के स्मारक का चमत्कार—

सन् १९४३ के अगस्त मास में जब जयपुर के नक्शे का आमूलचूल परिवर्तन किया जा रहा था और नयी सड़कें निकाली जा रही थीं, 'म्युजियम भवन' की एक सड़क के कटाव में, लूणियाजी के बाग में विद्यमान श्री जै. श्वे. तेरापंथ के चतुर्थपूज्य श्रीजयगणी का स्मारक (चबूतरा) भी आ गया। उसका एक तिहाई हिस्सा तोड़ना तय हुआ। वहाँ के श्रावकों ने काफी प्रयत्न किया, किन्तु सफलता नहीं मिली। क्योंकि मुख्यमन्त्री श्री मिर्जास्माइल ने बड़े-बड़े महल, मंदिर एवं मकबरे भी तुड़वा डाले थे। फिर स्मारक की तो बात ही क्या थी।

उस समय आचार्य श्रीतुलसी का चातुर्मास गंगाशहर था। यह समाचार सुनकर सेठ ईश्वरचंदजी चौपड़ा आदि समाज के मुखिया लोग परस्पर मिले। सबकी सलाह के अनुसार ३-४ साथियों सहित श्री तिलोकचंदजी चौपड़ा

जयपुर गये। वे छोटे-मोटे सभी इंजीनियरों एवं सरमिर्जा से भी मिले. लेकिन उत्तर यही मिला—"जो कुछ तय किया गया है, वही ठीक है।" श्रीचौपड़ाजी ने मुख्य-मन्त्री से निवेदन किया—कृपया, एक बार मौका तो देख लीजिये। अति आग्रहवश मुख्यमंत्री ने मौका देखना स्वीकार किया। पता लगते ही पुलिस गश्त लगाने लगी; पैमायश करनेवाले फीते लेकर स्मारक के चारों तरफ घूमने लगे थे। इंजीनियर पसीना-पसीना हो रहे थे। कारण यह था कि उनका नाप ठीक नहीं बैठ रहा था। दूसरे सब निशान ठीक थे, लेकिन श्री जयगणी का स्मारक जिसका एक तिहाई हिस्सा सड़क में आने से 'रेडमार्क' से विभूषित था, सड़क से तीन-चार फीट दूर हो गया था। सरमिर्जा के आते ही चीफ इंजीनियर ने कहा—'साहब! धरती पलट गई।' विस्मित मिर्जा साहब के हाथ जुड़ गये, बूट खुल गये और वे सिर झुकाकर बोले—'सचमुच वह एक महान् पुरुष था। मैं उसे अदब से सलाम करता हूँ। मिस्टर चौपड़ा, थैंक्स!

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों का कहना है कि श्री जयाचार्य के संस्कार के बाद वहाँ एक चंदन का वृक्ष प्रकट हुआ, जो तीस-चालीस साल तक रहा। बाग के माली को वहाँ अनेक बार अर्धरात्रि के समय श्वेतवस्त्रधारी दिव्यपुरुष के दर्शन हुये थे। एक बार प्रत्यक्ष होकर माली से कहा भी गया था—'यहाँ गंदगी न होने दी जाय।' कई लोगों

ने वहाँ प्रकाश-पुंज भी देखा था। आज भी अँधेरे-अँधेरे न जाने कौन वहाँ अर्चन करने आता है। अस्तु !

श्री जयाचार्य का स्वर्गवास वि. सं. १९३८ भाद्रवदी १२ को हुआ था एवं अन्त्येष्टि-जुलूस राजकीय सम्मान के साथ अजमेरी गेट से निकाला गया था। उक्त स्मारक पहले चूने का था; अब संगमर्मर का है एवं उसके ऊपर एक छोटी-सी छतरी भी बनादी गई है।

चौथा कोष्ठक

१ तिर्यञ्च संसार

१. नारक, मनुष्य और देवों को छोड़कर सब सांसारिक जीव-जन्तु तिर्यञ्च कहे जाते हैं।

तिर्यञ्च पाँच प्रकार के होते हैं--१ एकेन्द्रिय, २ द्वीन्द्रिय, ३ त्रीन्द्रिय, ४ चतुरिन्द्रिय, ५ पञ्चेन्द्रिय।

एकेन्द्रिय तिर्यञ्च पांच प्रकार के होते हैं—पृथ्वीकाय, २ अप्काय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पतिकाय।

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च दो प्रकार के हैं--सम्मूर्च्छिम और गर्भज। दोनों ही मुख्यतया तीन-तीन प्रकार के है—जलचर, स्थलचर और खेचर।

—लोकप्रकाशपुञ्ज ३

२. चउहिं ठणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए कम्मं पगरेंति, तं जहा—माइल्लयाए, नियडिल्लयाए, अलियवयणेणं कूडतुलकूडमाणेणं। —स्थानाङ्ग ४।४।३७३

चार कारणों से जीव तिर्यञ्चयोनि के योग्य कर्म बाँधते हैं—१ माया-छल से, २ गूढ़ माया से, ३ असत्य बोलने से, ४ झूठा तोल-माप करने से।

आश्चर्यकारी वृक्ष–

१. दक्षिणी अमरीका के ब्राजीलदेश में एक ऐसा वृक्षहै, जिसके तने में छेद करने से मीठा-पौष्टिक दूध निकलता है।

● इंडोनेशिया के सुमात्राद्वीप में एक जलवर्धक वृक्ष है, जो दोपहर के समय तेजसूर्य की किरणों से हवा के द्वारा भाप लेकर कुछ देर के बाद बरसता है, उससे घड़ा भी भर जाता है।

● अमरीका के मिशिनिगन प्रदेश 'हार्लोक्लार्क' नामक व्यक्ति के उद्यान में एक ऐसे वृक्ष का ठूंठा खड़ा है, जो मानवाकृति है। उसके हाथ-पैर एवं सिर है, यहाँ तक कि सिर पर टोपी तथा दाहिने हाथ में घड़ी भी है।

● बिहार में पाँच लाख वर्ग फुट विस्तृत एक बड़ (बरगद) का वृक्ष है। कहा जाता है कि उसके नीचे बीस हजार कब्रें हैं।

२. मैक्सिको में एक वृक्ष पाया जाता है, उसका गुण यह है कि वह हर समय सुई-डोरा तैयार करता है। वृक्षों की प्रत्येक पत्ती पर सूई-काँटा लगा रहता है-जिसे खींचने पर दो फुट लम्बा धागा निकल आता है। पथिक बखूबी उस प्राकृतिक सूई से अपना काम चला सकता है।

–नवभारतटाइम्स, १७ अक्टूबर, १९७१

३. अफ्रीका में माडागास्कर टापू के जंगल में 'कोडो' नामक वृक्ष था। वह निकट आते ही मनुष्य को खींच लेता एवं उसका सार चूसकर वापस फेंक देता था। **–डा. कार्ल-लीच**

४. जल में रहनेवाला एक 'लेडर वर्ट' नामक वृक्ष होता है। उसके तने पर छोटे-छोटे थैले लगे रहते हैं, उन थैलों के मुंह पर एक दरवाजा होता है, ज्योंही कोई कीड़ा-मकोड़ा अन्दर पहुंचता है, त्योंही दरवाजा अपने आप बन्द हो जाता है और वृक्ष कीड़ों का खून चूस लेता है।

● न्यू साउथवेल्स तथा स्वींसलैंड स्थित जंगलों में 'जीनस-लापोर्टिया' नामक अस्सी से १०० फुट एक दैत्याकार वृक्ष पाया जाता है, जिसे वहाँ के लोग 'टच-मी-नॉट' की संज्ञा देते हैं। इस वृक्ष के हृदयाकार पत्ते एक फुट से भी लम्बे होते हैं। पत्तों में रेशेदार भूरे कांटे होते हैं, जो जहरीले होते हैं। यदि किसी प्राणी का शरीर इन पत्तों से रगड़ खा जाय तो कम से कम चार दिन तक उसे प्राणघातक जलन व पीड़ा भुगतनी ही पड़ती है।

● जावा के समुद्री तट पर 'मूपन्स' नामक एक नरभक्षी-वृक्ष है। धोखे से इसके नीचे आते ही हाथी जैसे जानवर पर भी कंटीली शाखाएं झपट पड़ती हैं। टस्मानिया के जंगल में 'हेरिंजिटल' नामक एक ऐसा ही खतरनाक वृक्ष पाया गया है। वहां के लोगों का कहना है कि अच्छे से अच्छा जंगल का अनुभवी व्यक्ति भी किसी अन्य की मदद के बिना इस वृक्ष के क्रूर पंजों से मुक्ति नहीं पा सकता। और तो और अगर कोई घुड़सवार भी इसकी बगल से गुजरे तो यह उसे भी अपना शिकार बना लेता है।

—नवभारत टाइम्स, १७ अक्टूबर, १९७१

५. **अद्‌भुत तरबूज**–ताजिकिस्तान के तरबूज उत्पादक, ५५ किलोग्राम वजन तक के तरबूजों को पैदा करने में सफल हो गए हैं। [विशेपज्ञों के मतानुसार तरबूजों का वजन सामान्यतः १६ किलोग्राम तक ही होता है और उनमें ११ प्रतिशत मिठास होती है] ऐसे तरबूज 'दुशानवे' में आयोजित एक प्रदर्शनी में रखे गए हैं, इनमें मिठास की मात्रा भी २० प्रतिशत है।

—हिंदुस्तान, ६ सितम्बर, १६७१

२ आश्चर्यकारी तिर्यञ्च

१. (क) **गाय**–अमेरिका में एक गाय का १६० रत्तल दूध था एवं सांड की कीमत ४॥ लाख रुपए थी।

(ख) बाव (गुजरात) के पास एक गाँव में ६ महीनों की पाड़ी दूध देती थी।

(ग) एक गाय के पीठ पर भी चार स्तन थे, जिनसे दूध की धारा निकलती थी। **—संकलित**

२. **घोड़े**–उदयपुर महाराणा के यहाँ कई ऐसे घोड़े थे, जो एकादशी के दिन उपवास करते थे एवं 'ग्यारसिया' नाम से सम्बोधित किए जाते थे। ग्यारस के दिन यदि उनके सामने कभी दाना रख दिया जाता तो वे अपना मुंह मोड़ लेते। **—संतों ने आँखों से देखा**

३. **हाथी–**

(क) हाथी की सूंड में चार हजार माँसपेशियाँ होती हैं। उसका दिमाग मनुष्य के दिमाग से चारगुना तथा शरीर लगभग ५ टन का होता है। प्रतिदिन का भोजन ५० किलो पानी और ७० किलो घास-पात, पेड़ों की हरी पत्तियां आदि है।

—सर्जना तथा विश्वकोष भाग २ के आधार से

(ख) कनाडा में भारत से लाया गया एक ऐसा हाथी था जो पैरों में जूते पहने बिना बाहर नहीं निकलता था।

—सरिता, सितम्बर, द्वितीय, १९७१

(ग) संसार का विशालकाय हाथी—

कन्धे के पास से ऊंचाई १२ फुट नौ इंच थी, चमड़ी (खाल) का वजन दो टन था। इस विशालकाय हाथी को अफ्रीका के जंगलों में हंगरी के एक शिकारी ने सन् १९५५ में मारा था। हाथी का अस्थिपंजर 'स्मिथ सोनिएल इन्स्टीट्यूट की नेचरल हिस्ट्री कालेज' में रखा गया है।

—कादंबिनी, दिसम्बर १९६४

(घ) प्रतापगढ़ (उ० प्र०) जिले का एक पालतू हाथी एक बार क्रोधित होकर अपने चालक (पीलवान) को पैरों तले दाब कर सूंड से चीर डाला। दुखित पत्नी विकल होकर अपने इकलौते पुत्र को क्रुद्ध हाथी के आगे फेंक दिया। मदोन्मत हाथी ने उस बच्चे को सूंड से उठाकर पीठ पर बैठा लिया। कहते हैं कि तबसे वही बच्चा उस हाथी का चालक (पीलवान) बन गया। उसकी अनुपस्थिति में हाथी पागलों की भांति हाथ-पैर पटकता, चिग्घाड़ता। वह यावज्जीवन उस लड़के के इशारे पर चलता रहा।

* इसी जिले में एक बारात में गये हुये हाथी के चालक से बरातियों द्वारा लेन-देन के मामले में विवाद हो उठने से हाथी मदोन्मत होकर सारे बरातियों पर टूट पड़ा। कुछ

मरे, कुछ घायल हुये बहुत सारा सामान नष्ट-भ्रष्ट हो गया। अन्त में एक व्यक्ति ने उस हाथी को गोली से मार कर शान्ति स्थापित की।

—गोंडा निवासी श्री हनुमानबख्शसिंह से प्राप्त

४. **धर्मिष्ठ कुत्ते :-**

(क) दुर्गापुर में एक वृद्ध कुत्ता एकादशी के दिन कुछ नहीं खाता-पीता और सोलह दण्ड-उपवास करता है। पारणे के दिन माँस नहीं खाता।

(ख) गोहाटी के एक सरकारी अधिकारी का **भोलू** नामक कुत्ता अमावस्या-पूर्णिमा एवं एकादशी—ऐसे महीने में तीन उपवास करता है। उपवास के दिन भूलकर कोई उसे रोटी दे दे तो भी वह नहीं खाता।

(ग) बस्तर के पास भैरवीमन्दिर में आरती के समय एक कुत्ता हर रोज आता है एवं एक घण्टा तक आँखें बन्दकर प्रतिमा के सामने खड़ा रहता है, फिर सात बार परिक्रमा देता है। यह सब कर लेने के बाद ही वह कुछ खाता-पीता है।

(घ) आर्यविद्वान्शास्त्रार्थमहारथी पण्डितविहारीलालशास्त्री की दादी का कुत्ता मंगलवार को व्रत रखता था।

(ङ) देहरादून के तपोवन-आश्रम में ठाकुर रामसिंहजी का कुत्ता एकादशी का व्रत करता है, उस दिन रोटी डालने पर पीछे हट जाता है और बाध्य करने पर मुंह में रोटी लेकर वृक्ष के नीचे छिपा आता है एवं

दूसरे दिन निकालकर खा लेता है।

—नवभारतटाइम्स, २५ अप्रेल, १९६५

चोरी डकैती का पता लगानेवाले कुत्ते–

(च) पुलिस डिपार्टमेंट में कई ऐसे कुत्ते होते हैं, जो चोरों-डाकुओं या चुराए हुए धन को खोज निकालते हैं।

खगड़िया (बिहार) में रात के समय नौकर से मिलकर कई गुण्डों ने एक सेठ को कत्ल कर दिया। उसका सारा धन (लाख सवा लाख का) लेकर वे तीन मील दूर जंगल में गए और वहाँ खड्ढा खोदकर उसे दाट दिया। फिर तत्काल उस पर एक ईंटों का खम्भा चिनकर वे कहीं भाग गये। सुबह पुलिसथाने में खबर दी गई। पुलिस के साथ दो कुत्ते आए। उन्होंने कत्ल किए हुए सेठ को सूंघा। फिर शहर में और आस-पास के जंगल में खूब चक्कर लगाए। दूसरे दिन एक कुत्ता वहीं पहुँच गया और चिने हुये खंभे को सूंघ कर उस पर पंजे मारने लगा। पुलिस ने खंभे को हटाया तो उसके नीचे सारा धन मिल गया।

—संचियालालजी नाहटा से श्रुत

(छ) **गिल्डा कुत्ता–**

अमरीका में आगाखाँ की भूतपूर्व पुत्रवधू एवं 'प्रिंस अलीखां' की भूतपूर्व पत्नी विश्व की विख्यातसुन्दरी अभिनेत्री 'रिताहेनर्थ' का कुत्ता 'गिल्डा' है। उसकी खाने की मेज ५ हजार की है। बैठने का सोफा १२

हजार का है, बिस्तर-पलंग लाख-डेढ़ लाख के हैं तथा वस्त्र एवं साज-शृंगार ४० हजार से ३ लाख तक है। गिल्डा दिन में सात बार कपड़े बदलता है। विश्व-सौन्दर्य प्रतियोगिता में सर्वप्रथम आने से स्वामिनी ने बृहत् प्रीति-भोज दिया। ४५० मेहमान आए, सभी गिल्डा को चूमना चाहते थे। २०० से एक हजार तक चुम्बनशुल्क रखा गया था लेकिन होड़ लगने लगी। आखिर पैरिस की कुमारी "निवाला" ने ५० हजार देकर सर्वप्रथम चुम्बन किया। गेबी (कुतिया) से गिल्डा का विवाह हुआ, पाँच लाख रुपए लगे। उससे होनेवाली प्रथम संतान का मूल्य ३ लाख तक चढ़ गया। गिल्डा सबेरे टोस्ट के साथ चाय पीता है। बारह बजे नहाकर भोजन करता है, तीसरे प्रहर एक गिलास अंगूर का रस पीता है और रात को ९ बजे फिर खाना खाता है। भोजन के समय गिल्डा रेडियो सुनता है एवं गाने का बहुत रसिक है।

—**नवनीत, सितम्बर १९५३ से**

५. बन्दर–

(क) **बुवानीखेड़ा** में बंदरों को मारने के लिये विष मिलाकर खीर का कुण्डा एक छत पर रख दिया गया, बंदर सूंघ-सूंघ कर चले गये। एक बंदर जंगल से एक लकड़ी लाकर उससे खीर को हिलाने

लगा। हिलाता गया और सूंघता गया। आखिर सब मिलकर उस खीर को खा गये। (लकड़ी में विष नष्ट करने की शक्ति थी)

(ख) इन्दौर में बंदर के बच्चे को साँप ने काट खाया। अनेक बंदर इकट्ठे हुए, एक बूढ़े बंदर ने गैंदे (फूल) की जड़ लाकर बच्चे के मुंह में उसका रस डाला एवं बच्चा जी गया। —**इन्दौर में वैद्यजी से श्रुत**

(ग) बुवानीखेड़ा में छोटे बच्चे को एक बंदरिया उठाकर ले गई। और रोटी देने पर वह बच्चे को धीरे से छत पर छोड़कर चली गई। —**बुवानीखेड़ा में श्रुत**

५. **नेवलों का चमत्कार—**

(क) भद्रपुर (नेपाल) से लगभग दस मील दूर सेंदरी गांव का एक राजवंशी-किसान कहता है कि नेवले साँप को टुकड़े-टुकड़े करके उसमें से खाने का द्रव्य खा लेते हैं, फिर शेष टुकड़ों को बराबर रख कर जंगल से कोई जड़ी-बूटी लाते हैं और खण्ड-खण्ड हुए सांप के शरीर पर उसे लगाकर सांप को जीवित कर देते हैं। यह बात बिल्कुल असम्भव सी लगती है। परन्तु उस किसान का कथन है कि मैंने अनेक बार यह खेल अपनी आँखों से देखा है।

(ख) सुनने में आया है कि जब सांप और नेवले की लड़ाई होती है, उस समय सांप उसके शरीर पर काफी जोर

से डंक मारता है लेकिन जड़ी के प्रभाव से वह पुनः सज्जित होकर आ भिड़ता है और अन्त में उसे मार डालता है। (नेवले के पास एक जड़ी होती है जिसे छूते ही सांप का जहर उतर जाता है एवं घाव मिट जाता है।)

६. **साँप**–

(क) मेरठ में वदन पर बालवाला एक सांप था। वह सात फुट तीन इंच लम्बा एवं पांच फट मोटा था। जहरीला इतना था कि डंक मारते ही मनुष्य के कपड़े जल गए एवं उसके शरीर के दो टुकड़े हो गए।

—हिन्दुस्तान, २५ सितम्बर, १६५२

(ख) अफ्रीका में ५० फुट लम्बे सांप पाये जाते हैं। जावा के निकटवर्ती द्वीप में उड़नेवाले भी सांप पाये जाते हैं।

—हिन्दुस्तान, २२ मार्च, १६७१

(ग) सर्पिणी की समझदारी—भद्रपुर (नेपाल) से ४-५ मील दूर रामगढ़ गांव के निकट एक खेत में सर्पिणी के बच्चे पड़े थे। उस खेतवाले को दया आई एवं एक कुंडे में डाल उन्हें खेत की खाई में रख दिया। पीछे से सर्पिणी आई और अपने बच्चों को न देखकर व्याकुल हुई। खेत में इधर-उधर काफी दौड़-धूप की लेकिन बच्चे न मिले। उसे बहुत ज्यादा प्यास लगी! खेत में पड़े हुए घड़े में से पानी पीया और जाते समय उसमें जहर डाल गई। फिर अपने बच्चों की खोज करती हुई वह खाई में पहुंची। बच्चे मिले, उन्हें लेकर वह उस पानी के

घड़े के पास आई और अपनी पूँछ के प्रहार से उसे औंधा कर दिया। संभवतः मतलब यह था कि उसका पानी पीकर कोई मर न जाये।

—भंवरलाल चंडालिया से श्रुत

(घ) **सांपों का हमला**—बगदाद, १६ मई (राय) कुर्दीपत्र 'अलताखी' के एक समाचार के अनुसार उत्तरी इराक के एक गांव कुर्दी जाल के निवासियों पर पिछले दिनों लगभग २०० पीले सांपों ने अचानक हमला किया। गाँववालों ने छड़ा और नंगी तलवारों से उनका सामना करके उनमें से ६५ को मार डाला। शेष भाग गए।

—हिन्दुस्तान, १८ मई, १९७१

७. चूहे–

(क) विश्व स्वास्थ्य-संगठन के विशेषज्ञों के मतानुसार चूहे-चुहिया के एक जोड़े से पैदा हुई सन्तानों से तीन वर्षों में ३५ करोड़ चूहे हो सकते हैं। लेकिन सौभाग्य की बात है कि ऐसा होता नहीं। चूहा-चुहिया का एक जोड़ा प्रति वर्ष ७० बच्चे पैदा कर सकता है। अगर वे सभी जीवित रह जाएँ तो उनसे तीन वर्षों में ३५ करोड़ चूहे हो जाएं।

—हिन्दुस्तान, १९ जनवरी, १९६८

(ख) बम्बई में ऐसे चूहे देखने में आए, जिनसे डर कर बिल्लियाँ भी भाग जाती हैं।

—धनमुनि

८. मेंढक–

(क) महेन्द्रगंज में एक बड़ा मेंढ़क १८ इञ्च लम्बे सांप के साथ लड़ा एवं उसे मार कर निगल गया।

—बम्बई समाचार, २७ सितम्बर १९५०

(ख) दक्षिणी अमेरिका में एक प्रकार का मेंढ़क पांच फुट लम्बे सांप को खा जाता है।

—कादम्बिनी, मई, १९६४

९. जलजन्तु–

(क) देवमासा मछली तीन दिन में ८०० माइल तैरती हैं।

—बम्बईसमाचार, २१ अगस्त १९५०

(ख) ह्वेल मछली १४० फुट लम्बी और १४० टन भारी होती है। उसके मुंह में २४ हजार दाँत होते हैं। तीन-तीन सौ दांतों की ८० कतारें होती हैं।

—नवभारत टाइम्स, २८ मार्च, १९५१

(ग) अमरीका का समुद्री घोघा प्रति वर्ष ४० करोड़ अण्डे देता है। कुछ सीपियाँ और ख़र हैं, जो प्रतिदिन ४१ हजार एवं एक वर्ष में १४४ करोड़ अण्डे देते हैं।

—कादम्बिनी, मई, १९६४

१०. कई अन्य पशु-पक्षी—

(क) पशुओं में चीता ७० मील प्रतिघंटा दौड़ सकता है, किन्तु अधिक लम्बा नहीं दौड़ सकता।

—साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ३१ अक्टूबर १९७१

(ख) शतुर्मुर्ग की गति प्रति घंटा २६ मील तक है। उसकी छोटी से छोटी पांख की कीमत ३०-४० रुपये हैं।

(ग) कबूतर ६० मील और चिड़िया कोई-कोई ३०० मील प्रतिघंटा उड़ सकती हैं।

—**नवभारतटाइम्स, २८ मार्च, १९५१**

(घ) लंदन के अजायबघर में सुमात्रा से एक अद्भुत छिपकली लायी गयी थी, वह १५ फुट लम्बी थी और उसकी जीभ १५ इंच लम्बी थी।

३ दृश्यमान विश्व में पशु-पक्षी

विश्व के पशुओं को दो वर्गों में रख सकते हैं—प्रथम वर्ग में पशु जो मनुष्य के भोजन के साधन हैं, जैसे–गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सुअर और मुर्गी आदि। द्वितीय वर्ग में पशु जो बोझा ढोने अथवा सवारी के काम आते हैं; जैसे-घोड़े, गधे, खच्चर, बैल, ऊँट, याक आदि। प्रो० मामोरिया के अनुसार पृथ्वी पर ३५०० प्रकार के पशुओं में से केवल १७ पशु, १३००० प्रकार की चिड़ियों में से केवल ५ चिड़ियाँ और ४,७०,००० कीड़ों में से केवल दो प्रकार के कीड़े पालतू बनाये गये हैं। नीचे की तालिका में विश्व के कतिपय पालतू पशु-पक्षियों की संख्या देखिये :—

पशु	संख्या	पशु-पक्षी	संख्या
भेड़	६८ करोड़	ऊँट	६० लाख
गाय-बैल	७१ ,,	रेनडियर (बारहसींगा)	२० लाख
सुअर	२९ ,,	लामा आदि	२० लाख
बकरी	११ ,,	मुर्गियाँ	१ अरब ९० करोड़
घोड़े	६ ,,	बतखें	११ करोड़
गधे	३.५ ,,	हंस	७ करोड़ ३ लाख
खच्चर	१५ ,,	टर्की	२ करोड़ ३० लाख

४ मनुष्य-संसार

मनुष्य–

१. मत्वा-हिताहितं ज्ञात्वा कार्याणि सीव्यन्तीति मनुष्याः।

अपने हित-अहित को समझकर काम करते हैं, इसलिए मनुष्यों का नाम मनुष्य है।

२. यो वै भूमा तदमृतं, अथ यदल्पं तद् मर्त्यम्।

—छांदोग्योपनिषद्, ७।२४

जो महान् है, वह अमृत है—शाश्वत है और जो लघु है, वह मर्त्य है—विनाशशील है (मर्त्य नाम मनुष्य का है)।

३. पात्रे त्यागी गुणे रागी, भोगी परिजनैः सह।
शास्त्रे बोद्धा रणे योद्धा, पुरुषः पञ्च लक्षणः॥

—सुभाषितरत्नभाण्डागार, पृष्ठ १४८

(१) पात्र को देनेवाला, (२) गुणों का अनुरागी, (३) परिजनों के साथ वस्तु का उपभोग करनेवाला, (४) शास्त्रज्ञ, (५) युद्ध करने में वीर। पुरुष के ये पाँच लक्षण हैं।

४. मनुष्य का मापदण्ड उसकी सम्पदा नहीं, अपितु उसकी बुद्धिमत्ता है। **—टी. एल. वास्वानी**

५. हर आदमी की कीमत उतनी ही है, जितनी उन चीजों की है, जिनमें वह संलग्न है। **—आरिलियस**

६. अगर तू अपनी कीमत आँकना चाहता है तो धन-जायदाद-पदवियों को अलग रखकर अंतरंग जाँच करले ! —**सेनेका**

७. आदमी की कीमत का अंदाज इससे लगता है कि खुद अपनी नजर में उसकी क्या कीमत है।

८. मनुष्य समाज से तिरस्कृत होने पर दार्शनिक, शासन से प्रताड़ित होने पर विद्रोही, परिवार से उपेक्षित होने पर महात्मा और नारी से अनादृत होने पर देवता बनता है।

—**महर्षिरमण**

९. मनुष्य जो कुछ खाते हैं उससे नहीं, किन्तु जो कुछ पचा सकते हैं, उससे बलवान बनते हैं। धन का अर्जन करते हैं, उससे नहीं, जो कुछ बचा सकते हैं, उससे धनवान बनते हैं। पढ़ते हैं उससे नहीं, जो कुछ याद रखते हैं, उससे विद्वान् होते हैं। उपदेश देते हैं उससे नहीं, जो आचरण में लाते हैं, उससे धर्मवान बनते हैं—ये बड़े परन्तु साधारण सत्य हैं। इन्हें अतिभोजी, अतिव्ययी, पुस्तक के कीट और पाखंडी लोग भूल जाते हैं। —**लार्ड बेकन**

१०. यो न निर्गत्य निःशेषा-मालोकयति मेदनीम्।
अनेकाश्चर्यसम्पूर्णां स नरः कूपदर्दुरः॥

—**चंदचरित्र, पृ. ८६**

जो घर से निकलकर अनेकआश्चर्यपूर्ण पृथ्वी का अवलोकन नहीं करता, वह कुएं का मेंढ़क हैं।

११. अगनि उघाड़ी ना खटै, जल फूट्यां बिगड़ंत।
नारी भटक्याँ बीगड़ै, नर भटक्याँ सुधरंत॥

१२. आदमी-आदमी में अन्तर, कोई हीरा कोई कंकर।

—हिन्दी कहावत

१३. मिनख रो काम मिनख सूं सौवार पड़ै।

—राजस्थानी कहावत

१४. मानवजाति दो बातों से नष्ट हुई है :—
विलासिता से और द्वेष से —शेक्सपियर

१५. गणित की अपेक्षा से मनुष्यों के चार आश्रमों का रहस्य-

(१) ब्रह्मचर्याश्रम जोड़ (+) है—इसमें वीर्य-विद्या-कला कौशल आदि इकट्ठे किये किए जाते हैं।

(२) ग्रहस्थाश्रम बाकी (−) है—इसमें संगृहीत वस्तु का खर्च होता है।

(३) वानप्रस्थाश्रम गुणाकार (×) है—इसमें हर प्रकार से गुणों की वृद्धि की जाती है।

(४) सन्यास-आश्रम भागाकार (÷) के तुल्य है—इसमें प्राप्त किये हुये तप-जप-ज्ञान-ध्यान आदि बांटे जाते हैं। अर्थात् उनका लोगों में प्रचार किया जाता है। —संकलित

५ मनुष्य का स्वभाव

१. पुलुकामो हि मर्त्यः । —**ऋग्वेद १।१७९।५**

मनुष्य स्वभाव से ही बहुत कामनावाला होता है।

२. उत्सवप्रिया हि मनुष्याः । —**अभिज्ञान शाकुंतल**

मनुष्य नित्य नये आनन्द के प्रेमी हुआ करते हैं।

३. (क) मनुष्याः स्खलनशीलाः । —**संस्कृत कहावत**

(ख) टू ईरर इज ह्यूमन । —**अंग्रेजी कहावत**

मनुष्य भूल करने की आदतवाले होते हैं।

४. पुढो छंदा इह माणवा । —**आचारांग ५।२**

संसार में मानव भिन्न-भिन्न विचारवाले होते हैं।

५. अणेगचित्ते खलु अयं पुरिसे ।
से केयणं अरिहए पूरिणए ।। —**आचारांग ३।२**

यह मनुष्य अनेक चित्त है, अर्थात् अनेकानेक कामनाओं के कारण मनुष्य का मन बिखरा हुआ रहता है। वह अपनी कामनाओं की पूर्ति क्या करना चाहता है, एक तरह छलनी को जल से भरना चाहता है।

६. पकने पर कडुआ होनेवाला एक फल है—'मनुष्य'।

७. मनुष्य अपनी श्रेष्ठता को आंतरिकरूप से प्रकट करते हैं और पशुता को बाह्यरूप से। —**रूसी कहावत**

८. सिर्फ आदमी ही रोता हुआ जन्मता है, शिकायत करता हुआ जीता है और निराश होकर मर जाता है।

—सर वाल्टर टेम्पल

६. अनार्यता निष्ठुरता, क्रूरता निष्क्रियात्मता।
पुरुषं व्यञ्जयन्तीह, लोके कलुषयोनिजम् ॥

—मनुस्मृति १०।५८

अनार्यता, निष्ठुरता, क्रूरता और निष्क्रियात्मता-आलसीपन—ये कार्य मनुष्य को नीचयोनि से उत्पन्न है—ऐसे प्रकट करनेवाले हैं।

११. नदी बहना नहीं छोड़ती, समुद्र मर्यादा नहीं छोड़ता, चाँद-सूर्य प्रकाश देना नहीं छोड़ते, बृक्ष फलना-फूलना नहीं छोड़ते, फूल सुगन्धि नहीं छोड़ता, तो फिर मनुष्य अपना स्वभाव-गुण क्यों छोड़ता है?

१२. आदमी की शक्ल से अब डर रहा है आदमी,
आदमी को लूट कर घर भर रहा है आदमी।
आदमी ही मारता है, मर रहा है आदमी,
समझ कुछ आता नहीं, क्या कर रहा है आदमी?
आदमी अब जानवर की, सरल परिभाषा बना है,
भस्म करने विश्व को, वह आज दुर्वासा बना है।
क्या जरूरत राक्षसों की, चूसने इन्सान को जब,
आदमी ही आदमी के, खून का प्यासा बना है।

—खुले आकाश में

६ **मनुष्य का कर्तव्य**

१. पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः। —**ऋग्वेद ६।७५।१४**

एक दूसरे की रक्षा-सहायता करना मनुष्य का पहला कर्तव्य है।

२. आनृशस्यं परोधर्मः। —**वाल्मीकिरामायण ५।३८।३६**

मानवता का समादर करना मनुष्य का परमधर्म है।

३. अगरबत्ती की तरह जलकर भी दूसरों को सुगन्धित करना मनुष्य का कर्तव्य है।

४. यओज्दो मश्याइ अइपी जॉथम् वहिश्ता। —**यस्न. हा. ४८।५**

मनुष्य के लिए यह सबसे अच्छा है कि वह जन्म से ही पवित्र रहे।

५. मनुष्य के तीन मुख्य कर्तव्य हैं—

(१) दुश्मन को दोस्त बनाना,

(२) दुष्ट को सदाचारी बनाना,

(३) अशिक्षित को शिक्षित बनाना।

—**शयस्त. ला. शयस्त २०।६ (पारसी धर्मग्रन्थ)**

६. किं दुर्लभ ? नृ जन्म, प्राप्येदंभवति किं च कर्तव्यम् ?
आत्महितम हितसंग-त्यागो रागश्च गुरुवचने ॥

दुर्लभ क्या है ? मनुष्य-जन्म। इसे पाकर क्या करना चाहिए ? आत्मा का हित, कुसंग का त्याग और सद्गुरु की वाणी में प्रेम।

७ मनुष्य के लिए शिक्षाएँ

१. मनुष्य आकृति से जन है, उसे सज्जन या महाजन बनने की कोशिश करनी चाहिए, किन्तु दुर्जन बनने की कभी नहीं। उसे ऊपर चढ़ते रहना चाहिए, वरना नीचे गिर जाएगा।

२. हर एक आदमी भक्षक है, उसे उत्पादक होना चाहिए।

—एमर्सन

३. तीन कारणों से मनुष्य दूसरे के पास जाता है—सहायता देने, सहायता लेने और कुछ सीखने। यदि सहायता देने गया हो तो ऐसा न हो कि उसका बोझा बढ़ जाए। यदि सहायता लेने गया हो तो बाप बनकर नहीं ले सकता। यदि कुछ सीखने गया हो तो सुने-विचारे, लेकिन ऐसा न हो कि उल्टा सिखाने लगे।

४. विद्वांश्चेत् पठनोद्यतान् सरलया रीत्या मुदा पाठय,
शिल्पी चेदुचिताश्च शिक्षय कला निष्कामवृत्त्याखिलाः।
वक्ता चेदसि दर्शय प्रवचनैः सन्नीतिमार्गं सदा,
वैद्यश्चेत् कुरु रोगनाशनकृते तेषां व्यवस्थां शुभाम्।

रे मनुष्य! यदि तू विद्वान् है तो पढ़ने के इच्छुक व्यक्तियों को सरल

रीति से पढ़ा, यदि शिल्पी हैं तो निःस्वार्थभाव से दूसरों को सत्-कलाओं की शिक्षा दे, यदि वक्ता है तो अपने प्रवचनों द्वारा नीति-मार्ग का प्रदर्शन कर और यदि वैद्य है तो दुनियाँ में रोग-नाश की शुभ व्यवस्था कर ।

८ मनुष्य का महत्त्व

१. गुह्यं ब्रह्म तदिदं वो ब्रवीमि,
न मानुषाच्छ्रेष्ठतरं हि किंचित् ॥

—महाभारत शान्तिपर्व २९९।२०

तुम लोगों को मैं एक बहुत गुप्त बात बता रहा हूँ, सुनो ! मनुष्य से बढ़कर और कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है।

२. पुरुषो वै प्रजापतेः नेदिष्टम्। —शतपथब्राह्मण २।५।१।१

सब प्राणियों में मनुष्य सृष्टिकर्ता परमेश्वर के अत्यन्त समीप है।

३. बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठाः। —मनुस्मृति १।९६

बुद्धिमानों में मनुष्य सबसे श्रेष्ठ है।

४. नरो वै देवानां ग्रामः।

—तैत्तिरीय ताराड्यमहाब्राह्मण ६।९।२

मनुष्य देवों का ग्राम है अर्थात् निवासस्थान है।

५. मुसलमानों के 'हदीसा' मे अल्ला ने फरिस्तों से कहा है कि तुम इन्सान की सेवा करो।

६. गधे, घोड़े, गाय, भैंस आदि पशु नहीं समझते कि यह राजमहल है या ठाकुर जी का मन्दिर है अथवा जौंहरीबाजार है, यहाँ मल-मूत्र का त्याग नहीं किया जाता जबकि

साधारण से साधारण मनुष्य भी इस बात को समझता है। क्योंकि मनुष्य में विवेक है।

७. राष्ट्र की सम्पत्ति तो मनुष्य है, रेशम, कपास, स्वर्ण नहीं।

—रिचार्ड हॉर्वे

८. यदि तुम पढ़ना जानते हो तो प्रत्येक मनुष्य स्वयं एक पूर्ण-ग्रन्थ है। **—चेनिंग**

९. संसार को स्वाद बनानेवाला एक नमक है—मनुष्य।

१०. मिनखां माया, बिरखां छाया।

११. आदमी री दवा आदमी, आदमी रा शैतान आदमी।

—राजस्थानी कहावतें

१२. **मानवीय मस्तिष्क**—

सुनार की पेटी में विराजमान चांदी का प्याला बोला—"बस! मैं तो मैं ही हूँ!"

स्वर्णपात्र—चुप! मेरे सामने तेरा अभिमान झूठा है।

हीरा—क्या मेरा तेज नहीं देखा, जो घमंड करता है?

पेटी—तुम सारे, क्यों मैं-मैं कर रहे हो, आखिर रक्षिका तो मैं ही हूँ।

ताला—चुप रह, वाचाल! मेरे बिना तेरे में क्या है?

चाबी—तू तो मेरे इशारे पर नाचनेवाला है क्यों गरज रहा है?

हाथ—पगली! मेरे बिना तो तू हिल भी नहीं सकती है!

सुनार बोला–अरे भाई ! यह सब मानवीय मस्तिष्क का प्रभाव है अतः बड़ा तो मानव ही है।

१३ मनुष्य के पीछे संसार–

कागज पर एक तरफ संसार का चित्र था और दूसरी तरफ मनुष्य का। पिता ने फाड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। फिर अपने छोटे पुत्र से उसे जोड़ने के लिए कहा। बच्चे ने संसार का चित्र जोड़ने का काफी यत्न किया, किन्तु जुड़ नहीं सका। तब दूसरी तरफ मनुष्य का चित्र देखा। ज्योंही उसे जोड़ा, संसार भी जुड़गया। वास्तव में संसार मनुष्य के पीछे ही है।

१४. मनुष्य से विधाता भी चकित–

कहते हैं कि भाग्यफल सुनाकर विधाता ब्रह्मलोक से ३२ मनुष्य, मनष्य-लोक में भेज चुके थे। तैंतीसवें का भाग्यफल इस प्रकार सुनाया जा रहा था—यह धनी-खानदान में जन्म लेकर सब तरह से सुखी होगा। पन्द्रह वर्ष की आयु में दुर्घटना-वश गूंगा बहरा होगा, माँ बाप मर जायंगे, धन नष्ट हो जायगा, फिर भिखारी के रूप में भटकता-भटकता अंधा एव कोढ़ी भी बन जायगा, ऐसे पूरे सौ वर्ष तक दुःखमय जीवन व्यतीत करेगा। बीच ही में मनुष्य बोल उठा–क्या सौ वर्ष ? बस, इतना कहने के साथ ही वह चीखता हुआ गिर पड़ा और मरगया।

भाग्यफल सुनते-सुनते मरने का यह पहला ही अवसर था। विधाता देखते ही रहगये एवं उस दिन के बाद भाग्यफल सुनाना बंद कर दिया। फिर भी मनुष्य ज्योतिषियों द्वारा उसे सुनने लगा और विधाता के लेख को बदलने का प्रयत्न करने लगा।

—जाह्नवी, जनवरी ६८ से

९ मनुष्य की दस अवस्थाएँ

१. वाससयाउयस्स णं पुरिसस्स दस दसाओ पण्णत्ता, तं जहा–
बालाकिड्डा य मंदाय, बला पन्ना य हायणी ।
पवंचा पब्भारा य, मुम्मुही सायणी तहा ।

—स्थानांग १०।७७२

सौ वर्ष की आयु की अपेक्षा से मनुष्य की दस अवस्थाएँ कही हैं —(१) बाला (२) क्रीड़ा (३) मंदा (४) बला (५) प्रज्ञा (६) हायनी (७) प्रपंचा (८) प्राग्भारा (९) मुम्मुही (१०) शायिनी ।

(१) **बाला**— उत्पन्न होने से लेकर दस वर्ष तक का प्राणी बाल कहलाता है । उसको सुख-दुःखादि का विशेष ज्ञान नहीं होता । अतः यह बाल-अवस्था कहलाती है ।

(२) **क्रीड़ा**—इस अवस्था को प्राप्त होकर प्राणी अनेक प्रकार की क्रीड़ा करता है, किन्तु काम-भोगादि विषयों की तरफ उसकी तीव्र बुद्धि नहीं होती ।

(३) **मन्दा**—इस अवस्था को प्राप्त होकर पुरुष अपने घर में विद्यमान भोगोपभोग—सामग्री को भोगने में समर्थ होता है, किन्तु नये भोगादि का अर्जन करने में मन्द यानी असमर्थ रहता है। इसलिये इस अवस्था को मंदा कहते हैं ।

(४) **बला**—तंदुरुस्त पुरुष इस अवस्था को प्राप्त होकर अपना बल (पुरुषार्थ) दिखाने में समर्थ होता है । इसलिए पुरुष की यह अवस्था बला कहलाती है ।

(५) **प्रज्ञा**—प्रज्ञा बुद्धि को कहते हैं। इस अवस्था को प्राप्त होने पर पुरुष में अपने इच्छितार्थ को सम्पादन करने की तथा अपने कुटुम्ब की वृद्धि करने की बुद्धि उत्पन्न होती है।

६) **हायनी**—इस अवस्था को प्राप्त होने पर पुरुष की इन्द्रियाँ अपने-विषय को ग्रहण करने में किंचित हीनता को प्राप्त हो जाती है।

(७) **प्रपञ्चा**—इस अवस्था में पुरुष की आरोग्यता गिर जाती है और उसे खांसी आदि अनेक रोग घेर लेते हैं।

(८) **प्राग्भारा**—इस अवस्था में पुरुष का शरीर कुछ झुक जाता है। इन्द्रियां शिथिल पड़ जाती हैं। स्त्रियों को अप्रिय हो जाता है और बुढ़ापा आकर घेर लेता है।

(९) **मुम्मुही**—जरारूपी राक्षसी से समाक्रान्त पुरुष इस नवमी दशा को प्राप्त होकर अपने जीवन के प्रति भी उदासीन हो जाता है और निरन्तर मृत्यु की आकांक्षा करता है।

(१०) **शायनी**—इस दसवीं अवस्था को प्राप्त होने पर पुरुष अधिक निद्रालु बन जाता है। उसकी आवाज हीन, दीन और विकृत हो जाती है।

(यहाँ सौ वर्ष के मनुष्य की दस अवस्थाएँ कही गई हैं। यदि अधिक आयु हो तो उसके हिसाब से दस भाग कर लेने चाहिए।)

२. दसां डावड़ो, बीसां बावलो, तीसा तीखो, चालीसां फीको' पच्चासां पाको, साठां थाको, सत्तर सड़ियो, अस्सी गलियो, नब्बे नागो, सोवां भागो। —**राजस्थानी कहावत**

३. चालीस वर्ष की अवस्था जवानी का बुढ़ापा है और पचास वर्ष की अवस्था बुढ़ापे की जवानी। —**आरिन औं मेले**

१० मनुष्य के प्रकार

१. मणुस्सा दुविहा पन्नत्ता तं जहा-समुच्छिमममणुस्सा य गब्भवक्कंतिय मणुस्सा य। —प्रज्ञापना सूत्र १

मनुष्य दो प्रकार के कहे हैं—संमूर्च्छिम और गर्भज। माता के गर्भ से पैदा होनेवाले गर्भजमनुष्य कहलाते हैं और उनके मल-मूत्र से उत्पन्न होनेवाले संमूर्च्छिममनुष्य कहलाते हैं।

२. गब्भवक्कंतियमणुस्सा तिविहा, पन्नता, तं जहा-कम्मभूमगा, अकम्मभूमगा, अंतरदीवगा। —प्रज्ञापना सूत्र १

गर्भजमनुष्य तीन प्रकार के कहे हैं—कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तर्द्वीपज।

३. ते समासओ दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—आरियाय मिलक्खुय। —प्रज्ञापना सूत्र १

कर्मभूमिज-मनुष्य दो प्रकार के कहे हैं—आर्य और म्लेच्छ।

४. आरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—इड्ढिपत्तारिया य अणिड्ढिपत्तारिया य। —प्रज्ञापना सूत्र १

आर्यमनुष्य दो प्रकार के हैं—ऋद्धिप्राप्त और अनर्द्धिप्राप्त। ऋद्धिप्राप्त आर्य ६ हैं—

१ अरिहंत, २ चक्रवर्त्ती, ३ वासुदेव, ४ बलदेव, ५ चारण, ६ विद्याधर!

अनर्द्धिप्राप्त आर्य नव प्रकार के हैं–

१ क्षेत्रआर्य, २ जातिआर्य, ३ कुलआर्य, ४ कर्मआर्य, ५ शिल्प-आर्य, ६ भाषाआर्य, ७ ज्ञानआर्य, ८ दर्शनआर्य, ९ चारित्रआर्य।

५. तीन प्रकार के मनुष्य—

(१) अच्छा ग्रहण करनेवाले–पशु

(२) अच्छा करने की इच्छा रखनेवाले–मनुष्य

(३) अच्छा बनने की कोशिश करनेवाले–देवता

६. मनुष्य के तीन प्रकार—

(१) भलाई का बदला बुराई से देनेवाले—राक्षस

(२) भलाई का बदला भलाई से देनेवाले—मनुष्य

(३) बुराई का बदला भलाई से देनेवाले—देवता

७. तीन प्रकार के मनुष्य—

(१) पतनशील (२) स्थितिशील (३) उन्नतिशील।

८. मनुष्य के तीन वर्ग—

(१) विपरीतगामी (२) स्थिर (३) अग्रगामी। **—लेवेटर**

९. मनुष्य के तीन रूप—

(१) जैसा वह स्वयं समझता है।

(२) जैसा उसे लोग समझते है।

(३) जैसा वह स्वयं है।

१०. मनुष्य की तीन कोटियाँ—

१ हीनकोटि—अपनी प्रशंसा करनेवाले।

२ मध्यमकोटि—जिनकी प्रशंसा मित्र करते हैं।

३ उत्तमकोटि—जिनकी प्रशंसा शत्रु भी करते हैं।

११. एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वर्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुष राक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे॥

—**भर्तृहरि, नीतिशतक ७५**

स्वार्थ छोड़कर दूसरे का काम करनेवाले सत्पुरुष हैं। स्वार्थ रखते हुए दूसरे का काम निकालनेवाले सामान्य पुरुष हैं तथा स्वार्थ के लिए दूसरों का काम बिगाड़नेवाले मनुष्यरूप में राक्षस हैं। लेकिन उन मनुष्यों को किस नाम से पहचानें, जो बिना मतलब ही औरों का काम बिगाड़ते रहते हैं।

१२. चार प्रकार के मनुष्य—

(१) हैवान (आर्त्तध्यानी) (२) शैतान (रौद्रध्यानी)
(३) इन्सान (धर्मध्यानी) (४) भगवान (शुक्लध्यानी)

१३. चार प्रकार के मनुष्य—

(१) कीट-पतंग जैसे—(**कलाविहीन**)

(२) पशु-पक्षी जैसे—(**उदरपूर्ति के लिए शिल्प आदि कला सीखनेवाले**)

(३) मनुष्य जैसे—(**धर्मकला सीखनेवाले**)

(४) देवता जैसे—(**दूसरों में धर्म का प्रचार करनेवाले**)

१४. चार प्रकार के मनुष्य—

(१) निकृष्ट—मेरा सो मेरा और तेरा भी मेरा।

(२) मध्यम—मेरा सो मेरा और तेरा सो तेरा।

(३) उत्तम—तेरा सो तेरा और मेरा भी तेरा।

(४) ब्रह्मज्ञ—ना कुछ तेरा, ना कुछ मेरा।
जग का यह सब झूठा झमेला।

१५. चार प्रकार के मनुष्य—

(१) चीनी की मक्खी जैसे–स्वाद लेकर उड़ जानेवाले।
—(भरत चक्रवर्त्तिवत्)

(२) गुड़ के लाट की मक्खी जैसे–स्वाद लेते-लेते उसी में मर जानेवाले।—(ब्रह्मदत्त चक्रवर्त्तिवत्)

(३) विष्ठा की मक्खी जैसे–स्वाद लिए बिना ही उड़ जानेवाले।—(हरिकेशीमुनिवत्)

(४) श्लेष्म की मक्खी जैसे–स्वाद लिए बिना श्लेष्म में फंस कर मर जानेवाले।—(कालसूकर कसाईवत्)

१६. चार प्रकार के मनुष्य—

(१) जो न आप खाए, न दूसरों को खिलाए—मक्खीचूस।

(२) जो आप खाए, पर दूसरों को न खिलाए—कंजूस।

(३) जो आप भी खाए, दूसरों को भी खिलाए—उदार।

(४) जो आप न खाकर दूसरों को खिलाए—दाता।

–अफलातून

१७. चार प्रकार के मेघ होते हैं—

(१) गरजते हैं, बरसते नहीं, (२) गरजते नहीं बरसते हैं, (३) गरजते भी हैं, बरसते भी हैं (४) गरजते भी नहीं बरसते भी नहीं।

मेघ के समान चार प्रकार के मनुष्य हैं—

(१) बोलते हैं, देते नहीं, (२) बोलते नहीं, देते हैं। (३) बोलते भी हैं, देते भी हैं, (४) बोलते भी नहीं, देते भी नहीं।

—स्थानाङ्ग ४।४।३४६

१८. पाँच प्रकार के मनुष्य—

(१) अपना स्वार्थ चाहनेवाले—मिट्टी के समान

(२) कुटुम्ब का हित चाहनेवाले—वृक्ष के समान

(३) समाज का हित चाहनेवाले—पशु-पक्षी के समान। (काक भी जीमनवार देखकर काँव-काँव करके अपने समाज को इकट्ठा कर लेता है।)

(४) राष्ट्र का हित चाहनेवाले—मनुष्य के समान।

(५) समूचे संसार का हित चाहनेवाले—भगवान् के समान।

१९. छः प्रकार के मनुष्य—

(१) **सर्वोत्तम**—नितम्बारूढ़ स्त्री की भी इच्छा न करनेवाला। छद्मस्थ-वीतराग, उपशम-क्षपक-श्रेणीवाला।

(३) **उत्तमोत्तम**—स्त्री की इच्छा होने पर पश्चात्ताप से निवृत्ति करनेवाला—अप्रमत्तसंयत।

(३) **उत्तम**—मुहूर्त-प्रहर यावत् इच्छा होती है फिर भी मैथुनसेवन न करनेवाला—प्रमत्तसंयत।

(४) **मध्यम**—परस्त्री का त्याग करनेवाला—श्रावक।

(५) **अधम**—परस्त्री-स्वस्त्री दोनों का भोग करनेवाला।

(६) **अधमाधम**–माँ, बहन, विधवा, कुमारी तथा साध्वी से भी न टलनेवाला। **–महानिशीथ**

२०. आठ प्रकार के मनुष्य–

(१) **आसन्नदृष्टि**–ये बालक, बन्दर व मक्खियों की तरह अदूरदर्शी होते हैं।

(२) **दूरदृष्टि**– वयपरिणत व्यक्तियों की तरह दूर की सोचनेवाले।

(३) **रागदृष्टि**—अपने पुत्र, पति, दामाद, स्त्री आदि जिन पर राग है। वे चाहे कैसे ही कुरूप, मूर्ख एवं कुव्यसनी हों, अच्छे ही लगते हैं। रागदृष्टिवाले अच्छे-बुरे को नहीं समझ सकते।

(४) **द्वेषदृष्टि**–ये गुणों को भी दोषरूप में लेते हैं।

(५) **गुणदृष्टि**–ये श्रीकृष्णवत् 'गुण' को ही लेते हैं।

(६) **दोषदृष्टि**–ये जोंक, मक्खी व कागवत् दोषग्राही होते हैं।

(७) **गुण-दोषदृष्टि**–ये डाक्टर, मास्टर, वकील, न्यायाधीश, नेता, वक्ता, लेखक, व्यापारी, राजा एवं तपस्वी की प्रशंसा करके अन्त में एक दोष ऐसा दिखलाते हैं कि पिछली प्रशंसा पर पानी फिर जाता है।

(८) **आत्मदृष्टि**–ये आत्मा के दोष देखते हैं। लोग इनकी प्रशंसा करते हैं तब नाचते, मयूरवत् अपने पैर (दोष) देखकर रोते हैं एवं आनन्दघनजीवत् अपने शिष्यों को अन्तर्दर्शन करवाना चाहते हैं।

२१. येषां न विद्या न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं न गुणो, न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।

—भर्तृहरि नीतिशतक १३

जिन्होंने तप नहीं किया, विद्या नहीं पढ़ी, दान नहीं दिया एवं ज्ञान, शील, गुण और धर्म का अभ्यास नहीं किया, वे मनुष्य मर्त्यलोक में पृथ्वी के लिये भारभूत हैं तथा मनुष्य के रूप में विचरते हुए भी साक्षात् पशु हैं।

११ मनुष्य जन्म की प्राप्ति

१. कम्माणं तु पहाणाए, आणुपुव्वीं कयाइ उ।
जीवा सोहिमणुप्पत्ता, आययंति मणुस्सयं ॥

—उत्तराध्ययन ३।७

क्रमशः कर्मों का क्षय होने से शुद्धि को प्राप्त जीव कदाचित् बहुत लम्बे समय के पश्चात मनुष्य जन्म को प्राप्त होता है।

२. चउहिं ठाणेहिं जीवा मणुस्सत्ताए कम्मं पगरेंति तं जहा—पगइ-भद्दयाए, पगइविणीययाए, साणुक्कोसयाए अमच्छरियाए।

—स्थानांग ४।४।३७३

चार कारणों से जीव मनुष्यगति का आयुष्य बांधते हैं, सरल प्रकृति से, विनीत-प्रकृति से, दयाभाव से और अनीर्ष्याभाव से।

३. माणुसत्तं भवे मूलं, लाभो देवगइ भवे।
मूलच्छेएण जीवाणं, णरग-तिरिक्खत्तणं धुवं ॥

—उत्तराध्ययन ७।१६

मनुष्यजन्म प्राप्त करना मूलधन की रक्षा है। देवत्व प्राप्त करना लाभस्वरूप है और नरक-तिर्यञ्च में जाना मूलधन को खो देना है।

१२ मनुष्य जन्म की श्रेष्ठता

१. मनुष्यजन्म से ही मुक्ति मिल सकती है, अतः यह जन्म सर्वश्रेष्ठ है।

२. स्वर्ग के देवता भी इच्छा करते हैं कि हमें मनुष्यजन्म मिले, आर्य देश मिले और उत्तम कुल मिले।

—स्थानांग ३।३।१७८

३. जैसे सामग्री के अभाव में राजमहल की अपेक्षा खेत की झोंपड़ी अच्छी है, उसी प्रकार धर्मसामग्री का अभाव होने से स्वर्ग की अपेक्षा मनुष्यलोक श्रेष्ठ है। कहा जाता है कि भक्ति से प्रसन्न होकर गोपियों के लिए इन्द्र ने विमान भेजा, तब गोपियों ने कहा—

'व्रज बहालुं मारे बैकुंठ न थी जावुं'
त्यां नंदनोलाल क्यां थी लावुं। **—वैष्णवी मान्यता**

४. अमेरिका के डाक्टर थोमर कहते हैं कि तुम्हारा भार उठानेवाली पृथ्वी से स्वर्ग को अधिक मानो तो तुम्हें इस पृथ्वी पर पैर भी नहीं रखना चाहिए।

५. मनुष्यजीवन अनुभव का शास्त्र है। **—विनोबा**

६. मनुष्यजीवन की तीन बड़ी घटनाएँ विवाद से पूर्णतया परे है—जन्म, विवाह और मृत्यु।

७. मानवजीवन के पाँच रत्न हैं—(१) प्रेम अर्थात् मिलनसारी, (२) मित्रता—अक्रोध-भाव, (३) शान्ति-भाव—क्षमा (४) संयम—नियमितता (५) समता-संतोष।

८. पात्रे दानं सतां सङ्गः, फलं मनुष्यजन्मनः।

—**सूक्तरत्नावली**

मनुष्यजन्म का फल है—सुपात्र को दान देना और सत्संग करना।

९. जिह्वे ! प्रह्वीभव त्वं सुकृति-सुचरितोच्चारणे सुप्रसन्ना,
भूयारतामन्यकीर्ति श्रुति रसिकतया मेऽद्यकर्णौ सुकर्णौ।
वीक्ष्याऽन्य प्रौढ़लक्ष्मी द्रुतमुपचिनुतं लोचने ! रोचनत्वं,
संसारेऽस्मिन्नसारे फलमिति भवतां जन्मनो मुख्यमेव॥

—**शान्तसुधारस, प्रमोदभावना १४**

हे जीभ ! धार्मिकों के दानादि गुणों का गान करने में अत्यन्त प्रसन्न होकर तत्पर रहो। कानों ! दूसरों की कीर्ति सुनने में रसिक होकर सुकर्ण (अच्छे कान) बनो। नेत्रों ! दूसरों की बढ़ती हुई लक्ष्मी को देखकर प्रसन्नता प्रकट करो। इस असार-संसार में जन्म पाने का तुम्हारे लिए यही मुख्य फल है।

१३ मनुष्य-जन्म की दुर्लभता

१. माणुस्सं खु सुदुल्लहं । —उत्तराध्ययन २०।११

मनुष्यजन्म मिलना अत्यन्त कठिन है ।

२. **कबीरा** नोबत आपुनो, दिन दस लेहु बजाय ।
यह पुर-पट्टन यह गली, बहुर न देखो आय ।

३. बड़े भाग्य मानुष तनु पावा,
सुरदुर्लभ सद्ग्रन्थहिं गावा । —रामचरितमानस

४. दुर्लभं त्रयमेवेतद् , देवानुग्रहहेतुकम् ।
मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं, महापुरुष संश्रयः ॥ —शंकराचार्य

ये तीन चीजें दुर्लभ एवं सद्भाग्य की कृपा के कारण हैं । मनुष्यता, मुमुक्षुता और महापुरुषों की संगति ।

५. चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जंतुणो ।
माणुसत्तं सुई सद्धा, संजमंमि य वीरियं ॥

—उत्तराध्ययन ३।१

संसार में सब जीवों के लिए चार परम अंग (उत्तम संयोग) दुर्लभ हैं—(१) मनुष्यता, (२) धर्म-श्रवण, (३) धर्म में श्रद्धा, (४) संयम में वीर्य-पराक्रम करना ।

६. छठाणाइं सव्वजीवाणं सुलभाइं भवंति—
तं जहा—माणुस्सए भवे, आरिए खित्तो जम्मे, सुकुले पच्चायाती, केवलिपन्नत्तस्स, धम्मस्स सवणया, सुयस्स वा सद्दहणया, सद्धहियस्स वा पत्तियस्स वा रोइयस्स वा सम्मं काएणं फासणया ।

—स्थानांग ६।४८५

छः वस्तुएँ सभी जीवों के लिए दुर्लभ हैं—(१) मनुष्य-भव (२) आर्य क्षेत्र (३) उत्तमकुल में जन्म (४) केवलीप्ररूपित धर्म का सुनना (५) उस पर श्रद्धा-प्रतीति—रुचि करना (६) उसके अनुसार आचरण करना ।

१४ दुर्लभ मनुष्यजन्म को हारो मत !

१. दुर्लभ प्राप्य मानुष्यं, हारयध्वं मुधैव मा।

—पार्श्वनाथचरित्र

दुर्लभ मनुष्यजन्म को पाकर व्यर्थ मत गवाओ।

२. नर को जनम बार-बार ना गंवार सुन,
अजहु सवार अवतार ना बिगोइये।
लीजेगो हिसाब तब दीजेगो जबाब कहा,
कीजे जु सताब तो सताबे शुद्ध होइये।
पाप करके अज्ञानी सुख की कहा कहानी,
घृत की निशानी कित पानी जो विलोइये।
स्वारथ तजी जे परमारथ **किसन** कीजे,
जनम पदारथ अख्यारथ न खोइये।
नदी-नाव को सो योग मिल्यो लख लोग तामें,
काको-काको कीजे शोक काकूँ-काकूँ रोइये।
को है काको मित्त तापे काहे काकी चिंत परी,
सीतपति मन में निचिंत होय सोइये।
ध्याइये न विमुख उपाइये न कैते दुःख,
बोइये न बीज जोपे आक बीज बोइये।

स्वारथ तजीजे परमारथ **किसन** कीजे,
जनम पदारथ अख्यारथ न खोइये।

—किसनबावनी

३. रात गमाई सोय के, दिवस गमाया खाय,
हीरा जन्म अमोल यह, कोड़ी बदले जाय।

४. स्वर्णस्थाले क्षिपति स रजः पाद शौचं विधत्ते,
पीयूषेण प्रवरकरिणं वाहयत्येन्धभारम्।
चिन्तारत्नं विकिरति कराद् वायसोड्डायनार्थं,
यो दुष्प्राप्यं गमयति मुधा मर्त्यजन्म प्रमत्तः।

—सिन्दूरप्रकरण ५

जो व्यक्ति आलस्य-प्रमाद के वश, मनुष्य जन्म को व्यर्थ गँवा रहा है, वह अज्ञानी मनुष्य सोने के थाल में मिट्टी भर रहा है, अमृत से पैर धो रहा है, श्रेष्ठ हाथी पर ईन्धन ढो रहा है और चिन्तामणि रत्न को काग उड़ाने के लिए फेंक रहा है।

१५ मानवता

१. इदं मानुषं सर्वेषां भूतानां मधु ।

—बृहदारण्यकोपनिषद् २।५।१३

यह मानुष्यभाव-मानवता—सब प्राणियों को मधु के समान प्रिय है

२. मानवता के चार लक्षण—

१. धर्म की तरफ लेजाने वाली नीति, २. नम्रता,
३. निर्भयता ४. परोपकारिता । **—प्लेटो**

३, मानवता के चार अंग—

१. विवेकाशीलता, २. न्यायप्रियता, ३. सहिष्णुता,
४. वीरता । **—प्लेटो**

४. मिले मोकला मिनख पण, मिले न मिनखाचार ।
फोगट फोनोग्राम ज्यूं, बातां रो व्यवहार !

५. मानवता की माँग—

जैनों के उत्तराध्ययन में, बौद्धों के धम्मपद में, शंकर के विवेकचूड़ामणि में, क्रिश्चियनों के बाइबिल में, मुसलमानों के कुरान में, वैदिकों के वेदों—उपनिषदों में, वैष्णवों के रामायण—महाभारत में—इन सभी शास्त्रों में मानवता की याचना की गई है ।

६. तू वकील, डाक्टर, न्यायाधीश, प्रधानमन्त्री व राजा है या मनुष्य ? मां के पेट से क्या निकला था और आखिर तेरा क्या नाम रहेगा ?

मनुष्य ! यदि मनुष्य है तो फिर जीवन में मनुष्यता को प्रधानता देनी चाहिए या राक्षसीवृत्ति को ?

७. मनुष्य की मनुष्यता के प्रति अमानवता दूसरों को रुला देती है । —बर्न्स

८. बादशाह का दुशाला—

बादशाह ने वजीर को एक कीमती दुशाला दिया । वजीर ने उससे नाक पोंछा । किसी ने चुगली खाई । शाह ने क्रुद्ध होकर वजीर को बरखास्त कर दिया । मनुष्यजन्म-रूप दुशाले से पाप किया गया तो मनुष्यजन्म से बरखास्त होकर नरक में जाना पड़ेगा ।

१६ आश्चर्यकारी मनुष्य

१. वीएना में एक ऐसा मनुष्य है, जो आंखों से सुन सकता है एवं दवाने से उसकी आंख से मीठा स्वर भी निकलता है।

२. एक आदमी की गर्मी २४० वोलटर है, उसके साथ हाथ मिलाने वाले को धक्का लगता है। जब वह चुटकी बजाता है या सड़क पर चलता है, तब चिनगारियाँ उछलती हैं।

—विश्वमित्र, १९५२, नवम्बर

३. (क) जोधपुर के लूणी गाँव में एक आदमी है, जिसके दिल के नीचे की ओर तीन इंच लम्बा और ढाई इंच चौड़ा भूरे रंग की सींग है।

(ख) पूर्वी पाकिस्तान (बांगला देश) के "ख यन" थाने के कालेवगी गाँव मेंपाँच इंच लम्बी पूंछवाला लड़का है।

(ग) मिर्जापुर जिले के दक्षिणी क्षेत्र में कुछ समय पहले नौ फुट लम्बा एक डरावना आदमी मिला था।

(घ) दक्षिणी अमेरिका के सिहगो शहर में दो सिरवाला एक आदमो था, एक सिर कंधों पर था और दूसरा कांख में था, जिससे वह कुछ बोल सकता था, कांख वाले मुंह से साँस लेता था पर खा नहीं सकता था।

—हिन्दुस्तान, ६ मई, १९६२

४. (क) रोम में एक ऐसा आदमी है जो सिर के बल चलता है, तथा उसका कहना है कि उल्टे होकर देखो तो दुनियां सीधी दिखाई देगी।

(ख) एशिया का सबसे लम्बा आदमी १० फुट ५ इंच है।

—सर्जना, पृष्ठ ३३

५. छियानवे इंच की मूंछ-सौराष्ट्र में लाठी ग्राम का रहीश जाति का अहीर एवं नाम अर्जुन डांगर था। उसकी मूंछ ९६ इंच लम्बी थी। वह १९३३ के विश्व-मेले में अमेरिका गया था।

६. बंगाल-बेलकोबा ग्राम में एक मनुष्य का पग २२ इंच था।

७. सात अंगुलि वाले–

सखेरा-डी-वीटरेगो नामक स्पेन के एक गाँव में प्रत्येक आदमी के हाथों-पैरों के सात-सात अंगुलियाँ (छः अंगुलियाँ और एक अंगूठा) हैं। उनके शादी-विवाह भी सात अंगुली-वालों में होते हैं। पाँच अंगुली वाले मनुष्यों को देख कर वे अचम्भा करते हैं। **—हिन्दुस्तान १३ जून, १९७१**

८. तीन साँप खानेवाला आदमी–

ग्वालियर में सिनेमा के ओवरटाइम में एक आदमी बीन बजाकर सांपों को अपने सामने खड़ा कर लेता था एवं बुडका भरकर उन्हें खा जाता था। उसने कई दिनों तक २-३ साँप खाकर लोगों को चमत्कार दिखाया।

—इन्दरचन्द नवलखा से श्रुत

९. तुर्की के इसतम्बूल शहर में रहनेवाला अहमद नामक व्यक्ति सर्पों को जीवित ही निगल जाता है।

—विचित्रा, वर्ष ३, अंक ४, १९७२

१०. इंजेक्शन द्वारा काले नाग का विष निकालने वाले वैद्य–

वि. सं. १९९६ की बात है। हम कई साधु कारणवश सुजानगढ़ में ठहरकर दवा ले रहे थे। वहाँ चोपड़ा औषधालय में एक काला नाग निकला। बड़नगर वाले वैद्य—श्रीभगवतीप्रसाद जी ने उसे पकड़ा एवं इंजेक्शन द्वारा उसकी दाढ़ से जहर निकाला। आश्चर्यचकित सैकड़ों लोगों ने उस चमत्कार को देखा। पूछने पर वैद्यजी ने कहा—काले साँप का ऐसा शुद्ध जहर मिलना बहुत मुश्किल है। यह समय पर अमृत का काम करता है। मरते समय जब मनुष्य की जबान बन्द हो जाती है, इसकी एक मात्रा देने पर तत्काल मनुष्य एक बार बोलने लग जाता है। **—धनमुनि**

११. विचित्र सर्प फार्म चलाने वाले अमेरिकन नवयुवक–

अमेरिकन नवयुवक-विटेकर रौम्यूलस–जिन्हें बचपन से ही सांपों से अपूर्व स्नेह रहा है, केवल ६ वर्ष की आयु में ही सांपों से ऐसे हिल-मिल गये थे मानो वे उनके अंतरंग साथी हों। सांपों के साथ इतना निकट का लगाव होने के कारण वे १९६३ से १९६५ तक मियामी के विश्वविख्यात सर्प-अनुसन्धान फार्म में सहकारी डाइरेक्टर का कार्य करते रहे। १९७० वर्ष के आरम्भ में विटेकर को अन्तर्राष्ट्रीय पशु-

संरक्षण-संस्था से आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ। फलतः उन्होंने मद्रास में अपना विचित्र सर्प-फार्म खोला। इस एक एकड़ के सर्प फार्म में लगभग ३० जातियों के ३०० से भी अधिक सांप हैं। यहाँ साँपों का जहर निकाला जाता है। इसकी विष निकालने की प्रणाली भी अद्भुत एवं खतरनाक है। सांप को एक पतली छड़ से जिसके सिरे पर मुड़ा हुआ 'हुक' लगा होता है, सावधानी से पूरा दबोच लिया जाता है। फिर गर्दन से पकड़ कर सांप को एक पतली झिल्ली से मढ़े हुए काँच के शीशे पर डंक मारने को मजबूर किया जाता है, साथ ही साथ गर्दन पर दबाव किया जाता है, जिससे मटमैले रंग का तरल विष शीशे में उतर आता है। यह विष यथाशीघ्र बम्बई के हाफकिन इन्स्टीट्यूट में भेज दिया जाता है। वहाँ उसकी अल्पमात्रा घोड़े के शरीर में सुई द्वारा प्रविष्ट की जाती है। क्रमशः घोड़े के रक्त में जहरमोहरा पैदा हो जाता है, जिसका प्रयोग सांप द्वारा काटे हुये व्यक्ति पर किया जाता है।

—साप्ताहिक, हिन्दुस्तान, १ अगस्त १९७२

१२. रूमानिया का 'कैरोलग्रेन' नामक व्यक्ति अभी तक न सोया है और न उसको झपकी ही आई है।

—हिन्दुस्तान, १३ जून, १९७१

१३. **साठ साल से नहीं सोया**—(मैड्रिड २६ सितम्बर) कृषि-फार्म में काम करनेवाला ६८ वर्षीय 'वेलेन्टिन

मैडिना' गत ६० सालों से नहीं सोया है। वह २४ घण्टे काम करके तिगुना वेतन प्राप्त करता है। मैडिना २४ घण्टों में दो बार नाश्ता, दो बार लंच तथा दो बार डिनर खाता है। **–हिन्दुस्तान, २८ सितम्बर, १९६४**

१४. जोधपुर में 'भोपालचन्दजी लोढ़ा' के सरकारी आरोप लगने से, दिल पर ऐसा धक्का लगा कि वे बेहोश हो गये। ७ वर्ष बाद एक दिन अचानक तानें आईं और उनकी बेहोशी दूर हो गई। **–जोधपुर में श्रुत**

१५. भारत के प्रसिद्ध साइकिल-चालक एवं कलाकार 'श्री एम. कुमार जौनपुरी' ने हिण्डौन में लगातार १०४ घण्टे तक साइकिल चलाने का सफल प्रदर्शन कर हजारों दर्शकों की प्रशंसा अर्जित की। उनके विविध प्रदर्शनों को देखने के लिये चार दिनों तक गांवों तथा नगर के हजारों लोगों का तांता लगा रहा। श्री **जौनपुरी** ने साइकिल चलाते हुए स्नान करना, वस्त्र बदलना, जलपान करना आदि अनेक रोचक कार्यक्रम प्रदर्शित किये।

–हिन्दुस्तान, २४ अगस्त, १९७१

१६. बेल्जियम का 'अलाइस द क्रिपी' नामक ढोल बजाने वाला सुबह छः बजे से शाम के छः बजे तक लगातार (आधे घण्टे की खाने की छुट्टी के अलावा) ढोल बजाता था और इन बारह घंटों में ५५ मील पैदल चलता था।

–सरिता, अंक ३९५, सितम्बर, १९७१

१७. पिलबर्न के 'बिलियम हेनरी' नेत्रहीन थे पर उन्होंने अंधेपन

के बावजूद अपनी जिन्दगी में १० लाख मील की यात्रा की, इसमें से उन्होंने दो लाख मील घोड़े की पर यात्रा की। —सरिता अंक-३६५, सितम्बर १६७१

१८. **पैदल चलने का नया विश्व रिकार्ड**—इंग्लैंड के दूर पैदल यात्री ५३ वर्षीय 'वाकरजौनसिक्लेयर' ने ऑकलैंड के निकट ग्राण्ड फ्री रेस ट्रैक में लगातार चलते हुए २१८ मील ६० गज सफर किया (उसका पिछला रिकार्ड २१५ मील १६०० गज का था) उसने ६० घण्टे ४२ मिनिट लगाए। —हिन्दुस्तान, २ अप्रेल, १६७१

१६. **ताजे-मोटे मनुष्य**—

(क) अमरीका के फ्लोरिड्म के जेक्सोनविल का 'चार्ल्स स्टेन मेटज' ५२ स्टोन १२ पौंड (७४० पौंड) का था। वह ३८ वर्ष की आयु में मरा। मरते समय उसकी कमर ११२ इंच की थी।

(ख) अमरीका के उत्तरी कारोलीना का 'माइन्स डारडेन' का वजन १००० पोंड था। वह ७ फुट ८ इंच ऊँचा था।

(ग) एक अमरीकी नीग्रो महिला दुनियाँ की सबसे भारी औरत है। वह ८४० पौंड की है।

(घ) अमरीका के इण्डियाना का 'रौबर्ट अर्ल ह्यूजस' १०६७ पौंड का था। अस्पताल के दरवाजों में से उसका घुसना असम्भव था। उसके लायक कोई चारपाई भी न थी। —हिन्दुस्तान, ११ जुलाई, १६७०

(ङ) अमेरिका के एक आदमी का वजन ५८८ पौंड एवं उसकी स्त्री का वजन ४८८ पौंड था। पुरुष की लम्बाई पाँच फीट चार इंच थी एवं उसका सीना छः फीट चार इंच चौड़ा था।

२०. **पाषाणयुगीन कबीला**—मनीला (फिलिपाइन) से ५०० मील दक्षिण की ओर मिण्डानाओ द्वीप में एक ऐसे कबीले का पता चला है जो पाषाणयुग के लोगों की तरह रहता है। इन लोगों को न भाषा का ज्ञान है, न ही इन्होंने कभी चावल, चीनी या रोटी खाई है और न नमक चखा है। ये लोग मांस या जंगली घास खाते हैं एवं चमड़ा पहनते हैं। इस कबीले का नाम **तासाडस** है एवं विश्व में इन लोगों की संख्या बहुत ही थोड़ी है। इनके हथियार पत्थर या बाँस के होते हैं।

—हिन्दुस्तान १० जुलाई १९७१

२१. **विश्व का सबसे छोटा मनुष्य**—आस्ट्रेलिया निवासी जार्ज डावी का कद १ फुट ४ इंच अर्थात् २१. १/३ अंगुल का है। आयु ४६ वर्ष की है। द्वितीय महायुद्ध में जार्ज एक कुशल गुप्तचर (सी. आई. डी.) का काम करते थे। महायुद्ध के बाद उन्होंने अपना अधिकांश समय होटलों में व्यतीत किया।

अनोखा विवाह—श्रीमती जार्ज की जार्ज से पहली भेंट पेरिस में हुई थी। उन्होंने देखते ही कौतूहलवश जार्ज को गोदी में उठा लिया और पूछा—क्या मेरे घर चलोगे?

मंद मुस्कान बिखेरते हुए जार्ज ने उत्तर दिया—तुम चाहो तो मैं आजीवन तुम्हारे घर रह सकता हूं। प्रेम जागृत हुआ और छोटे खिलौने तुल्य उस बातूनी व्यक्ति को वह जीवन भर के लिए अपने घर ले गईं और अपना पति बना लिया। श्रीमती जार्ज का कद ६ फीट लंबा था। इस अद्भुत जोड़े की दो संतानें हैं किन्तु वे दोनों माता के समान लम्बी हैं।

—वीर अर्जुन साप्ताहिक १० मई १९६९ के आधार से

२२. अद्भत दाढ़ी—बैंकाक के श्री 'सेयू येनक्लाई'

'मधुमक्खियों वाली दाढ़ी कैसे उगाएं' प्रतियोगिता में चैम्पियन घोषित किए गए। टेलीविजन पर लाखों दर्शकों के समक्ष उन्होंने अपनी मधुमक्खियों को (अर्थात् जिनको स्वयं उन्होंने पाल रखा था।) निकट के पेड़ पर उड़ा दिया और जब दुबारा बुलाया तो वे सारी मधुमक्खियाँ सिलसिलेवार दाढ़ीनुमा उनके चेहरे पर चिपक गयीं। मधुमक्खियों को जाने और बुलाने की

उनकी अपनी भाषा अलग होती है।

–अमर उजाला, (आगरा) १५ फरवरी १९७२

२३. जहरीले मनुष्य—

(क) सुनने में आया है कि गुजरातपति मुहम्मदशाह अपराधियों के मुंह में थूकता था, जिससे वे मर जाते थे।

(ख) नादिरशाह की जहरीली सांस से दांत साफ करने वाली दासियाँ मूर्च्छित हो जाती थीं।

(ग) विरोधियों ने सिकंदर को एक विषकन्या भेंट की। उसके चुम्बन से गुलाम मर गया।

(घ) एक अफीमची को काटने वाला साँप मर गया।

२४. मांडले (बर्मा) के एक साधु "नानादीगा" ने अपनी पोशाक अपने शरीर में सिलवाली थी, ताकि कोई व्यक्ति उसके नंगे शरीर को देख नहीं सके। कहते हैं, वह ८१ वर्षों तक इसी तरह जीवित रहा था।

–विचित्रा, वर्ष ३, अंक ४, १९७१

२५. टंगानिका अफ्रीका की कोनोदा जाति के ओझा किसी वनस्पति से एक ऐसा रस तैयार करते हैं जिसका शरीर पर लेप कर देने से चमड़ी ऐसी हो जाती है कि मशाल से जलाने पर भी वह नहीं जल पाती। यह रहस्य ओझाओं की वंश-परम्परा में ही सुरक्षित है।

–विचित्रा वर्ष ३, अंक ४, १९७१

२६. भारत में पाई जाने वाली परिहार या पंडा जाति के लोग "मिलत" नाम की देवी की पूजा करते हैं। लेकिन उनकी यह पूजा बड़ी अद्भुत होती है। वे तेल में डुबोया एक कपड़ा मुंह में रखकर उसमें आग लगा देते हैं और उसे तब तक रखे रहते हैं जब तक वह जलकर राख नहीं हो जाता। कहते हैं, इस आग से उन्हें कोई नुक़सान नहीं होता। **–विचित्रा वर्ष ३, अंक ४, १९७१**

१७ आश्चर्यकारी मनुष्यणियां

१. १८ साल से अन्न-पानी न लेने वाली महायोगिनी— हैदराबाद से ६० माइल दूर "यानगुंदी" गाँव के निकट एक पहाड़ी पर साधना में लीन **माणिकम्मा** नाम की एक योगिनी है। आयु ३१ साल की है, १८ साल से उसने कुछ भी नहीं खाया-पीया। इस सम्बन्ध में हैदराबाद-लोकसभा के सदस्य शंकरदेव विद्यालंकार ने एक पुस्तक प्रकाशित की है। **–हिन्दुस्तान, १२ अक्टूबर, १९६३**

२. जोधपुर [राजस्थान] के एक गाँव में एक बहन रहती थी। लोकवाणी के अनुसार वह लगभग २३ वर्ष से कुछ नहीं खाती-पीती [शरीर स्वस्थ था] वि. सं. २०२१ पौष मास में जब वह आचार्य श्री तुलसी के दर्शन करने जोधपुर आई, तब उसे देखने का मौका मिला था। **–धनमुनि**

३. दक्षिणी अफ्रीका में एक स्त्री पति की मृत्यु के समाचार सुनते ही सन् ३१ में सोई, और सन् ४१ में उठी। वह सूखकर काँटा हो गई थी। उसे अस्पताल में दो-दो घण्टे बाद खुराक दी जाती थी।

४. एक हबशी स्त्री के होठ १४ इंच लम्बे हैं। उन पर छोटी रकाबी रखी जा सकती है।

५. बैंगलोर-कांग्रेस-प्रदर्शनी १९६७ में एक २२ वर्षीया तरुणी देखने में आई। उसके शरीर में निरन्तर बिजली प्रवाहित होती थी। उसके शरीर के किसी भी भाग में बिजली के बल्व लगाने से बल्व प्रकाशित हो उठते थे। ५ से १० हॉर्स पाँवर की मोटर का तार पकड़ते ही वह स्टार्ट हो जाती थी। उसे भोजन आदि काष्ठ के बर्तनों में दिया जाता था। जब कोई व्यक्ति उस युवती को स्पर्श करता तो एक जोर का झटका (शॉक) लगता था।

—ब्रह्मदेवसिंह

६. ओहियो अमेरिका में रबर की वस्तुएँ बनानेवाले एक कारखाने में रोज कहीं न कहीं छोटी-मोटी आग बड़े रहस्यमय ढंग से लग जाती थी। मालिक ने प्रो. "रोबिन बीच" को जाँच-पड़ताल के लिए बुलवा भेजा। सारी बात सुनकर प्रो. साहब ने एक-एक कर सभी मजदूरों को धातु की एक चादर पर खड़े होने के लिए कहा। मजदूरों में एक जवान औरत जब धातु की चादर पर आकर खड़ी हुई तो अचानक मीटर की सुई ने एक गहरी छलाँग लगाई। उसके शरीर में ३०,००० वोल्ट की इलेक्ट्रो-स्टेटिक बिजली और ५००,००० ओ एच. एम. एस. की प्रतिरोध शक्ति (रेसिस्टेंट) मौजूद थी।

प्रो· बीच ने घोषणा की–"इस कारखाने में अग्नि-विस्फोट की जड़ यही है।" **–विचित्रा वर्ष ३, अंक ४, १९७१**

६. आस्ट्रिया के ड्यूक फ्रेडरिक पंचम की पत्नी के हाथ इतने मजबूत थे कि वह लकड़ी के मोटे तख्ते में मुक्का मारकर कील ठोक देती थी।

–सरिता, सितम्बर अंक ३९५, १९७१

१८. मनुष्य के विषय में ज्ञातव्य बातें–

१. मनुष्य के शरीर से प्राप्त चर्बी से साबुन की सात टिकियाँ बनायी जा सकती हैं ।

२. मनुष्य के शरीर में इतना जल होता है कि उससे दस गैलन का बर्तन भर सकता है ।

३. मनुष्य के शरीर से प्राप्त कार्बन से सुरमे की नौ हजार पैंसिलें बनाई जा सकती हैं ।

४. मनुष्य के शरीर की यदि चमड़ी उधेड़ी जाय तो वह साढ़े अठारह वर्ग फुट होगी ।

५. मनुष्य का दिल २४ घण्टों में १,०३,६८९ बार धड़कता है ।

६. मनुष्य के शरीर का सबसे कड़ा भाग दांत के ऊपर की पालिश होती है ।

७. मनुष्य का शरीर मच्छर को अंगारे के समान लाल दिखाई देता है ।

८. मनुष्य के नाखून २४ घण्टों में ·००४३५३५६ सैंटीमीटर बढ़ते हैं ।

९. मनुष्य के बाल २४ घण्टे में ·००००१२७ सैंटीमीटर बढ़ते हैं ।

१०. मनुष्य के दो लाख बालों की चुटिया से बीस टन वजन उठाया जा सकता है ।

११. मनुष्य की धमनियों में रक्त की गति सात मील प्रति घण्टा है।
१२. मनुष्य के शरीर में कुल २०६ हड्डियाँ होती हैं।
१३. मनुष्य के शरीर में ७५० मांस-पेशियाँ होती हैं।
१४. मनुष्य के नेत्र एक मिनट में पच्चीस बार झपकते हैं।
१५. मनुष्य के बाल व नाखून काटते समय दर्द इसलिए नहीं होता कि उनमें नसें नहीं होतीं।
१६. मनुष्य के फेफड़ों में लगभग १०,६०,००,००० छेद हैं।
१७. मनुष्य की आँखें दूरदर्शक यन्त्र से ३००० तारे देख सकती हैं।
१८. मनुष्य के हाथ की पाँचों अंगुलियों पर बराबर चोटें की जायें तो बीच की उंगली पर सबसे अधिक चोट लगेगी।
१९. मनुष्य के मस्तिष्क का वजन तीन पौंड और स्त्री के मस्तिष्क का वजन दो पौंड होता है।
२०. मनुष्य के दिमाग तथा हड्डियों पर भोजन की कमी का कोई प्रभाव नहीं होता।

—दीनदयाल डीडवानिया, सर्जना, पृष्ठ ४६

२१. मनुष्य समुद्र में ४२० फुट डुबकी लगा सकता है।

—विश्वदर्पण, **पृ. ४०**

२२. जब शरीर के ७२ पुट्ठे एक साथ अपना कार्य करते हैं तब ही मनुष्य एक शब्द बोल पाता है।
२३. मनुष्य द्वारा खांसी से निकली हवा का वेग २४५ मील प्रति घण्टा होता है। **—सरिता, सितम्बर, अंक ३६५, १६७१**

१९. मनुष्यलोक

१. जैन-आगमानुसार मनुष्यलोक—

जहाँ हम रहते हैं वह रत्न प्रभा-पृथ्वी की छत है। उसके मध्य में सुदर्शन नाम का मेरुपर्वत है। उसके ठीक बीच में गोस्तन के आकार के आठ रुचक-प्रदेश हैं। वहाँ से नव सौ योजन ऊपर और नव सौ योजन नीचे ऐसे अठारह सौ योजन का मोटा एवं एक रज्जु—असंख्य योजन का लम्बा-चौड़ा मध्यलोक-तिरछालोक है। मध्यलोक की सीमा से ऊपर ऊर्ध्वलोक है और नीचे अधोलोक है। मध्यलोक में जम्बू आदि असंख्य द्वीप हैं और लवण आदि असंख्य समुद्र हैं।

जम्बूद्वीप, धातकीखण्डद्वीप और अर्धपुष्करद्वीप, ऐसे ढाई द्वीपों में तथा लवणसमुद्र के कुछ भाग में मनुष्यों का निवास है। इसी का नाम मनुष्यलोक है। यह पैंतालीस लाख योजन विस्तारवाला है। इसको चारों तरफ से घेरे हुए 'मानुषोत्तर' पर्वत हैं।

जम्बूद्वीप में भरत आदि सात क्षेत्र हैं[1]।

---

(१) देखिए लोकप्रकाश पुंज ४।

२. **मनुष्यों की संख्या**—जैन शास्त्रानुसार मनुष्यलोक में संज्ञी-मनुष्यों की संख्या उनत्तीस अङ्कों जितनी मानी गयी है। वे अङ्क इस प्रकार हैं—

७९२२८१६२, ५१४२६४३, ३७५९३५४, ३९५०३३६।

—अनुयोगद्वार, प्रमाणाधिकारसूत्र ६०

२०. वैज्ञानिकों के मतानुसार पृथ्वी आदि का जन्मकाल

१. पृथ्वी का जन्मकाल २०० करोड़ वर्ष पूर्व, प्राणियों का उद्भव ३० करोड़ वर्ष पूर्व, मनुष्यों का जन्म तीस लाख वर्ष पूर्व, ज्योतिष विद्या तीस हजार वर्ष पूर्व, दूरवीक्षण यन्त्र व आधुनिक विज्ञान ३०० वर्ष पूर्व उत्पन्न हुए।

—सर जेम्स जीम्स "बँगश्री" से

२. भू-शास्त्री **जेली** के मतानुसार सागर की न्यूनतम आयु ७० करोड़ एवं अधिकतम दो अरब ३५ करोड़ वर्ष निश्चित की गई है। शैल-प्रमाणों से तथा **हिलियम विधि** से पृथ्वी की आयु दो अरब वर्ष से अधिक मानी गई है। खगोलीय आधारों पर पृथ्वी की आयु दस अरब वर्ष, सूर्य की आठ अरब वर्ष, चन्द्रमा की चार अरब वर्ष लगभग मानी गई है। 'हेरोल्ड जेफरीस' के मतानुसार आज से लगभग चार अरब वर्ष पूर्व चन्द्रमा पृथ्वी से आठ हजार मील दूर था किन्तु दूरी बढ़ते-बढ़ते आज लगभग ढाई लाख मील दूर हो गया।

—नवभारत, ८ मार्च, १६६६

—(केदारनाथ प्रभाकर, सहारनपुर)

३. **भूगर्भ संसार की खोज—**

विख्यात शोधक और लेखक "डा. रेमोण्ड बरनाड ए. बी. एम. ए. पी-एच. डी. न्यूयार्क विश्वविद्यालय" अपनी नवीन पुस्तक **दी हॉलो अर्थ** में लिखते हैं कि–उड़न चक्रियों का असली गृह एक विशाल भूगर्भ-संसार है, जिसका प्रवेशद्वार उत्तरीय ध्रुव के एक मुखद्वार में है। पृथ्वी के खोखले अन्तरिक्ष में एक मानवोत्तर जाति निवास करती है। जो सतह पर रहनेवाले मनुष्यों से कोई सम्बन्ध रखना नहीं चाहती! उसने अपनी उड़नचक्रियों को तभी उड़ाना प्रारम्भ किया, जब मनुष्यों ने अणुबमों के विस्फोटों से दुनियाँ को त्रस्त कर दिया।

डा. बरनाड आगे लिखते हैं कि एडमीरल वार्ड ने एक नौकादल को उक्त ध्रौवीय मुखद्वार में प्रवेश करने का अधिनायकत्व किया तथा इस भूगर्भस्थित लोक में पहुँचे। यह लोक तुषार और हिम से स्वतन्त्र है। इसमें जंगलाच्छादित पर्वत श्रेणी हैं। झीलें, नदियाँ वनस्पति तथा विचित्र पशु भी हैं। इस आविष्कार के समाचार को अमरीका सरकार ने रोक लिया, जिससे दूसरे देश भवान्तरीण लोक पर हक कायम न कर लें। इस भूगर्भ लोक का क्षेत्र उत्तरीय अमेरिका क्षेत्र से अधिक विस्तृत है। पृथ्वी की सतह से ८०० मील नीचे एक नवीन संसार की खोज मानव इतिहास की महानतम खोज है, जिसमें लाखों उच्चतर बुद्धिमान लोग निवास करते हैं।

—मोहन, बांठिया "चंचल" जैनभारती, ७ नवम्बर, १९६५

२१. दृश्यमान जगत की आबादी

१. अनुमान है कि पत्थर युग में इस दुनियाँ की जनसंख्या एक-डेढ़ करोड़ थी। दो हजार वर्ष पूर्व क्राइस्ट के युग में यह जनसंख्या २० करोड़ हो गई। ईसवी सन् १६५० में पचास करोड़, १७५० में सत्तर करोड़, १८५० में करीब एक अरब, १६०० में डेढ़ अरब और १६६० में डेढ़ से तीन अरब हो गई। **—जैनभारती, अंक २३**

२. संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार सन् १६६३ के मध्य तक विश्व की आबादी ३ अरब १८ करोड़ थी।

—हिन्दुस्तान २४ अक्टूबर, १६६३

३. वर्ल्ड रेडियो टी. वी. हैंडबुक १६७१ संस्करण के अनुसार वर्तमान विश्व की जनसंख्या ३,५२,८७,७०,५५८ है। (कुछ देशों की जनसंख्या उपलब्ध नहीं हो सकी है।)

४. विश्व में प्रति मिनट १२५, प्रतिदिन एक लाख ८० हजार, प्रति मास ५० लाख और प्रति वर्ष ६ करोड़ ४८ लाख मनुष्य बढ़ते हैं। **—नवभारत ६ दिसम्बर १६६५**

५. विश्व में प्रति घंटा १३५०० मनुष्य पैदा होते हैं और ६५०० मरते हैं। **—हिन्दुस्तान, २८ अगस्त, १६६६**

६. विश्व में प्रति मिनट ५९, प्रतिदिन ८५ हजार और प्रतिवर्ष ३ करोड़ **गर्भपात** कराये जाते हैं।

—नवभारत, ७ सितम्बर, १९७१

७. विश्व के महासागर एवं महाद्वीप—

१. वैज्ञानिकों की दृष्टि में इस दृश्यमान पृथ्वी के धरातल का १/३ भाग स्थल है और २/३ भाग जल है। स्थल के ७ बड़े-बड़े खण्ड हैं जिन्हें महाद्वीप कहते हैं तथा जल के ५ बड़े-बड़े खण्ड हैं, जिन्हें महासागर कहते हैं।

२. **महासागर के नाम**	**क्षेत्रफल वर्गमीलों में**
१–प्रशान्त महासागर	६,३८,०१६६८
२–अन्ध महासागर	३,१८,३९,३०६
३–हिन्द महासागर	२,८३,५६,२७६
४–उत्तरी ध्रुव महासागर ५–दक्षिणी ध्रुव महासागर (आर्कटिक महासागर)	५४,४०,१९७

३. **महाद्वीपों के नाम**	**क्षेत्रफल (वर्गमील)**	**जनसंख्या (७०.)**
१–एशिया	१,७४,६१,५८३	१,९६,९१,६५,७८९
२–अफ्रीका	१,१९,९६,५ २	३४,०९,८१,६९९
३–यूरोप	३५,२५,७५५	७०,२४,९६,६४५
४–उत्तरी अमेरिका	९३,५७,०२६	४९,६१,२४,७९७
५–दक्षिणी अमेरिका	६८,६८,०९८	
६–आस्ट्रेलिया	३३,०३,००२	२,००,०१,६२८
७–अंटार्कटिका	५१,००,०००	आबाद नहीं है।

[महाद्वीपों के निकटवर्ती देशों की जनसंख्या उन-उन महाद्वीपों के साथ जोड़ी गई है, जिन-जिनके वे विशेष निकट हैं।]

४. **महाद्वीपों का संक्षिप्त परिचय :—**

- **एशिया**—यह सबसे बड़ा महाद्वीप है। इसमें लगभग सभी प्रकार की जल-वायु, वनस्पति, जीव-जन्तु और मनुष्य मिलते हैं। यूरोप भी वास्तव में इसी महाद्वीप का एक बड़ा पश्चिमी प्रायद्वीप है।

  यह पूर्वी गोलार्द्ध (पुरानी दुनियां) में भूमध्य रेखा से उत्तरी ध्रुव देश तक स्थित है। इसके उत्तर में उत्तरी ध्रुव सागर, पूर्व में प्रशान्तमहासागर दक्षिण में हिन्दमहासागर और पश्चिम में रक्तसागर, अफ्रीका, रूमसागर, कृष्ण-सागर, कैस्पियनसागर, यूरालपर्वत और यूरोपमहाद्वीप हैं।

- **अफ्रीका**—एशिया के बाद अफ्रीका संसार के शेष महा-द्वीपों में सबसे बड़ा है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह एशिया का दो तिहाई है, लेकिन इसकी आबादी एशिया का कुल साढ़े पाँचवां हिस्सा है। एशिया और यूरोप इसके निकट के पड़ोसी हैं। अफ्रीका और यूरोप को जिब्राल्टर-जलसंधि अलग करती है, तथा अफ्रीका और एशिया को स्वेज-थल संधि मिलाती है।

  अफ्रीका के उत्तर में कर्क रेखा के निकट संसार का सबसे बड़ा मरुस्थल **सहारा** है। दक्षिण में मकर रेखा के निकट **कालाहारी** मरुस्थल है। इस महाद्वीप में विक्टोरिया, टांगानीका आदि झीलें तथा नील, काङ्गो आदि नदियां है।

इस महाद्वीप के अन्तर्गत मिश्र देश में सन् १८६९ में स्वेज स्थल-डमरूमध्य[1] को काट कर १६० किलोमीटर लम्बी जहाजी-नहर बनाई गई। उसका नाम **स्वेज नहर** है। वह रक्तसागर और रूमसागर को मिलाती है। उसके बनने से पहले यूरोप से भारत आदि पहुंचने के लिये सारे अफ्रीका महाद्वीप का चक्कर लगाना पड़ता था। अब ७००० किलो मीटर की बचत हो गई है।

- **यूरोप**—महाद्वीप यूरोप एशिया के पश्चिम में और अफ्रीका के उत्तर की ओर स्थित है। वास्तव में यूरोप और एशिया एक ही महान् भू भाग है, जिसे यूरेशिया कहते हैं। यूरोप के उत्तर में उत्तरी ध्रुव सागर है, दक्षिण में रूम सागर, कृष्ण सागर और काफ पर्वत है, पश्चिम की ओर अन्ध महासागर है और पूर्व में कैस्पियन सागर, यूराल पर्वत और एशिया महाद्वीप है। यह महाद्वीप आस्ट्रेलिया को छोड़कर शेष सभी महाद्वीपों से छोटा है परन्तु धन-सम्पत्ति, व्यापार, शिक्षा-दीक्षा और सामाजिक उन्नति की दृष्टि से संसार भर में सबसे प्रथम स्थान पर है।
- **उत्तरी अमेरिका**—यह संसार के सात-महाद्वीपों में तीसरा सबसे बड़ा महाद्वीप है। सिर्फ एशिया और अफ्रीका ही क्षेत्र में इससे बड़े हैं। जनसंख्या की दृष्टि

नोट १ स्थल डमरूमध्य—ऐसे तंग भू भाग को कहते हैं, जो दो बड़े भू भागों को जोड़ता है।

से भी इसका नम्बर एशिया और यूरोप के बाद तीसरा है।...........उत्तरी अमेरिका अनेक देशों में बंटा हुआ है। उनमें सबसे बड़ा कनाडा है। उसके बाद संयुक्त राज्य अमेरीका है। (जिसके अन्तर्गत ५० राज्य हैं। इसीलिए इसके राष्ट्रध्वज पर ५० सितारे लगाये गये हैं।) अन्य देश काफी छोटे हैं।

- **दक्षिणी अमरीका**—दक्षिणी अमरीका महाद्वीप उत्तरी अमरीका से छोटा है, किन्तु यूरोप से लगभग दुगना है। दक्षिणी अमरीका छोटे-बड़े अनेक देशों में विभक्त है। इनमें सभी तरह के देश हैं। सबसे बड़ा देश ब्राजील जो सबसे छोटे देश फ्रेंच गायना से लगभग २००० गुना है। इन देशों में स्पेनी और पुर्तगाली भाषाओं का प्रयोग होता है। ये दोनों ही भाषाएँ लैटिन भाषा से निकली हैं। इसीलिए इन्हें लातिन-अमरीकी देश कहा जाता है।

- **मध्य अमरीका**—उत्तरी अमरीका का मेक्सिको से दक्षिण वाला पतला-सा भाग दक्षिणी अमरीका तक चला गया है। इस भाग को मध्य अमरीका कहते हैं। मध्य अमरीका में मेक्सिको आदि अनेक देश हैं। लगभग दस मील चौड़ी जमीन की पट्टी, जिसमें से होकर **पनामा**नहर बहती है, अमेरिका के अधिकार में है। मध्य अमेरिका के अधिकतर निवासी पूर्ण या आंशिक रूप से इंडियन-आदिवासी हैं।

- **आस्ट्रेलिया**—यूरोप वालों को आस्ट्रेलिया महाद्वीप का पता सब महाद्वीपों के अंत में लगा। सन् १७७० में कप्तान

कुक ने इसकी खोज की ! यहाँ विशेष रूप से गेहूं की खेती होती है और सोने-ताँबे-चाँदी शीशे आदि की खाने हैं तथा भेड़ों को बड़े पैमाने पर पाला जाता है। कुल मिलाकर यहाँ १३००००००० भेड़ें हैं। दुनियाँ की एक तिहाई ऊन आस्ट्रेलिया से ही आती है।

–नवीन राष्ट्रीय एटलस तथा सचित्र विश्वकोश भाग १० के आधार से–

८. वर्तमान विश्व के देश, उनकी जनसंख्या एवं राजधानियाँ–

१. (एशिया—**जनसंख्या** १,६६,६१,६५,७८६)

देश	जनसंख्या	राजधानी
१. अफगानिस्तान	१,६०,००,०००	काबुल
२. बहराइन	२,०२,०००	बहराइन
३. ब्रुनेई	१,५०,०००	ब्रुनेई
४. बर्मा	२,६३,६०,०००	रंगून
५. कम्बोडिया	६६,६०,०००	नोमपेन्ह
६. श्रीलंका	१,२५,००,०००	कोलम्बो
७. चीन (जनवादी)	७४,००,००,०००	पेकिंग
८. चीन (गणतन्त्र ताइवान)	१,४४,७६,४७८	ताईपेई
९. हाँगकोंग	४०,३९,७००	हाँगकोंग
१०. भारत	५३,७०,००,०००	नई दिल्ली
११. इंडोनेशिया	११,३०,००,०००	जकार्ता
१२. ईरान	२,६६,६५,०००	तेहरान

१३. ईराक	८६,३६,०००	बग़दाद
१४. इजरायल	२९,७५,७३५	जेरूशलम
१५. जापान	१०,२०,००,०००	टोकियो
१६. जॉर्डन	२१,४०,०००	अम्मान
१७. कोरिया (उत्तरी)	१,३२,५०,०००	प्योंगयांग
१८. कोरिया (दक्षिणी)	३,१८,००,०००	सियोल
१९. कुवेत	५,४१,०००	कुवेत
२०. लाओस	३०,००,०००	वियेनतियान
२१. लेबनान	२७,३४,४४५	बैरुत
२२. मकाऊ	२,६९,०००	मकाऊ
२३. मलयेशिया	१०,३,९०,०००	कुआलालम्पुर
२४. मालदीव	१,१०,७७०	माले
२५. मंगोलिया	१,१,७५,०००	ऊलानबातर
२६. मस्कट एवं अमन		ओमन
२७. नेपाल	१,१,०४४,०००	काठमाँडू
२८. पाकिस्तान	११,२०,००,०००	रावलपिंडी[1]
२९. फिलिपिन्स	३,७०,००,०००	मनीला
३०. क्वेटर	८१,०००	डोहा
३१. र्यूक्यू द्वीपसमूह	९,६८,०००	ओकिनावा
३२. सऊदी अरब	७२,००,०००	रियाध
३३. सिंगापुर	२१,७५,०००	सिंगापुर
३४. दक्षिण यमन(गणराज्य)	१३,००,०००	अदन
३५. सीरिया	६०,३६,०००	दमिश्क

[1] अभी इस्लामाबाद

३६. सबाह (मलयेशिया)	६,१६,०००	कोटाकिनबालू
३७. सारावाक(मलेशिया)	८,४५,०६१	कूचिंग
३८. थाइलैंड	३३,७००,०००	बैंकाक
३९. तिमोर(पुर्तगाली टापू)	५,६०,०००	डिलि
४०. आबूधावी (ब्रिटिश उपनिवेश)	८,०००	आबूधावी
४१. सारजाह (ब्रि. उ.)		सरजा
४२. दुबाई टापू (ब्रि. उ.)		दुबाई
४३. टर्की	३,३५,४५,०००	अंकारा
४४. वियतनाम उत्तरी	२,१०,००,०००	हनोई
४५. वियतनाम (दक्षिणी)	१,७४,१०,०००	सेगौन
४६. यमन	६०,००,०००	साना

२. **(अफ्रीका—जनसंख्या ३४९९७१९९९)**

१. अफार्स एन्ड इसास (फ्रेंच)	१,५०,०००	जिबूटी
२. अलजीरिया	१,२६.४८.०००	अल्जीयर्स
३. अंगोला	५३,६२,०००	लुआन्डा
४. एसेंसियनद्वीप (ब्रिटिश)	१,६७२	एसेंसियन
५. बोट्स्स्वाना	६,२०,०००	गैबरुन
६. बुरुण्डी	३४,७५,०००	बुजुम्बरा
७. कैमेरून	५५,७०,०००	याउण्डा
८. केनेरीद्वीप समूह	१२,५०,०००	टेनेरिफ
९. केपवर्ड द्वीपसमूह	२,५४.४१४	प्राईआ
१०. मध्यअफ्रीकन गणराज्य	१५,००,०००	बागुई

११.	चाड	४०,०२,०००	फोर्टलामी
१२.	कोमरो द्वीप समूह	२,६१,३८२	कोमोर्स
१३.	कांगो जनवादी गणतंत्र	१,६८,००,०००	किनशाशा
१४.	कांगो गणराज्य	८,८०,०००	ब्राजाविले
१५.	संयुक्त अरब गणराज्य	३,२०,००,०००	काहिरा
१६.	गिनी गणराज्य	२,८२,०००	फर्नान्डोपो
१७.	इथियोपिया	२,३५,००,०००	आदिस अबाबा
१८.	गैबन	४,८०,०००	लिब्रेविले
१९.	गौम्बिया	३,५१,०००	बार्थर्स्ट
२०.	घाना	८५,०२,०००	अकरा
२१.	गिनी पुर्तगीज	५,५०,०००	बिसाउ
२२.	गिनी	३८,००,०००	कोनाक्री
२३.	आइबरी कोस्ट	४१,२०,०००	आबिदजान
२४.	केन्या	१,१०,००,०००	नैरोबी
२५.	लिसोथो	६,१२,०००	मासेरू
२६.	लाइबेरिया	११,३२,५००	मौनरोविया
२७.	लिबिया	१८,०८,०००	त्रिपोली
२८.	मेडैरा	२,७०,०००	फूंचल
२९.	मेलेगासी मेडागास्कर	७०,००,०००	तेनानारिव
३०.	मलावी	४४,६८,०००	व्लान्ट्रीयर

३१. माली	४८,००,०००	बोमाको
३२. मौरीतानिया	१५,००,०००	नोवाकचोट
३३. मारीशश	८,२०,०००	मारीशश
३४. मोरक्को	१,५०,००,०००	रवात
३५. मोजाम्बिक	७२,७५,०००	लोरेंसमार्किस
३६. नाइजर	४०,००,०००	नियामी
३७. नाइजीरिया	६,२६,५०,०००	लागोस
३८. र्‍यूनियन	४,२५,०००	लारियूनियन
३९. रोडेशिया	५१.८८,४००	सालीसबरी
४०. रवाण्डा	३५,००,०००	किगाली
४१. सहारा	....	आइडन
४२. साओटॉम एप्रिंसिप	६८,५००	साओटॉम
४३. सेनेगाल	३६,७२,०००	डकार
४४. सिचेलीज	४६,५००	विक्टोरिया
४५. सियरोलियोन	२३,००,०००	फ्रीटाउन
४६. सोमाली	२७,४५,०००	मोगाडीशू
४७. दक्षिण अफ्रीका	१,९२,००,०००	जोहांसबर्ग
४८. सेंटहेलेना	४,८१५	सेंटहेलेना
४९. सूडान	१,४७,७५,०००	ओमडर्मन
५०. स्वाजीलेंड	४,००,०००	मबाबान
५१. तांजानिया	१,२६,००,०००	दारेस्सलाम
५२. टोगो	१६,५५,९१६	लोम
५२. ट्रिस्टन-डा-कुन्हा	....	ट्रिस्टन-डा-कुन्हा
५४. ट्यूनीशिया	४९,६०,०००	ट्यूनिश

५५.	यूगांडा	८१,४०,०००	कम्पाला
५६.	अपरवोल्टा	५१,५६,०००	ओगाडोगू
५७.	जाम्बिया	४०,६४,०००	लुसाका
५८.	डहोमी	२५,७२,०००	काटोनू

३. यूरोप–जनसंख्या ७०.२४,९६,६४५

१.	अलबानिया	२०,२०,०००	तिराना
२.	अण्डोरा	१७,२२०	अण्डोरा
३.	आस्ट्रिया	७३,९१,०००	वियेना
४.	अजोर्स (पुर्त० उप०)	३,५०,०००	अजोर्स
५.	बेल्जियम	९६,६१,०००	ब्रूसेल्स
६.	बलगारिया	८४,७९,२०६	सोफिया
७.	साइप्रस	६,३५,०००	निकोसिया
८.	चेकोस्लोवेकिया	१,४४,७४,७०५	प्राग
९.	डेन्मार्क	४९,०७,०००	कोपेनहैगन
१०.	फारोई द्वीपसमूह (डेनिश)	३८,५००	तोरशावन
११.	फिनलैण्ड	४६,९५,०००	हेलसिंकी
१२.	फ्रांस	५,०७,००,०००	पेरिस
१३.	जर्मनी (पश्चिमी)	६,१४,२६,०००	बोन
१४.	जर्मनी (पूर्वी)	१,७०,०५,०००	बर्लिन
१५.	जिब्राल्टर	२५,३००	जिब्राल्टर
१६.	ग्रेट ब्रिटेन	५,५५,२१,२००	लन्दन
१७.	ग्रीस (यूनान)	८९,००,०००	एथेंस
१८.	हालैंड	१,३०,३२,४४७	हिल्चरसम

१९.	हंगरी	१,०३,००,०००	बुडापेस्ट
२०.	आइसलैंड	२,०३,३९५	रेइकजावेक
२१.	आयरलैंड	२९,२२,०००	डब्लिन
२२.	इटली	५,४६,०१,९८३	रोम
२३.	लक्सम्बर्ग	३,३९,१००	लक्सम्बर्ग
२४.	माल्टा	३,२५,५१३	माल्टा
२५.	मोनाको	२३,१००	मोन्टेकारलो
२६.	नार्वे	३८,६६,४६८	ओस्लो
२७.	पोलैंड	३२,७२७,१००	वारसा
२८.	पुर्त्तगाल	९५,०५,०००	लिस्बन
२९.	रूमानिया	२,००,००,०००	बुखारेस्ट
३०.	सानमारिनो	....	सानमारिनो
३१.	स्पेन	३,३५,००,०००	मेड्रिड
३२.	स्वीडन	८०,५०,२०८	स्टाकहोम
३३.	स्विट्जरलैंड	६२,००,०००	बर्न
३४.	सोवियतरूस	२४,००,००,०००	मास्को
३५.	वाटिकन	१,०००	वाटिकन
३६.	यूगोस्लाविया	२,०५,७३,०००	बेलग्रेड

४. उत्तरी अमेरिका–जनसंख्या २२,४४,५६,१००

१	बरमूडा (ब्रिटिश)	५७,०००	हेमिल्टन
२	कनाडा	२,१३,७७,०००	ओटावा
३	ग्रीनलैंड	४०,६००	गुड्थाब
४	सैंटपियरेटमाइक्वेलन (फ्रेंच)	५५,०००	सैंटपिअर्स

५	संयुक्त राज्य अमेरिका	२०,२६,७६,०००	वाशिंगटन

५. दक्षिणी अमेरिका–जनसंख्या १८,२६,१७,२०८

१	अर्जेन्टाइना	२,३६,२०,०००	ब्यूनसआयर्स
२	बोलिविया	४४,४१,०००	लापाज
३	ब्राजील	६,१०,००,०००	रियोडिजनेरो
४	चिलो	६३,५२,०००	सौंटियागो
५	कोलंबिया	१,६८,२८,०००	बोगोटा
६	इक्वेडोर	५७,००,०००	क्विटो
७	फाकलैंड द्वीपसमूह	२,०६८	स्टानले
८.	गायना	७,१८,११०	जार्ज टाउन
९.	फ्रेंच गायना	४५,०००	कायेने
१०.	पैरागुए	२२,३५,५००	असुन्सियन
११.	पेरू	१,२७,७५,०००	लीमा
१२.	सुरीनाम	३,७५,५००	पैरामेरिबो
१३.	यूरग्वे	२८,२५,०००	मोंटिविडियो
१४.	वेनुजुएला	९७,००,०००	कैरेकस

६. मध्य अमेरिका एवं केरेबियन द्वीप जनसंख्या–८,९०,५१,४८९

१.	कोस्टारिका	१६,६५,०००	सानजोंस
२.	अलसलवाडोर	३२,६७,५००	सनसलवाडोर
३.	ग्वाटेमाले	४८,६५,०००	ग्वाटेमाला
४.	होंडुरास (ब्रिटिश)	१,२०,०००	बेलिज
५.	होंडुरास	२५,३६,०००	तेगूशिगलपा

६.	मेक्सिको	४,६०,०००००	मेक्सिको
७.	निकारागुआ	१८,४४,०००	मानागुआ
८.	पनामा	१३,७३,०००	पनामा
९.	बहामास	१,६८,०००	नसाऊ
१०.	बारबडोस	२,५३,०००	बारबडोस
११.	क्यूबा	८१,१०,०००	हवाना
१२.	डोमिनिकन (रिपब्लिको)	४०,११,५८९	सैंटोडोमिंगों
१३.	गुआडेलूप	३,३६,०००	अर्नोविले
१४.	हैटी	४६,७७,०००	केपहेटियन
१५.	जमैका	१९,१५,०००	किंग्सटन
१६.	लीवार्ड द्वीप समूह	१,७५,०००	अंटीगुआ
१७.	मार्टीनीक्यू	३,३५,०००	फोर्ट डिफ्रांस
१८.	नेदरलैंड्स एंटिल्स	२,१५,०००	बोनारी
१९.	प्यूरटोरिको	२७,००,०००	हाटोरे
२०.	ट्रिनिडाड एंड टोबेगो	१०,३१,०००	पोर्ट ऑफ स्पेन
२१.	टर्क एन्ड केकम द्वीप समूह	६,८००	ग्रेंडटर्क
२२.	वर्जिन द्वीपसमूह (ब्रिटिश)	६,६०००	टोरटोला
२३.	वर्जिन-द्वीपसमूह (अमेरिकन)	६१,०००	सैंट टामस
२४.	विंडवार्ड-द्वीपसमूह	३,७३,०००	ग्रेनेडा
२५.	एंगुइला	७,०००	एंगुइला

—वर्ल्ड रेडियो टी. वी. हैंडबुक १९७१ संस्करण

७. आस्ट्रेलिया एवं प्रशान्त-महासागरीय-देश

जनसंख्या—२,००,०१,६२८—

देश	जनसंख्या	राजधानी	
१. आस्ट्रेलिया	१,२५,५१,३००	केनबरा	
२. कुकद्वीपसमूह	२०,६५०	रारोटोंगा	
३. फिजी	५,०७,०००	सूवा	
४. गिलबर्ट एवं एलिस द्वीप समूह (अमेरिकन)	५५,२००	तारावा	
५. गुआम	१,२०,०००	गुआम	अमेरिका के अधीनस्थ
६. हवाई	८,४१,०००	होनोलूलू	अमेरिका के अधीनस्थ
७. माइक्रोनेशिया	९६,०००	[कई हैं]	
८. टोंगा	८१,५००	न्युकुओल्फा	
९. न्यू केलेडोनिया (फ्रेंच)	९५,०००	नोमिया	
१०. न्यू हेब्राइड्स	८०,५००	विला	
११. न्यूजीलैण्ड	२८,१०,००	वेलिंगटन	न्यूजीलैंड के अधीन
१२. नाऊरू	६,६०३	नाऊरू	न्यूजीलैंड के अधीन
१३. नीयूद्वीप	५,३५०	नीयूद्वीप	न्यूजीलैंड के अधीन
१४. नोरफो के द्वीप	१,५२५	किंगस्टन	न्यूजीलैंड के अधीन
१५. पापुआ एवं न्यू गिनीया (आस्ट्रेलिया)	२३,००,०००	कोनेडेबू	
१६. समोआ	२७,०००	पागोपागो	अमेरिका के अधीन
१७. समोआ (पश्चिमी)	१,४६,०००	आपिया	

१८. सोलोमन द्वीपसमूह (ब्रिटिश)
१,५२,००० होनियारा

१९. ताहिती (फ्रेंच) १,०५,००० पापीति

८. अंटार्कटिका--

इसमें कोई आबादी नहीं है। इसके निकटवर्ती नार्वे देश में स्थित नोर्डकिन अन्तरीप में छः महीने दिन-रात सूरज चमकता रहता है और ६ महीने सूरज दिन में भी दिखाई नहीं देता।

● उपरोक्त गणना के अनुसार वर्त्तमान विश्व में २०३ राष्ट्रों की स्थिति इस प्रकार है--

एशिया में ४६, अफ्रीका में ५८. यूरोप में ३६, उत्तरी, दक्षिणी एवं मध्य अमेरिका में ४४ एवं आस्ट्रेलिया में १९। (संभव है कि कई राष्ट्र गणना में नहीं भी आ सके हों।)

९. वर्तमान विश्व की लम्बी नदियाँ—

क्र०	नदी	लम्बाई (मीलों में)
१.	नील (मिश्र)	४०३७
२.	मिसीसिपी (उ० अमेरिका)	३९८३
३.	अमेजन (ब्राजील)	३६९०
४.	यांगटीसीक्यांग (चीन)	३२००
५.	ओब (सोवियत संघ)	३२००
६.	कांगो (कांगो)	३०००
७.	लीना (रूस)	३०००
८.	येनिसेई (सोवियत संघ-रूस)	२८००
९.	अमूर (सोवियत संघ चीन)	२८००

१०.	परानाला प्लाता (ब्राजील-अर्जेन्टीना)	२७२०
११.	वोलगा (रूस)	२४००
१२.	डैन्यूब (यूरोप)	१७२५
१३.	सिंध (पाकिस्तान)	१७००
१४.	ब्रह्मपुत्र (भारत)	१६८०
१५.	गंगा (भारत)	२५००

—सचित्र विश्वकोश भाग १ तथा हिन्दुस्तान २१-२-७१

१०. भूगोल के रिकार्ड—

१. सबसे बड़ा महाद्वीप	एशिया	(१,७४,६१,५८३ वर्गमील)
२. ,, ,, समुद्र	प्रशांत महासागर	(६,३८,०१,६६८ व. मी.)
३. ,, ,, द्वीप	ग्रीनलैंड	(८,४६,७४० व. मी.)
४. ,, ,, देश (आबादी में)	चीन	(७० करोड़)
५. ,, ,, ,, (क्षेत्रफल में)	रूस	(८६,०२,७०० व. मी.)
६. सबसे घनी आबादीवाला क्षेत्र	जावा	(८१७ व्यक्ति प्रति वर्गमील)
७. सबसे ऊँचा देश	तिब्बत	
८. सबसे बड़ा शहर (क्षेत्रफल में)	लन्दन	(७०० व. मी.)
९. सबसे बड़ा शहर (आबादी में)	न्यूयार्क	(१,१५,५०,६००)
१०. ,, ,, बन्दरगाह	राटरडम (हालैंड)	(१,१०,००० जहाजों का प्रतिवर्ष आवागमन)
११. सबसे बड़ी नदी	नील	(४,०३७ मील लम्बी)
१२. ,, ,, झील	सुपीरिअर (उ. अमेरिका)	
१३. सबसे बड़ा पार्क	सं. रा. अमेरिका	(१३,५०० व. मी. क्षेत्र फल)
१४. ,, ,, रेगिस्तान	सहारा	(२,००,००० व. मी. क्षे. फ.)
१५. सबसे ऊँचा पर्वत शिखर	माउण्ट एवरेस्ट	(२९,०२८ फीट)
१६. सबसे लम्बा रेलमार्ग	सं. रा. अमेरिका	(२,२४,८१६ मील)

१७. सबसे बड़ा रेलवे स्टेशन	न्यूयार्क	(४७ प्लेटफार्म)
१८. ,, ,, प्लेटफार्म	सोनपुर (बिहार)	
१९. सबसे बड़ी रेलवे सुरंग	सिम्पलन (एलप्स)	(१२॥ मील)
२०. सबसे बड़ा जहाज	क्वीन एलिजाबेथ	(८५ हजार टन)
२१. सबसे ऊँचा हवाई अड्डा	लद्दाख (भारत)	
२२. सबसे ऊँची सड़क	मनाली-लेह मार्ग (भारत)	
२३. सबसे ऊँची इमारत	एम्पायर स्टेट बिल्डिंग न्यूयार्क	(१४७२ फीट)[1]

1—इस भवन में १०२ मंजिलें हैं। इसका मुख्य भाग ८५ मंजिलों का है। उसके ऊपर १७ मंजिलों की पतली सी मीनार है। सन् १९५० में इस पर २२२ फुट ऊँची टेलीवीजन-प्रसारण-मीनार और बनाई गई। इसकी नींव सड़क की सतह से ५५ फुट नीचे एक मजबूत चट्टान पर रखी गई है। इस भवन के बनाने में केवल इस्पात ही ६०,००० टन से ज्यादा लगा था। पूरे भवन का वजन लगभग ३,६५,००० टन है। इसमें इतनी जगह है कि किसी भी समय इसमें ८०,००० लोग रह सकते हैं।

—सचित्र विश्वकोश भा. ४, पृष्ठ २२

२४. सबसे बड़ा पुस्तकालय	लेनिन स्टेट लाइब्रेरी (मास्को)[1]	
२५. सबसे बड़ी मीनार	पेरिस (फ्रांस)	
२६. ,, ,, दीवार	चीन की दीवार	(१,५०० मील लम्बी)
२७. सबसे बड़ा राजमहल	मैड्रिड	
२८. ,, ,, सिनेमाघर	न्यूयार्क	(६००० सीटें)
२९. ,, ,, अजायबघर	ब्रिटिश म्युजियम (लंदन)	
३०. ,, ,, भवन	वेटिकन सिटी (पोप का)	
३१. ,, ,, गुम्बज	बीजापुर का गोल गुम्बज (भारत)	
३२. सबसे बड़ी हीरों की खान	किम्बर्ले (द. अफ्रीका)	
३३. ,, ,, दूरबीन	माउन्ट विल्सन (अमेरिका)	

—सर्जना, सचित्र विश्वकोश, व्यापारिक आर्थिक भूगोल (सक्सेना-हुक्कू) तथा विज्ञान के नये आविष्कार के आधार से।

१—इसमें १६० भाषाओं की १ करोड़ १० लाख पुस्तकें हैं। इस लाइब्रेरी के तख्ते एक के बाद एक रखने से वे १३० माइल स्थान घेरते हैं।

११. संसार के बड़े शहर और उनकी आबादी

शहर	देश	आबादी
न्यूयार्क	यू. एस. ए.	१,१५,५०,६००
न्यूयार्क (शहर)		७६,६४,२०७
तोकियो	जापान	१,१३,५०,०००
तोकियो (शहर)		६०,१२,०००
व्यूनस आयर्स	अर्जेण्टीना	६०,७०,०००
व्यूनस आयर्स (शहर)		३५,४६,०००
पेरिस	फ्रांस	८१,६६,७४६
पेरिस (शहर)		२५,६०,७७१
लन्दन	ग्रेट ब्रिटेन	७७,६३,८००
मास्को	रूस	७०,६१,०००
मास्को (शहर)		६६,४२,०००
कलकत्ता	भारत	७०,५०,३६२
कलकत्ता (शहर)		३१,४१,१८०
शंघाई	चीन	६६,००,०००
लास एंजिल्स	यू. एस. ए.	६८,५६,६००
लास एंजिल्स (शहर)		२४,७६,०१५
लॉंगबीच		६८,५६,६००
लांगबीच (शहर)		३,४४,१६८
शिकागो	यू. एस. ए.	६८,१५,३००
शिकागो (शहर)		३५,५०,४०४
बम्बई	भारत	५६,६८,५४६
फिलडेल्फिया	यू. एस. ए.	४८,२८,५००

फिलडेल्फिया (शहर)		२०,३२,४००
काहिरा	सं. अरब गणराज्य	४२,२५,७००
रिओडेजेनरिओ	ब्राजील	४२,०७,३२२
पीकिंग	चीन	४०,१०,०००
लेनिनग्राद	रूस	३९,५०,०००
लेनिनग्राद (शहर)		३५,१३,०००
सियोल	कोरिया (द.)	३७,९४,९५९
दिल्ली	भारत	३६,२९,८४२
दिल्ली (शहर)		३२,७९,९५५
मेक्सिको	यू. एस. ए.	३४,८३,६४९
ओसाका	जापान	३०,७८,०००

जिन शहरों के नाम दो बार लिखे हैं, उन में प्रथम के साथ दी गई जब संख्या में वहाँ के अन्तर्गत आनेवाली ग्रामीण आबादी भी सम्मिलित है।

(साप्ताहिक हिन्दुस्तान, १० अक्तूबर, १९७१)

१२. वर्तमान विश्व के निरक्षर और अंधों को संख्या

१. **निरक्षर**--यद्यपि पिछले बीस वर्षों में ६० करोड़ व्यक्तियों को साक्षर बनाया गया है, तथापि यूनेस्को-रिपोर्ट के अनुसार दुनियां में आज निरक्षरों की संख्या ७८,३०,००,००० है। उक्त रिपोर्ट का यह भी कहना है कि सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद अगले ३० वर्षों में भी दुनिया में ६५,००,००,००० लोग निरक्षर ही बने रहेंगे।

निरक्षरता व्यापक रूप से, अफ्रीका, एशिया और लेटिन

अमरीका में डेरा जमाये है। ये वे ही महाद्वीप हैं, जो विदेशी-प्रभुत्व के अन्तर्गत थे।

—हिन्दुस्तान, ३ सितम्बर १६७१

२. **अन्धे**—आज के विश्व में अंधों की कुल संख्या १·५ करोड़ है, जबकि अकेले भारत में उनकी संख्या ४५ से ५० लाख के लगभग है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् के सर्वेक्षण के अनुसार मैसूरराज्य में अंधों की संख्या सबसे अधिक है। सर्वेक्षण से पता चला है कि भारत में अन्धेपन का मुख्य कारण रोहा, कोदवा, मोतियाविन्द, ग्लाकोमा, अलसर जैसी बीमारियों के अलावा पौष्टिक खाद्य की कमी भी है।

—हिन्दुस्तान ६ अक्टूबर १६७१

१३. विश्व के प्रलयकारी भूकम्प

१. एक अमरीकी सर्वेक्षण के अनुसार पिछली ४ शताब्दियों में कलकत्ता को, भूकम्प के कारण, सर्वाधिक विनाश सहना पड़ा है। कलकत्ता क्षेत्र में ११ अक्टूबर १६३७ में आये भूकम्प में ३,००,००० व्यक्ति मौत के शिकार हुये थे।

२. विश्व के इतिहास में सबसे भयानक भूकम्प २४ जनवरी १६५५ ई. को चीन के शांसी नामक स्थान में आया था, जिसमें ८,३०,००० व्यक्ति मरे थे। इस शताब्दी के आरम्भ में पुनः चीन एक भयंकर भूकम्प का शिकार हुआ। १६ दिसम्बर १६२० को कांसू प्रान्त में आये भूकम्प में १,८०,००० व्यक्ति मौत के शिकार हुए थे।

३. भारतीय द्वीप में इस शताब्दी का सबसे अधिक विनाशकारी भूकम्प क्वेटा में ३१ मई १९३५ को आया था। यह स्थान अब प. पाकिस्तान में हैं। इसमें ६०,००० व्यक्ति मारे गये थे।

४. अभी ३० मई सन् १९७० को पेरू मैं आया हुआ भूकम्प हाल के वर्षों में आये हुए भूकम्पों में सबसे अधिक विनाशकारी भूकम्प कहा जाता है। इसमें १ लाख व्यक्तियों के मरने का अनुमान है। —**नवभारत टाइम्स, ५ जून १९७०**

एशिया महाद्वीप में स्थित यह भारत एक विस्तृत देश है। सन् १९४७ में विभाजित होने के बाद भी यह संसार का सातवाँ सबसे बड़ा देश है। इसका क्षेत्रफल लगभग ३२,३६,१४१ वर्ग किलोमीटर है एवं इसकी स्थली-सीमा १५,१७० किलोमीटर से भी अधिक है।

इस देश के तीन नाम हैं—(१) भारत अथवा भारतवर्ष, (२) हिन्दुस्तान, (३) इण्डिया, । प्रसिद्ध राजा दुष्यन्त के पुत्र चक्रवर्ती सम्राट भरत के नाम पर ही इस देश का नाम 'भारत' पड़ा। ईरानियों ने इस देश को हिन्दुस्तान और ग्रीक लोंगों ने इसे इण्डिया कहकर पुकारा।

—आर्थिक व व्यापारिक भूगोल द्वारा (हुक्कू-सक्सेना) पृष्ठ २६।

२. भारत की आबादी

(क) भारत की आबादी पहली शताब्दी में दस करोड़, १५वीं शताब्दी में १५ करोड़, सन् १८७३ में (जब सर्वप्रथन जन-गणना हुई) २१ करोड़, सन् १९२१ में २५ करोड़, १९५१ में ३५ करोड़ ५० लाख एवं १९६१ मे ४३ करोड़ थी।

—जैनभारती अंक २३

(ख) भारत की जनसंख्या (१२ अप्रेल १९७० तक) ५४ करोड़, ६९ लाख ५५ हजार नौ सौ पैंतालीस हैं। पुरुष २८ करोड़ ३० लाख और स्त्रियां २६ करोड़ ३९ लाख से कुछ अधिक

हैं। विगत दस वर्षों में (१९६१ से १९७१ तक) १० करोड़ ७७ लाख के लगभग जनसंख्या बढ़ी है।

(ग) गत ७० वर्षों में आबादी की वृद्धि की दर

नीचे तालिका में १९०१ से लेकर प्रति दशाब्दि जनसंख्या वृद्धि की दर दी गई है :—

वर्ष	आबादी	प्र. श. वृद्धि की दशाब्दि	१९०१ के बाद से प्र. श. वृद्धि
१९०१	२३८३३७३१३ (संयुक्त भारत)	—	—
१९११	२५२००५४७० (संयुक्त भारत)	+५.७३	+५.७१
१९२१	२५१२३९४९२ (संयुक्त भारत)	−०.३०	+५.४१
१९३१	२७८८६७४३० (संयुक्त भारत)	+११.००	+१७.०१
१९४१	३१८५३९०६० (संयुक्त भारत)	+१४.२३	+३३.६६
१९५१	३६०९५०३६५ (बंटवारे के बाद)	+१३.३१	+५१.४५
१९६१	४३९०७२५८२	+२१.६४	+८४.२२
१९७१	५४६९५५९४५	+२४५७	+१२९.४९

(घ) भारत में प्रतिदिन ५० हजार से अधिक एवं प्रतिवर्ष लगभग २ करोड़ बच्चे जन्म लेते हैं और ८० लाख मनुष्य मरते हैं। अतः १ करोड़ २ लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष बढ़ते हैं।

—भारतीय अर्थशास्त्र खण्ड २, पृष्ठ ६३, सन् १९७०

३. भारत गणराज्य के अन्तरवर्ती राज्य—

(क) भारत गणराज्य के १६ राज्य हैं और १० केन्द्र प्रशासित प्रदेश हैं। उनके नाम, क्षेत्रफल, जनसंख्या, राजधानियाँ, आबादी का घनत्त्व और भाषाएँ इस प्रकार हैं—

क्र. सं.	राज्य	क्षेत्रफल (कि. मी. में)	जनसंख्या (१६७१ में)	राजधानी	आबादी का घनत्त्व (प्रति कि. मी.)	मुख्य भाषा
१.	मध्य प्रदेश	४,४३,४००	४,१४,४६,७२८	भोपाल	६३	हिन्दी
२.	राजस्थान	३,४२,३००	२,५७,२४,१४२	जयपुर	७५	विभिन्न प्रकार की राजस्थानी तथा हिन्दी
३.	महाराष्ट्र	३,०७,५००	५,०२,६५,०८१	बम्बई	१६३	मराठी
४.	उत्तर प्रदेश	२,६४,३६५	८,८२,६६,४५३	लखनऊ	३००	हिन्दी, उर्दू
५.	आन्ध्र प्रदेश	२,७५,२८१	४,३३,६४,६५१	हैदराबाद	१५७	तेलगू

६.	जम्मू कश्मीर	२,२२,८००	४६,१५,१७६	श्रीनगर		कश्मीरी, डोगरी उर्दू
७.	असम	२,०३,३६०	१,४८,५१,३१४	शिलांग	१४६	बंगला, असमिया
८.	मैसूर	१,६२,२०४	२,६२,२४,०४६	बंगलौर	१५२	कन्नड़
९.	गुजरात	१,८७,११०	२,६६,६०,६२६	अहमदाबाद	१३६	गुजराती
१०.	बिहार	१,७४,०००	५,६३,८७,२६६	पटना	३२४	हिन्दी
११.	उड़ीसा	१,५५,८००	२,१६,३४,८२७	भुवनेश्वर	१४१	उड़िया
१२.	तमिलनाडु	१,३०,३६०	४,११,०३,१२५	मद्रास	३१६	तमिल
१३.	पूर्वी पंजाब	५०,३२८	१,३४,७२,६७२	चंडीगढ़	२६८	पंजाबी, हिन्दी
१४.	हरियाणा	४३,८६६	६६,७१,१६५	चंडीगढ़	२२५	,, हिन्दी
१५.	प. बंगाल	८७,६००	४,४४,४०,०६५	कलकत्ता	५०७	बंगला
१६.	केरल	३८,६००	२,१२,८०,३६७	त्रिवेन्द्रम्	५४८	मलयालम
१७.	हिमाचल प्रदेश	२८,२००	३४,२४,३३२	शिमला		हिन्दी, पहाड़ी
१८.	नागालैण्ड	१६,४५०	५,१५,५६१	कोहिमा		बंगला, असमिया
१९.	मेघालय		६,८३,३३६	शिलांग		खसिया

केन्द्र-प्रशासित प्रदेश—

क्र. सं.	प्रदेश	क्षेत्रफल (कि. मी. में)	जनसंख्या (सन् ७१)	राजधानी	आबादी का घनत्व (प्रति कि. मी.)	मुख्यभाषा
१.	अंडमान व निकोबार द्वीप समूह	८,२३०	१,१५,०९०	पोर्ट ब्लेयर		
२.	लक्षद्वीप, मिनिकाय व अमीन द्वीप समूह	२८	३१,७९८	कोजिहकोड (केरल)	९९४	पुरानी मलयालम
३.	दिल्ली	१,४८४	४०,४४,३३८	नई दिल्ली	२,२५४	हिन्दी, उर्दू, पंजाबी

४.	मणिपुर	२२३४७	१०,६६,५५५	इम्फाल		बंगला असमिया
५.	त्रिपुरा	८,६२०	१५,५६,८२२	अगरतला	१४६	,, ,, ,,
६.	दादरा और नगरहवेली	४८६	७४,१६५	सिलवासा	१५१	
७.	गोआ दमन और दीव	३,६६३	८५७,१८०	पंजिम	२२५	मराठी, गुजराती
८.	पांडिचेरी	४७६	४,७१,३४७	पांडिचेरी	६८२	फ्रांसीसी, तमिल
६.	नेफा	८०,४८६	४,४४,७४४	शिलाँग		
१०.	चंडीगढ़		२,५६,६७६	चंडीगढ़		पंजाबी

भूटान और सिक्किम पश्चिमी बंगाल के उत्तर में दो स्वाधीन हिमालयवर्त्ती राज्य हैं। ये विशेष संधियों द्वारा भारत गणराज्य में सम्मिलित हैं। इनके क्षेत्रफलादि निम्न प्रकार हैं :—

१.	भूटान	१६,३०५	८,४०,०००	थिम्फू	तिब्बती से मिलती-जुलती
२.	सिक्किम	२,१८५	१,८४,६००	गंगटोक	सिक्किमी गोरखावाली

(विश्वकोश भाग १०, आर्थिक-व्यापारिक भूगोल तथा हिन्दुस्तान १४ अप्रेल, १९७१ के आधार से)

(ख` भारत की जनसंख्या का आयु विवरण
(१६६१ के आधार पर)

आयु समूह (वर्षों में)	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
४ वर्ष तक के मनुष्य	१५·०
५ से १४ वर्ष तक के मनुष्य	२६·०
१५ से २४ ,, ,, ,,	१६·७
२५ से ३४ ,, ,, ,,	१५·४
३५ से ४४ ,, ,, ,,	११·०
४५ से ५४ ,, ,, ,,	८·०
५५ से ६४ ,, ,, ,,	४·८
६५ से ७४ ,, ,, ,,	२·१
७५ से अधिक ,, ,,	१·०
	योग १००·०

(ग) भारत में वैवाहिक स्थिति–

(संख्या हजारों में)

आयु वर्ग (वर्षों में)	विवाहित महिलाएँ	विधवा महिलाएँ
१० वर्ष से १४ वर्ष तक	४,४२६	३०
१५ ,, १६ ,, ,,	१२,०२२	६१
२० ,, २४ ,, ,,	१७,५५२	२४८

—भारत का आर्थिक भूगोल तथा भारतीय अर्थशास्त्र द्वितीय खण्ड पृष्ठ ५८, ५६

(४) भारत के गाँव और शहर—

(क) सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार भारत में ५ लाख ६६ हजार ८७८ गाँव हैं, जिनमें ६२ प्रतिशत व्यक्ति निवास करते हैं।

शहरों की संख्या २६६ हैं और उनमें १८ प्रतिशत व्यक्ति रहते हैं। —**भारतीय अर्थशास्त्र, खण्ड २ पृष्ठ ५३,५४ सन् ७०**

(ख) भारत के ९ महानगर और उनकी आबादी (सन् ७१)

१. कलकत्ता-७०,४०,३४५
२. बम्बई-५९,३१,९८९
३. दिल्ली-३६,२९,८४२
४. मद्रास-२४,७०,२४८
५. हैदराबाद-१७,९८,९१०
६. अहमदाबाद-२,७,४६,१११
७. बंगलोर-१६४८२३२
८. कानपुर-१२,७३,०४२
८. पूना-११,२३,३९९

नोट—दस लाख से अधिक जनसंख्यावाले नगर महानगर कहलाते हैं।) —**हिन्दुस्तान-१४ अप्रेल ७१**

(५) भारत में बेघर और घरवाले—

सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार भारत में ५० लाख व्यक्ति बेघर है। उनमें से ९ प्रतिशत शहरों में रहते हैं। एक बम्बई में इनकी संख्या ७६ हजार है। देश में कुल घर १० करोड़ ७ लाख हैं। उनमें ८ करोड़ ३ लाख परिवार रहते हैं। एक परिवार एक रसोई का प्रयोग करता है तथा उसके औसत ५ व्यक्ति सदस्य हैं। ४ करोड़ परिवारों के पास एक कमरा है। ३६.४ प्रतिशत के पास-पास कमरे है। २३.३ प्रतिशत के पास ३ या अधिक कमरे हैं। ५६.९

प्रतिशत लोग कच्चे गारों के मकान में रहते है, ४४ प्र,श. के अपने घर है और ५२ प्र. श. किराये के मकानो में रहते हैं। —**हिन्दुस्तान २३ अप्रेल, १९६४**

(६) भारत में पशुधन—

सन् १९६१ की पशुगणना के अनुसार भारत मे गाय-बैल लगभग १७॥ करोड़, भैंसें ५ करोड़, बकरियाँ ६॥। करोड़, भेड़ें ४ करोड़, मुर्गियाँ ११·२० करोड़, ऊँट ६ लाख से अधिक और घोड़े १३॥ लाख हैं।

(७) भारत में दूध—

भारत में अन्य देशों की अपेक्षा यद्यपि अधिक गाय हैं, किन्तु यहाँ की औसत गाय प्रतिवर्प अन्य देशों की अपेक्षा बहुत कम दूध देती हैं। देखिए, नीचे की तालिका—

देश	प्रति गाय दूध (प्रति वर्ष)	देश	प्रति गाय दूध (प्रति वर्ष)
१. नीदरलैंड्स	८,००० पौंड	४. सं. रा. अमेरिका	५,४०० पौंड
२. आस्ट्रेलिया	७,००० ,,		
३. स्वीन	६,००० ,,	५. इभारत	४१३ पौंड

भारत में कुल उत्पादन का लगभग ४२ प्रतिशत भाग दूध गायों से प्राप्त होता है, ५४ प्र.श. दूध भैंसों से और २ प्र.श. दूध बकरियों से। ऊपर की तालिका से स्पष्ट है कि भारत में प्रति गाय औसतरूप से वर्ष में लगभग ४१३ पौंड दूध देती है। परन्तु भैंस औसतरूप से भारत में १,१०० पौंड वार्षिक दूध देती हैं।

यद्यपि दूध उत्पादन की मात्रा की दृष्टि से विश्व में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के बाद, भारत ही सबसे अधिक दूध उत्पादन करता है, परन्तु यहाँ की घनी आबादी को देखते हुए यह मात्रा बहुत कम है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग ७ करोड़ मन दूध होता है, जबकि 'अमेरिकन रिपोर्टर' के अनुसार संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में प्रतिवर्ष १.५ अरब मन से भी अधिक दूध होता है। इस कथन के अनुसार इतना दूध होता है कि ४८२५ कि.मी. लम्बी, १२ मीटर चौड़ी और १ मीटर गहरी नदी को दूध से सुगमता पूर्वक भरा जा सकता है।

ठीक स्वास्थ्य के लिए प्रति व्यक्ति को प्रतिदिन कम से कम १५-२० ओंस दूध की आवश्यकता है, किन्तु भारत में प्रति व्यक्ति को प्रतिदिन औसतन ५.५ औंस (२॥ छटांक) दूध मिलता है, जबकि अन्य देशों में कहीं उसकी सातगुनी और दसगुनी से भी अधिक उपलब्धि है। देखिए, नीचे की तालिका—

देश	उपलब्धि	देश	उपलब्धि
कनाडा	५६ औंस	डेनमार्क	४० औंस
न्यूजीलैंड	५५ ,,	सं. रा.	
आस्ट्रेलिया	५५ ,,	अमेरिका	३५ ,,
इंगलैंड	४० ,,	भारत	५५ ,,

—आर्थिक व व्यापारिक भूगोल (हुक्कू-सक्सेना) पृष्ठ १६४

(८) भारतीय इतिहास की प्रमुख तिथियाँ—

ईसा पूर्व—

१.	३५००१५००	सिंधु सभ्यता
२.	२५००	आर्यों का भारत में आगमन आरम्भ
३. क	१५००-२०००	ऋग्वेद की रचना
ख	१०००	महाभारत युद्ध
४.	५९९-५२७	वर्द्धमान महावीर का जन्म और निर्वाण
५.	६५६३-४८३	गौतम बुद्ध का जन्म और निर्वाण
६.	३२७-३२५	भारत पर सिकन्दर का आक्रमण
७.	३२२-२९८	चन्द्रगुप्त मौर्य का शासन
८.	२७३-२३२	अशोक का शासन

ईस्वी सन्—

९.	७८-१२३	कनिष्क का शासन[1]

---

१ सम्राट कनिष्क कुषाणवंशीय था। इस वंश के लोग आक्रमणकारी के रूप में चीन के उत्तर-पश्चिम से भारत आये और उन्होंने पेशावर को अपनी राजधानी बनाया। कनिष्क कश्मीर, मगध, बंगाल, काबुल, चीन आदि देशों को जीतकर सम्राट बना एवं बौद्धधर्म स्वीकार करके भारतीय कहलाने लगा। इसके राज्य में अश्वघोष (जिनसे इसने बौद्धधर्म स्वीकार किया था), वसुमित्र एवं नागार्जुन जैसे अनेक प्रसिद्ध बौद्ध-दार्शनिक और लेखक थे। बौद्ध बनने के बाद कनिष्क ने अनेक विहारों तथा स्तूपों का निर्माण करवाया। सुप्रसिद्ध चतुर्थ बौद्ध संगीत (सम्मेलन) की योजना भी इसी ने की। इस संगीति में बौद्धधर्म पर नये भाष्य लिखे गये और बौद्धधर्म को एक नया रूप दिया गया, जो 'महायान' कहलाया।

१०.	३२०-४७५	गुप्तवंश का शासन, भारतीय कला और साहित्य का स्वर्ण-युग
११.	३३५-३७५	समुद्रगुप्त का शासन
१२.	३७६-४१३	चंद्रगुप्त विक्रमादित्य का शासन
१३.	४०५-४११	फाहियान की भारत-यात्रा
१४.	६०६-६४७	हर्षवर्द्धन का शासन[1]
१५.	१०००-१०२६	भारत पर महमूद गजनवी के आक्रमण
१६.	११९२	पृथ्वीराज की पराजय और मृत्यु
१७.	१२०६	उत्तर भारत में मुस्लिम शासन आरम्भ
१८.	१२२१	भारत पर चंगेजखां का आक्रमण
१९.	१३९८	भारत पर तैमूरलंग का आक्रमण
२०.	१५५६-१६०५	अकबर का शासन
२१.	१५७६	हल्दीघाटी की लड़ाई
२२.	१५९७	महाराणा प्रताप की मृत्यु
२३.	१६००-१८५८	भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन
२४.	१६०५-१६२७	जहांगीर का शासन
२५.	१६१२	सूरत में अंग्रेजों की पहली कोठी की स्थापना
२६.	१६२८-१६५८	शाहजहाँ का शासन

---

१ हर्षवर्धन अन्तिम हिन्दू सम्राट था। इसकी राजधानी कन्नौज थी। सम्राट स्वयं कवि था और कवियों का सम्मान भी बहुत करताथा। बाणभट्ट (कादम्बरी के निर्माता) इसी के राज्य दरबार के रत्न थे।

२७.	१६५८-१७०७	औरंगजेब का शासन
२८.	१७३९	भारत पर नादिरशाह का आक्रमण[२]
२९.	१७८०	महाराजा रणजीतसिंह द्वारा सिक्ख राज्य की स्थापना
३०.	१८५८	ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन समाप्त और ब्रिटिश सरकार का सीधा शासन प्रारम्भ
३१.	१८७४	बंगाल में भयंकर अकाल
३२.	१८८५	बम्बई में इण्डियन नेशनल कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन
३३.	१९२०	लोकमान्यबाल गंगाधर तिलक की मृत्यु
३४.	१९२१	महात्मागांधी द्वारा असहयोग आन्दोलन आरम्भ
३५.	१९२७-२८	साइमन कमीशन का बहिष्कार, लाला लाजपतराय की मृत्यु

२ नादिरशाह का आक्रमण—निरंकुश क्रूर और अत्याचारी शासन के लिए प्रायः 'नादिरशाही' शब्द का प्रयोग होता है। नादिरशाह फारस का शासक था और १७३९ ई० में उसने दिल्ली पर आक्रमण करके वहाँ कत्लेआम करवाया था। दिल्ली से वह पन्द्रह करोड़ रुपये नकद तथा पचास करोड़ रुपये से भी अधिक के रत्न-आभूषण आदि लूटकर ले गया था जिनमें विश्व-विख्यात हीरा 'कोहेनूर' और शाहजहाँ का रत्न-जटित सिंहासन 'तख्ते-ताऊस' भी था।

—सचित्र-विश्वकोष ९, पृष्ठ ४६

३६.	१६२६	कांग्रेस द्वारा लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वराज्य की घोषणा
३७.	१६४२	"भारत छोड़ो" आंदोलन
३८.	१६४३	सुभाषचन्द्र बोस द्वारा सिंगापुर में आजाद हिन्द फौज की स्थापना
३६.	१६४७	भारत स्वाधीन हुआ तथा देश का विभाजन और पाकिस्तान की स्थापना काश्मीर पर पाकिस्तान का आक्रमण
४०.	१६४८	महात्मा गांधी की हत्या
४१.	१६५०	भारत नये संविधान के अनुसार गणराज्य बन गया। सरदार पटेल की मृत्यु
४२.	१६५२	भारत में पहला आम चुनाव
४३.	१६५४	भारत की फ्रांसीसी बस्तियों का भारत में बिलय
४४.	१६५६	भाषा के आधार पर भारतीय राज्यों का पुनर्गठन
४५.	१६६१	गोआ पर भारत का अधिकार
४६.	१६६२	भारत पर चीन का आक्रमण।
४७.	१६६४	प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु लालबहादुर शास्त्री प्रधानमन्त्री बने
४८.	१६६५	भारत-पाक युद्ध

४९.	१९६६	ताशकंद में प्रधान मंत्री लालबहादुर शास्त्रीकी मृत्यु।श्रीमती इन्दिरा गांधी प्रधान मंत्री बनीं

–सचित्र विश्वकोष भा. ६, पृ. ३०

(६) भारत में साक्षरता—

१. स्कूल जानेवाले बच्चों की संख्या २ करोड़ ३५ लाख से बढ़कर ६ करोड़ ८० लाख हो गई और १९७०-७१ तक वह (योजना के मसविदे के अनुसार) ९ करोड़ ७५ लाख हो जायगी। कालेज जानेवाले छात्रों की संख्या ३ लाख से बढ़कर १ लाख हो गई।

–हिन्दुस्तान २१ अगस्त, १९६६

वर्त्तमान भारत में ५४,६९,५५,९४५ मनुष्य निवास करते हैं। उनमें से १६,०५,३१,५७० व्यक्ति साक्षर और ३८,६४,२४,३७५ व्यक्ति निरक्षर हैं। पुरुष २९॥ प्रतिशत से कुछ कम शिक्षित हैं और ७०॥ से कुछ अधिक अशिक्षित हैं। स्त्रियाँ २४ प्र. श. पढ़ी हुई हैं और ७६ प्र. श. अपढ़ हैं। विगत दस वर्षों में यहाँ २२ प्र. श. साक्षरता बढ़ी है।

२. सम्पूर्ण भारत और विविध राज्यों में १९६१ और १९७१ में प्रतिशत साक्षरता के आँकड़े इस प्रकार हैं—

राज्य	सन् १९६१	सन् १९७१
भारत	२४·०३	२९·३५
चंडीगढ़	५१·६	६१·२४

केरल	४६·८५	६०·१६
दिल्ली	५२·७५	५६·६५
गोआ-दमन-दीव	३०·७५	४४·५३
अंडमान-निकोबार	३३·६३	४३·४८
लक्षद्वीप मिनिकाय अमीन द्वीप	२३·२७	४३·४४
पांडिचेरी	२७·४३	४३·३६
तमिलनाडु	३१·४१	३९·३९
महाराष्ट्र	२९·८२	३९·०६
गुजरात	३०·४५	३५·७
पंजाब	२६·७४	३३·३९
प. बंगाल	२९·२८	३३·०५
मणिपुर	३०·४२	३२·८०
मैसूर	२५·४०	३१·४७
हिमाचल प्रदेश	२१·२६	३१·३२
त्रिपुरा	२०·२४	३०·८७
असम	२९·२९	२८·७४
मेघालय	१८·४७	२८·४१
नागालैंड	१७·९१	२७·३३
हरियाणा	१९·९३	२६·६९
उड़ीसा	२१·६६	२६·१२
आन्ध्र	२१·१९	२४·५६
मध्य प्रदेश	१७·१३	२२·०३
उत्तर प्रदेश	१७·६५	२१·६४

बिहार	१८·४८	१६·६७
राजस्थान	१५·२१	१८·७६
जम्मू-कश्मीर	११·०३	१८·३०
दादरा और नगर हवेली	६·४८	१४·८६
नेफा	७·१३	६·३४

—हिन्दुस्तान, १४ अप्रेल, १६७१

(१०) **भारत की बड़ी चीजें**—

अधिक क्षेत्रफलवाला राज्य	मध्य प्रदेश
अधिक जनसंख्यावाला राज्य	उत्तर प्रदेश
अधिक घनत्व (जनसंख्या) वाला राज्य	दिल्ली
अधिक जनसंख्यावाला नगर	कलकत्ता
बड़ा बंदरगाह	बम्बई
बड़ी सड़क	ग्रांड ट्रंक रोड
अधिक शिक्षित	केरल
लम्बा पुल	सोन नदी
लम्बा प्लेटफार्म	सोनपुर (विश्व में)
बड़ी झील	बुलर झील (कश्मीर)
बड़ी खारी झील	साँभर (राजस्थान)
बड़ा डेल्टा	सुन्दरबन
बड़ा इस्पात का कारखाना	टाटा का कारखाना (जमशेदपुर)

सुन्दर भवन	ताजमहल
बड़ी मूर्ति	गोमतेश्वर की मूर्ति (मैसूर)
ऊँची मीनार	कुतुब मीनार (दिल्ली)
बड़ी गुम्बद	गोलगुम्बद (बीजापुर)
बड़ा पुस्तकालय	राष्ट्रीय पुस्तकालय (कलकत्ता)
बड़ा चिड़ियाघर	अलीपुर (कलकत्ता)
बड़ा अजायबघर	इंडियन म्यूजियम (कलकत्ता)
सबसे ऊँचा पर्वत शिखर	माउंट एवरेस्ट
लम्बा बाँध	हीराकुण्ड बाँध
सबसे अधिक वर्षा वाला क्षेत्र	चेरापूँजी (आसाम)

—आर्थिक व व्यापारिक भूगोल पृष्ठ ३३, द्वारा हुक्कू, सक्सेना

२३. भारत की कतिपय विशेष ज्ञातव्य बातें

१. (क) औसत आयु : ५२ वर्ष ।

(ख) प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक आयःचालू मूल्यों पर ५५२ रुपये और १६४८-४६ के मूल्यों पर ३२४·४ रुपये ।

(ग) खाद्यान्नों की उत्पत्ति : लगभग १०करोड़टन (१६६६-७०)

(घ) प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की खपत : १५·४ औसतप्रतिदिन (१६६६-७०)

(च) प्रति व्यक्ति के लिए उपलब्ध कैलोरी (Calories) २१४५ प्रतिदिन।

(छ) प्रति व्यक्ति वस्त्र की उपलब्धि १६ मीटर वार्षिक ।

(ज) प्रति सहस्र वार्षिक जन्मदर ४२ व प्रति सहस्र मृत्यु दर १७·२ ।

—भारतीय अर्थशास्त्र खण्ड २, पृष्ठ २६ और ४३

२. भारतवर्ष में लगभग ५२ लाख कुंए हैं, ७५ हजार तालाब हैं और नहरों की लम्बाई लगभग १ लाख ४६ हजार किलोमीटर है ।

३. भारतवर्ष में नदियों का पानी केवल ५६ प्रतिशत भाग सिंचाई आदि के उपयोग में आता है, शेष यों ही समुद्र में चला जाता है ।

४. भारत में केवल ३६ करोड़ ६० लाख एकड़ जमीन में खेती होती है जबकि अमेरिका में ४७ करोड़ ८० लाख और रूस में ५५ करोड़ ६० लाख एकड़ जमीन खेती के उपयोग में आती है।

५. भारत में (सन् ६६ से ६६ के आंकड़ों के अनुसार) प्रति वर्ष गेहूं लगभग ११५, ३ लाख टन, चावल ३ करोड़ ७६ लाख टन, मक्का ५० लाख टन, बाजरा ३८ लाख टन, चना ४५० पौंड प्रति एकड़, गन्ना ६८ लाख ८ हजार टन, कपास की ६७ लाख गांठें (३६२ पौंड की एक गांठ), जूट भी ८४ लाख ७ हजार गाँठें (४०० पौंड की गांठ), चाय ३७.५४ करोड़ किलोग्राम, कहवा ६८ हजार मीट्रिक टन, मूंगफली ५६.७ लाख टन, तम्बाकू ३॥ लाख टन, शक्कर (चीनी) ४३ लाख टन, रबर ६४.४५ हजार टन, लोहा १४८ लाख मीट्रिक टन, अभ्रक २५ हजार टन, सोना ३७४० किलोग्राम हीरा पाँच लाख कैरट, मैंगनीज (भूरे रंग की धातु) १६ लाख टन, कोयला ७१ करोड़ टन, पेट्रोलियम (चट्टान से निकला हुआ तेल) ३० लाख टन, इस्पात ४४.८८ लाख टन, सीमेंट ११० लाख टन और कागज ५.५ लाख टन पैदा हुए।

६. भारत में सूती कपड़े की ६०० मिलें हैं (अमरीका में १२०० हैं) उनमें ७२५ करोड़ के मूल्य का ६.०६ अरब गज कपड़ा प्रतिवर्ष बनता है, उसमें ६२ करोड़ का विदेश जाता है। उनके चार कारखाने हैं। रेशम के छोटे छोटे

अनेक कारखाने हैं और बड़े चार हैं। प्रतिवर्ष १८·७१ लाख किलोग्राम (१ करोड़ गज) नकली रेशम बनता है। १३ लाख टन जूट प्रतिवर्ष उत्पन्न होता है। ७·५ लाख टन जूट का सामान विदेश जाता है, उससे भारत को १५० करोड़ की आमदनी होती है।

६. भारत में रेल-इंजिन के दो कारखाने हैं—एक तो चितरंजन नगर में और दूसरा जमशेदपुर में। दोनों कारखानों में सन् १९६०-६१ तक एक हजार से भी अधिक इंजिन तैयार हो चुके थे।

आधुनिक इंजिन में लगभग ५३५० पुर्जे लगते हैं। उनमें ८० प्रतिशत पुर्जे तो चितरंजन नगर के कारखाने में ही बनते हैं और दस प्रतिशत बाहर से मँगवाये जाते हैं। एक इंजिन पर लगभग चार लाख रुपये लगते हैं।

८. सन् ६०-६१ में यहां (भारत में) चार लाख टेलीफोन बनते थे। एक टेलीफोन में ५३८ पुर्जे लगते हैं। उनमें तो १६ पुर्जे तो अन्य उत्पादकों से प्राप्त किये जाते हैं और तीन पुर्जे विदेशों से मँगवाये जाते हैं।

—व्यापारिक व आर्थिक भूगोल, सन् ६९ के आधार से

सूर्योदय और सूर्यास्त सारणी

भारत के विभिन्न प्रांतों में समय का अन्तर

महीना	दिनांक	दिल्ली		बम्बई		मद्रास		कलकत्ता	
		उदय	अस्त	उदय	अस्त	उदय	अस्त	उदय	अस्त
जनवरी	१	७·१४	१७·३५	७·१२	१८·१२	६·३१	१७·५३	६·१७	१७·०३
	१५	७·१६	१७·४५	७·१५	१८·२१	६·३५	१८·०१	६·१९	१७·१२
फरवरी	१	७·१०	१७·५९	७·१३	१८·३१	६·३६	१८·०९	६·१६	१७·२४
	१५	७·०१	१८·१०	७·०८	१८·३८	६·३२	१८·१४	६·०९	१७·३२
मार्च	१	६·४७	१८·२१	६·५८	१८·४४	६·२५	१८·१८	५·५८	१७·४०
	१५	६·३२	१८·२९	६·४८	१८·४८	६·१७	१८·१९	५·४६	१७·४६
अप्रेल	१	६·१२	१८·३९	६·३३	१८·५२	६·०६	१८·२१	५·३०	१७·५२
	१५	५·५६	१८·४७	६·२२	१८·५६	५·५७	१८·२२	५·१७	१७·५७
मई	१	५·४१	१८·५६	६·११	१९·०२	५·४९	१८·२४	५·०४	१८·०३
	१५	५·३१	१९·०४	६·०५	१९·०६	५·४४	१८·२७	४ ५७	१८·०९
जून	१	५·२४	१९·१४	६'०१	१९·१२	५·४२	१८·३२	४·५२	१८·१७
	१५	५·२३	१९·२०	६·०१	१९·१७	५·४३	१८·३६	४.५२	१८·२२

जुलाई	१	५·२७	१९·२३	६·०५	१९·२०	५·४६	१८·३९	४·५५	१८·२५
	१५	५·३३	१९·२१	६·१०	१९·१९	५·५०	१८·३९	५·०१	१८·२४
अगस्त	१	५·४३	१९·१२	६·१६	१९·१४	५·५५	१८·३६	५·०८	१८·१७
	१५	५·५०	१९·०१	६·२०	१९·०६	५·५७	१८·३०	५·१३	१८·०८
सितम्बर	१	५·५९	१८·४३	६·२४	१८·५३	५·५८	१८·२०	५·१९	१७·५४
	१५	६·०६	१८·२६	६·२६	१८·४१	५·५८	१८·१०	५·२३	१७·४०
अक्तूबर	१	६·१४	१८·०७	६·२९	१८·२७	५·५९	१७·५९	५·२८	१७·२४
	१५	६·२२	१७·५२	६·३३	१८·१६	५·५९	१७·५०	५·३३	१७·१२
नवम्बर	१	६·३३	१७·३६	६·३९	१८·०५	६·०३	१७·४२	५·४२	१६·५९
	१५	६·४४	१७·२७	६·४६	१८·००	६·०८	१७·३९	५·४९	१६·५३
दिसम्बर	१	६·५७	१७·२४	६·५६	१८·००	६·१६	१७·४०	६·००	१६·५१
	१५	७·०७	१७·२६	७·०४	१८·०४	६·२३	१७·४५	६·०९	१६·५४

टिप्पणी—(१) समय लौंद वर्ष के हैं तथा अन्य वर्षों में लगभग १ मिनट का अन्तर पड़ सकता है।

(२) क्षितिज पर सूर्य की ऊपरी कोर के दिखाई देने का समय भारतीय प्रामाणिक समयानुसार दिया गया है।

—भारत-भारती मान चित्रावली, १९७१

संसार के प्रमुख नगरों के समय और दूरियाँ

संख्या	नगरों के नाम	देशों के नाम	नगरों का वह समय जब दिल्ली में दोपहर के बारह बजे हों — घन्टा	मिनट	नगरों की दूरियां किलोमीटर में दिल्ली से
१	अक्करा	घाना	६	३०	८,४८०
२	अदन	अदन	९	३०	३,७६०
३	अथेंस	यूनान	८	३०	५,०१०
४	अदिस अबाबा	इथोपिया	९	३०	४,५६०
५	अंकारा	टर्की	८	३०	४,२१०
६	एम्सटरडम	नीदरलैंड्स	७	३०	६,३६०
७	ओटावा	कनाडा	१	३०	११,३४०
८	ओस्लो	नार्वे	७	३०	५,९९०
९	कराची	पाकिस्तान	११	३०	१,०९०
१०	काठमांडू	नेपाल	१२	००	७९०
११	काबुल	अफगानिस्तान	११	००	९९०
१२	काहिरा	सं. अरब गणराज्य (मिश्र)	८	३०	४,४२०

१३	कुआलालूमपुर	मलाया	१४	००	३,८३०
१४	केनबेरा	आस्ट्रेलिया	१६	३०	१०,३२०
१५	केपटाउन	दक्षिण अफ्रीका संघ	८	३०	६,२८०
१६	कोपेनहेगेन	डेनमार्क	७	३०	५,८५०
१७	कोलम्बो	श्रीलंका	१२	००	२,४३०
१८	खारतूम	सूडान	८	३०	४,७८०
१९	जकार्ता	हिन्देशिया	१४	००	५,०१०
२०	जेनेवा	स्विटजरलैंड	७	३०	६,३५०
२१	टोंकियो	जापान	१५	३०	५,८२०
२२	ढाका	पूर्व बंगाल	१२	३०	१,४३०
२३	तेहरान	ईरान	१०	००	२,५४०
२४	दमिश्क	सीरिया	८	३०	३,६२०
२५	दी हेग	नीदरलैंड्स	७	३०	६,४००
२६	न्यूयार्क	सं. रा. अमेरिका	१	३०	११,७४०
२७	प्राग	जैकोस्लोवाकिया	७	३०	५,७१०
२८	पेकिंग	चीन	१४	३०	३,७८०
२९	पेरिस	फ्रांस	७	३०	६,५६०

३०	बगदाद	इराक	६	३०	३,१५०
३१	बर्लिन	पूर्वी जर्मनी	७	३०	५,८००
३२	बुकारेस्ट	रोमानिया	८	३०	४,८००
३३	बुडापेस्ट	हंगरी	७	३०	५,३७०
३४	बैंकाक	थाइलैंड	१३	३०	२,६२०
३५	बेरुत	लेबनान	८	३०	३,६८०
३६	बेलग्रेड	यूगोस्लाविया	७	३०	५,२५०
३७	बोन	पश्चिमी जर्मनी	७	३०	६,२३०
३८	ब्रुसेल्स	बेल्जियम	७	३०	६,४१०
३९	ब्यूनस आयर्स	आरजंटाइना	३	३०	१५,७५०
४०	मनीला	फिलीपाइन	१४	३०	४,८००
४१	मास्को	सोवियत संघ	६	३०	४,३६०
४२	मेडरिड	स्पेन	७	३०	७,२७०
४३	रायोडिजेनीरो	ब्राजील	३	३०	१४,०४०
४४	इस्लामाबाद	पाकिस्तान	११	३०	६८०
४५	रियाध	सऊदी अरब	६	३०	३,०५०
४६	रोम	इटली	७	३०	५,६२०

४७	रंगून	ब्रह्मा	१३	००	२,३४०
४८	लिस्बन	पुर्तगाल	६	३०	७,७७०
४९	लंदन	ब्रिटेन	६	३०	६,७१०
५०	वारसा	पोलैंड	७	३०	५,२६०
५१	वाशिंगटन	सं. रा. अमेरिका	१	३०	१२,०४०
५२	वियना	आस्ट्रिया	७	३०	५,५७०
५३	वेलिंगटन	न्यूजीलैंड	१८	३०	१२,६२०
५४	सिओल	कोरिया	१५	००	४,७००
५५	सिंगापुर	मलेशिया संघ	१४	००	४,१४०
५६	सैगांव	दक्षिणी वियतनाम	१३	३०	३,६४०
५७	स्टॉकहोम	स्वीडन	७	३०	५,५७०
५८	हनोई	उत्तरी वियतनाम	१३	३०	५,०४०
५९	हेलसिंकी	फिनलैंड	८	३०	५.२२०
६०	हांगकांग	हांगकांग द्वीप	१४	३०	३,७६०

—भारत भारती मान चित्रावली, १९७१

परिशिष्ट

वक्तृत्वकला के बीज

भाग १ से ५ तक में

उद्धृत ग्रन्थों व व्यक्तियों की नामावली

१ ग्रन्थ सूची

अङ्गुत्तर निकाय
अंगिरास्मृति
अग्निपुराण
अथर्ववेद
अर्थशास्त्र
अध्यात्मसार
अध्यात्मोपनिषद्
अन्ययोगव्यवच्छेद द्वात्रिंशिका
अनुयोग द्वार
अपरोक्षानुभूति
अभिधम्मपिटक
अभिधानराजेन्द्र
अभिधानचिन्तामणि
अभिज्ञान शाकुन्तल
अमितिगति श्रावकाचार
अमृतध्वनि
अमर भारती (मासिक)
अवेस्ता
अत्रिस्मृति
अष्टांग हृदय-निदान
आगम और त्रिपिटक:एक अनुशीलन
आचाराङ्गसूत्र
आर्थिक व व्यापारिक भूगोल
आप्त-मीमांसा
आत्मानुशासन
आवश्यकनिर्युक्ति
आवश्यक मलयगिरि
आवश्यक सूत्र
आत्म-पुराण
आत्मविकास
आतुर प्रत्याख्यान
आपस्तम्बस्मृति
आवां अद्धी सुर्यश्त
औपपातिक सूत्र
इतिहास समुच्चय
ईशोपनिषद्
इस्लामधर्म
इष्टोपदेश
ईश्वरगीता
उत्तरराम चरित्र

उत्तराध्ययन सूत्र
उत्तराध्ययन वृहद्वृत्ति
उदान
उपदेश तरङ्गिणी
उपदेशप्रासाद
उपदेशमाला
उपदेशसुमनमाला
उपासक दशा
ऋग्वेद
ऋषिभासित
ऐतरेय ब्राह्मण
कठोपनिषद्
कथासरित्सागर
कल्याण (मासिक)
कवितावली
कात्यायन स्मृति
किशन बावनी
किरातार्जुनीय
कीर्तिकेयानुप्रेक्षा
कुमारपालचरित्र
कुमार सम्भव
कुरानशरीफ
कुरुक्षेत्र
कुवलयानन्द
कूटवेद
केनोपनिषद्
कौटिलीय अर्थशास्त्र
खुले आकाश में
गच्छाचार प्रकीर्णक
गरुड़ पुराण
गृहस्थधर्म
गीता
गीता भाष्य
गुर्जरभजनपुष्पावली
गुरुग्रन्थ साहिब
गोम्मटसार
गौतमस्मृति
गोरक्षा-शतक
घटचर्पटपंजरिका
चन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्र
चन्द-चरित्र
चरक संहिता
चरित्र रक्षा
चरकसूत्र
चाणक्यनीति
चाणक्यसूत्र
चित्राम की चोपी
चीनी सुभाषित
छान्दोग्य उपनिषद्
जपुजी साहिब

जागृति (मासिक)
जातक
जाबालश्रुति
जाह्नवी
जीतकल्प
जीवन-लक्ष्य
जीवन सौरभ
जीवाभिगम सूत्र
जैनभारती
जैनसिद्धान्त दीपिका
जैनसिद्धान्त बोलसंग्रह
टॉड राजस्थान इतिहास
टी. बी. हैण्डबुक
डिकेन्स
डेलीमिरर
तत्त्वामृत
तत्त्वार्थ-सूत्र
तन्दुलवैचारिकगाथा
तत्त्वानुशासन
ताओ-उपनिषद्
ताओ-तेह्-किंग
तात्त्विक त्रिशती
तिरुकुरल
तीन बात
तैत्तरीय उपनिषद्

दशाश्रुत-स्कन्ध
दशाश्रुत-स्कन्धवृत्ति
दक्षसंहिता
दर्शनपाहुड
दान-चन्द्रिका
दिगम्बर प्रतिक्रमण त्रयी
दीर्घनिकाय
दोहा-संदोह
द्वात्रिंशद् द्वात्रिंशिका
द्रव्य-संग्रह
धन-बावनी
ध्यानाष्टक
धम्मपद
धर्मबिन्दु
धर्मयुग
धर्मसंग्रह
धर्मरत्न प्रकरण
धर्मशास्त्र का इतिहास
धर्मों की फुलवारी
तैत्तिरीय ताण्ड्य महाब्राह्मण
तोरा
थेरगाथा
दशवैकालिक सूत्र
दर्शन-शुद्धि
धर्म-सूत्र

न्याय दीप
नन्दी सूत्र
नवी
नविश्ते
नवभारत टाइम्स (दैनिक)
नवनीत (मासिक)
नवीन राष्ट्र एटलस
नारद पुराण
नारद नीति
नारद परिब्राजकोपनिषद्
निर्णयसिन्धु
नियमसार
निरुक्त
निशीथ चूर्णि
निशीथ भाष्य
निरालम्बोपनिषद्
नीतिवाक्यामृत
नैषधीय चरित्र
पंचतंत्र
पंचास्तिकाय
पंजाबकेशरी
पद्मपुराण
पहेलवी टेक्सट्स्
पब्लियस साइरस
पद्मानन्द पंचविंशति
प्रवचन सार
प्रवचन सारोद्धार
प्रवचन डायरी
प्रश्नव्याकरण सूत्र
प्रशमरति
प्रज्ञापना सूत्र
पातंजल योगदर्शन
पारस्कर स्मृति
प्रास्ताविक श्लोकशतकम्
पुरानी बाइबिल
पुरुषार्थ सिद्धिच्युपाय
पुराण
पूर्व मीमांसा
बृहत्कल्प भाष्य
ब्रह्मग्रन्थावली
ब्रह्मानन्द गीता
बृहदारण्यकोपनिषद्
बृहस्पतिस्मृति
बाइबिल
बुखारी
वीरपश्त्
बुद्ध-चरित्र
बेंदीदाद
बौद्ध-साधक
बंगश्री

भक्तपरिज्ञा प्रकीर्णक
भक्ति-सूत्र
भगवती-सूत्र
भर्तृहरि नीतिशतक
,, वैराग्य शतक
,, शृंगार शतक
भविष्य-पुराण
भावप्रकाश
भाषा श्लोकसागर
भामिनीविलास
भाल्लवीय श्रुति
भूदान पत्रिका
भोजप्रबन्ध
मज्झिमनिकाय
मन्थन
महाभारत
महानिद्देस पालि
महानिशीथ भाष्य
महानिर्वाण तन्त्र
मनुस्मृति
मनोनुशासनम्
मत्स्यपुराण
महाप्रत्याख्यान
मरकुस
मिलाप
मुण्डकोपनिषद्
मुस्लिम
मेडम द स्नाल
मेगजीन डाइजेस्ट
मोहमुद्गर
यश्न्
यश्त्
यशस्तिलकचम्पू
यजुर्वेद
याज्ञवल्क्य स्मृति
यूहन्ना
योगवाशिष्ठ
योगदृष्टि समुच्चय
योगशास्त्र
योगविन्दु
रघुवंश
रश्मिमाला
राजप्रश्नीय सूत्र
रामचरित मानस
रामसतसई
रामायण
रीड मेगजीन
लूका
व्यवहार चूलिका
व्यवहार-भाष्य

व्यवहार-सूत्र
व्यासस्मृति
व्यास-संहिता
वृहत्पाराशर संहिता
वृहद् द्रव्यसंग्रह
वाल्मीकि रामायण
वशिष्ठ-स्मृति
विचित्रा (मासिक)
विवेकचूड़ामणि
विदुर नीति
विनयपिटक
विवेक विलास
विशेषावश्यक भाष्य
विशेषावश्यक चूर्णि
विश्वकोष
विज्ञान के नए आविष्कार
विसुद्धिमग्गो
विष्णुस्मृति
विश्वमित्र (दैनिक)
वीतराग स्तोत्र
वैद्यक ग्रंथ
वैद्यक-शास्त्र
वैद्य रसराजसमुच्चय
वैशेषिक दर्शन
वैदिक धर्म क्या कहता है ?
वैदिक-विचार विमर्शन
शतपथ ब्राह्मण
श्वेताश्वेतारोपनिषद्
शंकरप्रश्नोत्तरी
शंख स्मृति
शार्ङ्गधर
शान्त सुधारस
शान्तिगीता
श्राद्ध विधि
शास्त्रवार्तासमुच्चय
श्रावकप्रतिक्रमण
शिशुपालवध
शिवपुराण
शिव-संहिता
श्रीमद्भागवत
शील की नवबाड़
शुकबोध
शुक्ल युजर्वेद
षट्प्राभृत
स्कन्ध पुराण
स्थानांग सूत्र
सभा तंरग
सचित्र-विश्व कोष
सत्यार्थप्रकाश
समयसार

समवायांग सूत्र
सम्बोधसत्तरि
सप्तव्यसन सन्धान काव्य
सरिता
सर्जना
सवैया शतक
स्वप्न शास्त्र
स्वर-साधना
समाधिशतक
सन्मति तर्कप्रकरण
स्टडीज इन डिसीट
सरल मनोविज्ञान
संयुत्तनिकाय
सामायिक सूत्र
सामवेद
सावधानी रो समुद्र
सिद्धान्त कौमुदी
सिन्दूर प्रकरण
सुखमणि संहिता
सुत्तनिपात
सुभाषितावलि
सुभाषितरत्न खण्ड-मंजूषा
सुभाषित रत्नभाण्डागार
सुभाषित संचय
सुत्तपाहुड.
सुबोध पद्माकर
सुभाषित रत्न सन्दोह
सुश्रुत शरीर-स्थान
सूत्रकृतांग सूत्र
सूक्तरत्नावलि
सूक्तमुक्तावलि
सौर परिवार
हउश् मज्दा
हदीश शरीफ
हरिभद्रीयआवश्यक
हनुमान नाटक
हृदय प्रदीप
हृषिकेश
हितोपदेश
हिंगुलप्रकरण
हिन्दुस्तान (दैनिक व साप्ताहिक)
हिन्दसमाचार
क्षेमेन्द्र
त्रिषष्टि शलाकापुरुष चरित्र
ज्ञाता-सूत्र
ज्ञानार्णव
ज्ञान-सार
ज्ञानप्रकाश

□□

व्यक्ति-नामावली २

अफलातून
अबुमुर्ताज
अबीदाउद
अबूबकर केतानी
अल्फान्सीकर
अरविन्द घोष
अरस्तू
आचार्य उमाशंकर
आचार्य श्रीतुलसी
आचार्य रजनीश
आरकिंग
आरजू
आस्निऔमले
ओडोर पारकर
इपिक्टेट्स
इब्राहिम लिंकन
उमास्वाति
एच, मोर
एञ्जिलो
एनीविसेन्ट

एमर्सन
एडीसन
एविड
एलाव्हीलर
एलोसियस
कविराज हरनामदास
कबीर
कन्फ्युसियस
कण्डोर सेट
कांगफ्युत्सी
कार्लाइल
कार्लमार्क्स
कामवेल
क्विकक्
कालूगणी
कुन्दकुन्दाचार्य
कूपर
केटो
कैनेथवालसर
कैम्पिस

कैथराल
कोल्टन
खलील जिब्रान
ग्वाल कवि
गांधी
गिबन
गुरु गोरखनाथ
गुरु नानक
गेटे
ग्रेविल
ग्रेनविल
गोल्डस्मिथ
गोल्डो जी
गौतम बुद्ध
जगन्नाथ कवि
जयचन्द
जयशंकर प्रसाद
जयाचार्य
जवाहरलाल नेहरु
जार्ज चेपमैन

जान मिल्टन	डाड्रिज	नेपोलियन
जामी	डिकेन्स	प्लुटार्क
जॉनसन	डिजरायली	प्लेटो
जाविदान ए. खिरद	डी० जेरोल्ड	पटोरिया
जीनपाली	डी० एल० मूडी	पद्माकर
जुगल कवि	डेलकार्नेगी	परसराम
जुन्नेद	तिरमजी	पीटर वैरो
जुन्नून	तुलसीदास	पीपाकवि
जूर्वट	थामस केम्पी	पेस्क
जेंगविल	थामस फूलर	प्रेमचन्द
जे. फरीश	थेल्स	पेरोसेल्स
जे. नोफेन	थैंकरे	पोप
जे. पी. सी. बर्नार्ड	थोरो	फुलर
जे. पी. हालेण्ड	दादू	फ्रैंकलिन
जौक	दीपकवि	बर्टन
टप्पर	धनमुनि	बनारसीदास
टालस्टाय	धूमकेतु	बर्नार्डशा
टामस कैम्पिस	नकुलेश्वर	बलवर
टालमेज	नजिन	ब्रह्मदत्त कवि
टी. एल. वास्वानी	नलिन	ब्रह्मानन्द
ड. ल. जार्ज	नाथजी	बालजक
डाइट रॉट	निकोलस	बावरी साहिब
डॉ. हरदयालमाथुर	निपट निरंजन	बिल्हण कवि
डॉ. एलेग्जी केरेल	निर्मला हरवंशसिंह	बीचर
डॉ. ग्यास जे रोल्ड	नीत्से	बुल्लेशाह

बूलकोट	रज्जबदास	लोकमान्य तिलक
बेकन	रडयार्ड किपलिंग	क्लेर
बेताल कवि	रहीम	व्यावली
बैल	रविया	वृन्द कवि
बो. बो.	रवि दिवाकर	वायरन
बोधा	रस्किन	वायर्स
भगवतीचरण वर्मा	रवीन्द्रनाथ टैगोर	वारटल
भिक्षु गणी	रामकृष्ण परमहंस	वाल्टेयर
भूधर दास	रामचरण कवि	वाशिंगटन इर्विन
महात्मा भगवानदीन	रामतीर्थ	विजयधर्मसूरि
मदन द० रियू	रामरतन शर्मा	विनोबा भावे
महर्षि रमण	रिस्टर	विलकाक्स
मार्कटेन	रिशर	विलियमपिट
माण्टेन	रुसो	विलियमपेन
माघकवि	रोम्यांरोला	विवेकानन्द
मिल्टन	रोशे	शंकराचार्य
मेरीकोन ए-डी	रीशफूको	शापेनहावर
मुहम्मद-बिन-वशीर	लाफान्टेन	शिलर
मेरी ब्राउन	लावेल	शिवानन्द
मेसेंजर	लांगफेलो	शुभचन्द्राचार्य
मैकिन्तोस	लीटन	शेक्सपियर
मैथिलीशरण गुप्त	लीनलिज	शेखसादी
मोलियर	लुकमान हकीम	स्टैनिलस
यशोविजय जी	लूथर	स्टील
यूसूफ अस्वात	लेलिन	स्पेंसर

सत्यदेवनारायण सिन्हा	सुन्दरदास	ह्यूम
सन्त आगस्तीन	सूरत कवि	हाफिज
संत ज्ञानेश्वर	सूरदास	हावेल
संत तुकाराम	सेलहास्ट	हालीवर्टन
सन्त निहालसिंह	सैनेका	हार्टले
सद्गुरुचरण अवस्थी	सेमुअल जानसन	हे एन. भांग
समर्थगुरु रामदास	सोमदेव सूरि	हेनरी वार्ड वीचर
सायरस	हजरत अली	हैजलिट
सिगुरिनी	हजरत मुहम्मद	हैली वर्टन
स्विट	हरिभद्र सूरि	होमर
सिसरो	हलवर्ट	होरेश बाल पोल
सुकरात	हयहया	त्रायण्ट

□ □

लेखक की महत्वपूर्ण रचनाएं

प्रकाशित

१. एक आदर्श आत्मा	०-४०	**हरकचन्द इन्द्रचन्द नौलखा** माधोगंज, लश्कर ग्वालियर (म० प्र०)
२. चमकते चांद	०-४०	**रतीराम रामस्वरूप जैन** पो० कैथलमण्डी (हरियाणा)
३. चरित्र-प्रकाश	२-५०	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** बालोतरा (राजस्थान)
४. भजनों की भेंट	०-६०	,, ,,
५. लोक प्रकाश	१-२५	,, ,,
६. चौदह नियम	०-२०	**आदर्श साहित्य संघ** पो० चूरु (राजस्थान)
७. मोक्ष प्रकाश		,, ,,
८. जैन-जीवन	०-६५	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** टोहाना (हरियाणा)

९. प्रश्न प्रकाश	०-८०	**श्री जैन श्वे० तेरापन्थी महासभा** ३, पोर्चगीज चर्च स्ट्रीट, कलकत्ता-१
१०. मनोनिग्रह के दो मार्ग	१-२५	**मदनचन्द सम्पतराय बोरड़** दुकान नं० ४०, धानमण्डी, श्रीगंगानगर (राजस्थान)
११. सच्चा धन	०-३०	**श्री दलोपचन्द** **द्वारा : ला० दयाराम बृजलाल जैन**
१२. सोलह सतियां (द्वि. सं.)	२-००	टोहाना मण्डी (हरियाणा)
सोलह सतियां (तृ. सं.)		**श्री चांदमल मानिकचन्द चौरड़िया** पो० छापर, (चूरू, राजस्थान)
१३. ज्ञान के गीत (चौथा संस्करण)	१-००	**लाला दयाराम मंगतराम जैन** टोहानामण्डी (हरियाणा)
१४. ज्ञान-प्रकाश	१-००	**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** पो० भीनासर (राजस्थान)
१५. जीवन प्रकाश (उर्दू)		**श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी सभा** नाभा (पंजाब)
१६. सच्चा धन (उर्दू)	०-३०	,, ,,
१७. तेरापन्थ एटले शुं ?	०-६२	**नेमीचन्द नगीनचन्द जवेरी** 'चन्द्र महल' १३०, शेखमैंमन स्ट्रीट, बम्बई-२
१८. धर्म एटले शुं ?	०-७५	
१९. परीक्षक बनो !	०-७५	

२०. वक्तृत्वकला के बीज	**समन्वय प्रकाशन**
(भाग १ से १० तक)	**द्वारा : मोतीलाल पारख**
प्रत्येक भाग ५-५०	पो० बाक्स नं० ४२,
प्रकाशित ५ भाग	अहमदाबाद-२२
प्रेस में ५ भाग	एवं
	संजय साहित्य संगम
	दासबिल्डिंग नं० ५,
	बिलोचपुरा, आगरा-२

लेखक की अप्रकाशित रचनाएं

हिन्दी :

अवधान-विधि

उपदेश-द्विपञ्चाशिका

उपदेश सुमनमाला

जैनमहाभारत :

जैन रामायण

दौहा-संदोह

व्याख्यान मणिमाला

व्याख्यान रत्नमञ्जूषा

वैदिक विचार विमर्शन (बड़ा)

संक्षिप्त वैदिक विचार विमर्शन

संस्कृत बोलने का सरल तरीका

संस्कृत :

ऐक्यम्

एकाह्निक कालूशतकम्

देवगुरु धर्म द्वात्रिंशिका

प्रास्ताविकश्लोक शतकम्

भाविनी

श्रीकालू कल्याणमन्दिरम्

श्रीभिक्षु शब्दानुशासन वृत्तिद्धि-तप्रकरणम्

गुजराती :

गुर्जर व्याख्यान रत्नावलि

गुर्जर भजन पुष्पावलि

राजस्थानी :

औपदेशिक ढालें

कथा प्रबन्ध

ग्यारह छोटे व्याख्यान

छः बड़े व्याख्यान

धन बावनी

प्रास्ताविक ढालें

सवैया-शतक

सावधानी रो समुद्र

पंजाबी :

पंजाब पच्चीसी

□□

वक्तृत्व कला के बीज

कृति और कृतिकार

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ युग-प्रधान आचार्य श्री तुलसी के नेतृत्व में आज प्रगति-शिखर पर पहुँच रहा है। मुनि श्री धनराज जी 'प्रथम' (श्री धनमुनि) इस धर्म-संघ के बहुश्रुत विद्वान, सरसकवि, लेखक कुशल संग्रहकार, मधुर-प्रवक्ता और सु-योग्य शिक्षक संत हैं। आप संघ के सर्व-प्रथम शतावधानी हैं। वि०सं० २००४ माघ कृष्णा १४ रविवार को बम्बई में सर्व-प्रथम आपने शतावधान का प्रयोग कर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया। संस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी तथा उर्दू आदि भाषाओं में आपने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया है।

प्रस्तुत कृति वक्तृत्वकला के बीज आपकी एक श्रमसाध्य अद्वितीय कृति है। वक्तृत्व एवं लेखन के योग्य इतना उपयोगी ... किसी भी भा... आ... होगा ... श (Encyc...

इस मह... श्री धन...

जन्म-वि... ...णा)

दीक्षा-वि.सं ... (राज०)

कृतियां - लगभग ६०

वि०सं० २००४ माघ ... रविवार को बम्बई में सर्व-
...पने शतावधान का प्रयोग कर
...को आश्चर्यचकित कर दिया।
हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती,
...था उर्दू आदि भाषाओं में आपने
...थों का प्रणयन किया है।
...त कृति वक्तृत्वकला के बीज
...श्रमसाध्य अद्वितीय कृति
...वं लेखन के योग्य इतना

आवरण पृष्ठ के मुद्रक : मोहन मुद्रणालय, आगरा-२